भाकृअनुप
ICAR

ईक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 13 अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2024

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भाकृअनुप की क्षेत्रीय समिति चतुर्थ की 27वीं बैठक : 14 नवम्बर, 2024

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
वर्ष 13 : अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2024

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक
आर. विश्वनाथन

सम्पादक मण्डल
मनोज कुमार त्रिपाठी
संगीता श्रीवास्तव
आशुतोष कुमार मल्ल
राकेश कुमार सिंह
अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन
योगेश मोहन सिंह
अवधेश कुमार यादव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :

संपादक, इक्षु एवं

प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002

ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2023 : संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. आर. विश्वनाथन	अध्यक्ष
डॉ. दिनेश सिंह	सदस्य
डॉ. वी.पी. सिंह	सदस्य
डॉ. मनोज कुमार श्रीवास्तव	सदस्य
डॉ. संजीव कुमार	सदस्य
डॉ. दिनेश सिंह	सदस्य
डॉ. ए.के. सिंह	सदस्य
डॉ. के.के. सिंह	सदस्य
डॉ. ए.पी. द्विवेदी	सदस्य
मुख्य प्रशासनिक अधिकारी	सदस्य
डॉ. अनीता सावनानी	सदस्य
श्रीमती रश्मि संजय श्रीवास्तव	सदस्य
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. मनोज कुमार त्रिपाठी	सदस्य सचिव

प्रकाशक

निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002

फोन : 0522–2961318 फैक्स : 0522–2480738

ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in

वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : आर्मी प्रिंटिंग प्रेस, 33, नेहरू रोड, सदर कैण्ट, लखनऊ–226002, फोन : 0522–2481164

डॉ. रासप्पा विश्वनाथन
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002
ISO 9001 : 2015

निदेशक की लेखनी से...

सहकारी शुगर फैक्ट्रियों की महासंघ के एक अनुमान के अनुसार भारत में 2024–25 के गन्ना पेराई सत्र में 259 लाख मीट्रिक टन चीनी उत्पादन का अनुमान है। जबकि पिछले पेराई सत्र में चीनी उत्पादन 319 लाख टन हुआ था। 15 मार्च 2025 तक, कुल 2545.17 लाख टन गन्ना पेरा जा चुका है जिससे 237.15 लाख टन चीनी का उत्पादन हुआ। इस समय प्राप्त औसत चीनी परता दर 9.32% है, जबकि गत सत्र की इसी अवधि में यह 9.95% थी। राज्यवार उत्पादन के मामले में, महाराष्ट्र की मिलों ने 831.75 लाख टन गन्ने की पेराई करके 78.60 लाख टन चीनी, उत्तर प्रदेश में, चीनी मिलों ने 843.23 लाख टन गन्ने की पेराई करके 80.95 लाख टन चीनी तथा कर्नाटक में, 460.00 लाख टन गन्ने की पेराई के बाद 39.10 लाख टन चीनी का उत्पादन किया है। इस प्रकार राष्ट्रीय चीनी उत्पादन में कमी का प्रमुख कारण देश के महाराष्ट्र, कर्नाटक और उत्तर प्रदेश जैसे तीन प्रमुख गन्ना उत्पादन राज्यों में चीनी उत्पादन में कमी आना है।

चीनी उत्पादन में थोड़ा कमी आने के बावजूद, इथेनॉल का रिकॉर्ड उत्पादन कर भारत 20 प्रतिशत इथेनॉल मिश्रण के अपने लक्ष्य के करीब पहुँच गया है। वर्तमान इथेनॉल आपूर्ति वर्ष 2024–25 में, पेट्रोल में इथेनॉल मिश्रण फरवरी 2025 में 19.7 प्रतिशत तक पहुँच गया, जबकि नवंबर 2024 से फरवरी 2025 तक संचयी औसत इथेनॉल मिश्रण 18 प्रतिशत रहा। सार्वजनिक क्षेत्र की तेल विपणन कंपनियों को फरवरी 2025 में ईबीपी कार्यक्रम के तहत 78.1 करोड़ लीटर इथेनॉल प्राप्त हुआ, जिससे नवंबर 2024 से फरवरी 2025 तक संचयी कुल 278.9 करोड़ लीटर हो गया। फरवरी 2025 में ईबीपी कार्यक्रम के तहत मिश्रित इथेनॉल की कुल मात्रा 79.5 करोड़ लीटर थी, जो नवंबर 2024 से फरवरी 2025 तक कुल 302.5 करोड़ लीटर हो गई। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय के अनुसार, ईबीपी कार्यक्रम के तहत, इथेनॉल आपूर्ति वर्ष (ईएसवाई) 2013–14 में 38 करोड़ लीटर से बढ़कर ईएसवाई 2023–24 में 707.4 करोड़ लीटर हो गई है, जिससे पेट्रोल में औसतन 14.6 प्रतिशत इथेनॉल का मिश्रण हासिल हुआ है।

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ वैश्विक स्तर पर एक कुशल, प्रतिस्पर्धी और जीवंत गन्ना कृषि के विजन, भारत की चीनी और ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए गन्ना उत्पादकता, लाभदेयता और स्थिरता में वृद्धि करने के मिशन, देश के उपोष्ण क्षेत्र के लिए गन्ना प्रजनन, उत्पादन और सुरक्षा पर बुनियादी, रणनीतिक और अनुकूली अनुसंधान, बेहतर क़िस्मों और प्रौद्योगिकियों को विकसित करने के लिए राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मुद्दों पर अनुप्रयुक्त अनुसंधान का समन्वय और निगरानी तथा प्रौद्योगिकियों का प्रसार और क्षमता निर्माण जैसे अधिदेश के साथ फरवरी 1952 से प्रयासरत है। इसके अतिरिक्त, संस्थान राजभाषा हिन्दी के माध्यम से गन्ना की नवीनतम विकसित क़िस्मों, उत्पादन एवं सुरक्षा प्रौद्योगिकियों के प्रचार तथा प्रसार द्वारा गन्ना किसानों की आय बढ़ाने हेतु दृढ़ संकल्पित है। संस्थान के साथ ही साथ, भाकृअनुप के विभिन्न शोध संस्थानों, केंद्रीय तथा राज्य कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में विकसित मुख्य अनुसंधान उपलब्धियों को वैज्ञानिकों, शोधार्थियों, तकनीकी अधिकारियों एवं अन्य विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत आलेखों के माध्यम से ज्ञानवर्धक एवं रुचिकर जानकारी पाठकों, कृषकों, उद्यमियों, युवाओं तथा छात्र–छात्राओं तक उनकी अपनी मातृभाषा व राजभाषा हिंदी में प्रभावी ढंग से पहुँचाने के लिए राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' का प्रकाशन इसी दिशा में उठाया गया एक साकार कदम है। इक्षु के प्रस्तुत अंक में गन्ने से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने हेतु विभिन्न विषयों पर लिखे गए लेखों के साथ, गेहूं व धान जैसी प्रमुख धान्य फसलें, मक्का जैसे मोटे अनाज, लोबिया जैसी दलहनी फसल, आलू व शिमला मिर्च जैसी सब्जियों, बेल जैसे फलदार वृक्ष, सतावर जैसी औषधीय फसलों की वैज्ञानिक खेती पर लिखे विशेष लेखों में समाहित लाभदायक तकनीकी जानकारी को अपनाकर कृषक भाई उपरोक्त फसलों से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त कर अपनी आय में भरपूर मुनाफा कमा सकते हैं। इसी के साथ बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों तथा कीटों से बचाव हेतु बीजोपचार, जैव उर्वरकों के प्रयोग का महत्व, पौधों की वृद्धि और विकास में माइक्रोबियल फाइटोहॉरमोन की भूमिका, हाइड्रोपोनिक खेती एवं कृषि क्षेत्र में ड्रोन के बढ़ते कदम जैसे अन्य उपयोगी तकनीकी विषयों पर विशेषज्ञों द्वारा लिखित लेख भी इक्षु के इस अंक में सम्मिलित किए गए हैं। इसके साथ ही, मानव स्वास्थ्य के लिए सुपरफूड्स के महत्व विषय पर लिखा लेख मनुष्यों को रोगमुक्त रखकर स्वस्थ बनाए रखने में विशेष उपयोगी सिद्ध होगा। मैं 'इक्षु' के इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों के रचनाकारों को साधुवाद देना चाहता हूँ जिन्होनें हिंदी की सरलतम भाषा–शैली का प्रयोग करते हुए अपने शोध क्षेत्रों से संबन्धित तकनीकी जानकारी पर आधारित लेख हमारी पत्रिका में प्रकाशनार्थ प्रस्तुत करके राजभाषा को और अधिक सूचनापरक, ज्ञानवर्धक, रुचिकर तथा उपयोगी बनाने के साथ ही साथ इस राजभाषा पत्रिका को राष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रिय करने में अपना यथासंभव योगदान दिया है।

स्थान : लखनऊ

(डॉ. रासप्पा विश्वनाथन)

डॉ. मनोज कुमार त्रिपाठी
प्रधान वैज्ञानिक एवं
प्रभारी, राजभाषा प्रभाग

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226 002
ISO 9001 : 2015

'इक्षु–सार'

वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारी को सामान्य जन–मानस के मध्य व्यापक रूप से प्रचारित व प्रसारित करने में हिंदी भाषा अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। भारत जैसे बहुभाषी देश के विभिन्न भागों में बहुसंख्यकों द्वारा बोली और समझी जाने वाली हिंदी, एक व्यापक भाषा होने के कारण, विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में ज्ञान को अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम है। हिन्दी व्यापक पहुँच, अनुवाद, शिक्षा, तकनीकी प्रगति और राष्ट्र की एकता के माध्यम से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के ज्ञान को सामान्य जन मानस तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध हो रही है। इसी पृष्ठभूमि में, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ की लोकप्रिय राजभाषा पत्रिका "इक्षु" के नवीनतम अंक 13(2) आप सभी सुधि पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष, प्रसन्नता तथा गौरव का अनुभव हो रहा है। 'इक्षु' के गत अंकों की भांति, इक्षु का यह अंक भी अपने इंद्रधनुषी रंगों के कलेवर से सरोबार है। गत अंकों की तरह, संपादक मण्डल ने इस बार भी इस बात कर हर संभव प्रयत्न किया है कि 'इक्षु' के इस अंक में भी पाठकों को कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में हुए नवीनतम शोध, राजभाषा तथा दैनिक जीवन के विभिन्न व्यावहारिक पहलुओं पर वैज्ञानिक तथा ज्ञानवर्धक सामग्री सुगमता से समझी जा सकने वाली भाषा–शैली में प्रस्तुत की जाए।

इक्षु के प्रस्तुत अंक को भी हमने अपने सुधि पाठकों की पसंद के अनुसार राजभाषा, ज्ञान–विज्ञान, आरोग्य एवं संजीवनी, आमोद–प्रमोद, शब्दकोश, समाचार प्रभाग जैसे विभिन्न प्रभागों के अंतर्गत वर्गीकृत करने का प्रयत्न किया है। राजभाषा प्रभाग में भाषा के वैचारिक आदान प्रदान तथा अन्तर्मन की अभिव्यक्ति के प्रभावी माध्यम होने के कारण 'प्रयोजनमूलक हिन्दी', 'राजभाषा : स्वरूप और अनुप्रयोग' एवं 'विश्व में हिन्दी का बढ़ता स्वरूप' जैसे लेखों को स्थान दिया गया है। गन्ना व चीनी क्षेत्र में दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ज्ञान–विज्ञान प्रभाग में गन्ना में एकीकृत जल प्रबंधन, गन्ने में ड्रिप सिंचाई विधि, गन्ना उत्पादन की उन्नतशील तकनीक, गन्ने में पाइनएपिल रोग का समेकित प्रबंधन तथा 'गन्ना उत्पादन एवं उपयोगिता जैसे विशेष लेख इस अंक के विशेष आकर्षण हैं। इसके अतिरिक्त, 'गेहूं उत्पादन में संतुलित उर्वरकों का योगदान', 'धान की फसल में कृषि यंत्र का महत्व' तथा 'मक्का तथा लोबिया की अंतर्सस्य से कमाएं अधिक लाभ' जैसे लेख देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में अपनी साकार भूमिका निभाएंगे। साथ ही, आलू, बेल, शिमला मिर्च तथा सतावर जैसी फसलों पर लिखे गए लेख देश के औद्यानिक विकास में सहायक होंगे। कृषि क्षेत्र के सर्वगीण विकास हेतु अन्य कई विशेष लेख भी इस अंक में समाहित किए गए हैं जिनको अपनाकर कृषक भाई अपनी आय में वृद्धि करके अपने रहन सहन के स्तर में सार्थक सुधार कर सकेंगे। आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग में प्रकाशित सुपरफूड्स तथा फूलगोभी के पत्तों के मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव दर्शाते खास लेख मनुष्यों को निरोगी बनाए रखने हेतु विशेष लाभकारी सिद्ध होंगे। आमोद प्रमोद प्रभाग में समाहित कविताएं पाठकों को स्वस्थ मनोरंजन प्रदान करेंगी। नराकास प्रभाग में 28 नवम्बर, 2024 को संस्थान में आयोजित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की अर्धवार्षिक बैठक का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है। वाक्यांश तथा अभिव्यक्तियों के अंतर्गत कार्यालयों में दिन–प्रतिदिन प्रयोग में आने वाले लघु वाक्य सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को कार्यालय में दिन–प्रतिदिन हिंदी का सुगमतापूर्वक प्रयोग करने में सहायक सिद्ध होंगें। संस्थान में आयोजित कुछ विशेष कार्यक्रमों एवं अवसरों के छायाचित्र व स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों की झलकियां भी पाठकों हेतु अवश्य ही सूचनापरक सिद्ध होंगी।

इक्षु पत्रिका की गुणवत्ता के स्तर में आशातीत सुधार लाने तथा इसे और भी ज्ञानवर्धक, रुचिकर एवं लाभकारी बनाने हेतु हम सदा की भांति अपने सुधि पाठकों से विनम्र निवेदन करते हैं कि वे अपने बहुमूल्य मार्गदर्शन, सुझावों एवं प्रतिक्रियाओं द्वारा हमें अवगत कराते रहें। मैं आप सभी प्रिय पाठकों तथा रचनाकारों को 'इक्षु' के आगामी अंकों में भी नवीनतम, सूचनापरक तथा उपयोगी जानकारी पर आलेख प्रस्तुत करने के लिए भी सादर आग्रह करता हूँ।

म०कु०त्रिपाठी

स्थान : लखनऊ

(मनोज कुमार त्रिपाठी)

इक्षुः राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष 13 : अंक 2
जुलाई–दिसम्बर, 2024

विषय वस्तु

राजभाषा प्रभाग

प्रयोजनमूलक हिंदी 1
सूर्य प्रसाद दीक्षित

राजभाषा : स्वरूप और अनुप्रयोग 8
राजेंद्र गौतम

विश्व में हिंदी का बढ़ता स्वरूप 11
अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश, मनोज कुमार त्रिपाठी एवं विनय कुमार सिंह

ज्ञान विज्ञान प्रभाग

गन्ना में एकीकृत जल प्रबंधन 15
चन्द्र गुप्ता

गन्ने में ड्रिप सिंचाई विधिः एक क्रांतिकारी तकनीक 22
संजय कुमार यादव, एस.के. शुक्ल, ए.पी. द्विवेदी, विश्वनाथ प्रताप यादव एवं दिनेश सिंह

उत्तर प्रदेश में गन्ने की उत्पादन तकनीकी 24
विश्वनाथ प्रताप यादव, पलाश कुमार कौरव, संजय कुमार यादव एवं आदित्य प्रकाश द्विवेदी

गन्ना उत्पादन की उन्नतशील कृषि तकनीक 26
हिमांशु पाण्डेय, बरसाती लाल, कामता प्रसाद, जय प्रकाश वर्मा, राहुल कुमार रॉय, मुस्तफा हुसैन एवं धीरज यादव

गन्ने में पाइनएपिल रोग का समेकित प्रबंधन 30
प्रकाश चंद्र त्रिपाठी, राहुल कुमार तिवारी एवं दिनेश सिंह

गन्ना और अन्य फसलों के लिए सूक्ष्म सिंचाईः भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन का समाधान 33
रवि कांत पांडेय एवं राजेश यू. मोदी

गन्ना उत्पादन एवं उपयोगिता 35
राहुल कुमार एवं राधा जैन

गेहूँ उत्पादन में संतुलित उर्वरक का योगदान 40
राज कुमार सरोज, राम रतन वर्मा, तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, पुष्पा सिंह, स्वाति सिंह, पूजा सरोज, उपेंद्र कुमार एवं पंकज पटेल

धान की फसल में कृषि यंत्रों का महत्व 45
राहुल कुमार यादव एवं दिलीप कुमार

मक्का तथा लोबिया की अंतर्सस्य से कमाएँ अधिक लाभ 49
हिमांशु सिंह, अजीत सिंह, मनीष कुमार सिंह, जयश्री सिंह एवं बृजेश कुमार मौर्या

बेल की किस्मों का प्रजननः वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की संभावनाएं 51
संजय कुमार सिंह, देवेन्द्र पाण्डेय, अंजू बाजपेयी, जय प्रकाश वर्मा, शिवपूजन एवं अजय कुमार त्रिवेदी

आलू में फसल प्रबन्धन 57
अजय कुमार यादव एवं आर.के. पाल

शिमला मिर्च की उन्नतशील खेती 59
निमित सिंह, विनायक प्रताप शाही, आशीष कुमार सिंह एवं अभिनव कुमार

सतावर की वैज्ञानिक खेती एवं लाभ 61
रितेश सिंह, अंकुर त्रिपाठी एवं स्मिता सिंह
भारत में आधुनिक कृषि तकनीकें 63
रीता, मानसी मिश्रा, अरुणिमा महतो, श्रेयांशु, चंद्रमणि राज, श्वेता सिंह एवं दिनेश सिंह
आधुनिक कृषि में कंप्यूटर की भूमिका 65
संगीता श्रीवास्तव, अनीता सावनानी एवं अभय श्रीवास्तव
जीवन में सृष्टि निर्माण एवं फसल उत्पादन हेतु जल प्रबंधन अत्यंत आवश्यकः एक समीक्षा 67
राम जी लाल, अभिषेक कुमार सिंह, अभिनव सिंह, शिवम त्रिपाठी एवं राजीव रंजन राय
बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों तथा कीटों से बचाव हेतु बीजोपचारः आवश्यकता एवं उपचार विधियाँ 71
मुकुन्द कुमार, सुधीर कुमार सिंह, सुरेन्द्र प्रताप प्रजापति, सुरेन्द्र प्रताप सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं वेद प्रकाश सिंह
मृदा उत्पादकता एवं फसल उत्पादन को बढ़ाने में जैव उर्वरक का योगदान 76
कौशलेंद्र मणि त्रिपाठी, शैलेंद्र कुमार मिश्र, अंकित कुमार मिश्र एवं ब्रजराज शरण तिवारी
माइक्रोबियल फाइटोहॉर्मोन और पौधों की वृद्धि और विकास में उनकी भूमिका 78
प्रियंका गिरी, स्मिता सिंह एवं सुरेन्द्र प्रताप सिंह
भूमि की बिगड़ती हुई दशा और जैविक खेती की तरफ किसानों के बढ़ते हुए कदम 84
प्रियान्शी पाठक एवं अनुभव सिंह
हाइड्रोपोनिक खेती 86
मोनिका उपाध्याय
नीम खलीः आवश्यक एवं उपयोगी खाद 88
आलोक कुमार सिंह, प्रीती सिंह एवं मुकुन्द कुमार
कृषि आधुनिकीकरण में युवाओं की सक्रिय भागीदारी और भारत सरकार की पहल 90
दुष्यन्त मिश्रा
भारतीय कृषि को आत्मनिर्भर बनाने में महिलाओं की भूमिका 92
मिथिलेश तिवारी, संजय कुमार गोस्वामी एवं दिनेश सिंह
कृषि क्षेत्र में ड्रोन के बढ़ते कदम 93
दीपक कोहली

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग
सुपरफूड्स का स्वास्थ्य पर प्रभाव 95
अनीता सावनानी, संगीता श्रीवास्तव एवं अभय श्रीवास्तव
फूलगोभी के पत्ते भी है फायदेमंद 98
अंजली यादव, धीरज यादव, अपूर्वा सिंह, कामता प्रसाद, बरसाती लाल एवं हिमांशु पाण्डेय

आमोद प्रमोद प्रभाग
आज के समाज का सच 100
आर.एस. चौरसिया
कैसे जाने अपने कौन ? 101
ब्रह्म प्रकाश
वाक्यांश और अभिव्यक्तियाँ 102
अभिषेक कुमार सिंह एवं ब्रह्म प्रकाश
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन 104

राजभाषा प्रभाग

प्रयोजनमूलक हिंदी

सूर्य प्रसाद दीक्षित
हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

हिंदी भाषा देश–विदेश में लगभग एक अरब व्यक्तियों के बीच व्याप्त है। जिस भाषा का इतना बड़ा जनाधार हो, उसमें बेरोजगारी का नामोनिशान तक नहीं होना चाहिए। भारत में विगत सात दशकों से लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित है। लोकतंत्र में जनता और सरकार के मध्य सीधा संवाद अपेक्षित होता है, किन्तु परंपरा से यहाँ अंग्रेजी भाषा राजकाज में छायी हुई है, इसलिए जनता की बात सीधे प्रशासन तक और प्रशासन के सन्देश जनसाधारण तक सीधे नहीं पहुँच पाते, जिससे सामूहिक चिन्तन नहीं हो पाता और भेद–बुद्धि अनास्था एवं उदासीनता बराबर बनी रहती है। हिंदी तृणमूल से जुड़ी भाषा है। उसकी अन्य क्षेत्रीय विभाषाएँ भी लोक जीवन से जुड़ी हुई हैं। इन भारतीय भाषाओं के माध्यम से ही सही राजकाज होगा। सभी राज्य जब अपनी–अपनी भाषाओं में जनसंपर्क, शिक्षण कार्य, विपणन आदि करेंगे और केंद्र सरकार हिंदी अंग्रेजी के माध्यम से देश–देशांतर से संपर्क करेगी तो हमारा तीव्रतर विकास होगा। इसके लिए राजभाषा की संवैधानिक व्यवस्था को समझाते हुए कार्यालयी हिंदी का प्रशिक्षण देना होगा, साथ ही अनुवाद, *कम्प्यूटिंग,* जनसंचार, पारिभाषिक शब्दकोश निर्माण आदि का भी। इन समस्त घटकों के मिलेजुले रूप प्रयोजना हिंदी के प्रमुख प्रकार निम्नवत् हैं –

सर्जनात्मक भाषा

इसे रचनाधर्मी/साहित्यिक भाषा भी कहा जाता है। कवि–लेखक अपेक्षाकृत अधिक कल्पनाप्रवण और प्रयोगधर्मी होते है। उन्हें भाषिक संवेदना के अनुसार शब्दों का चयन करना होता है। जो कविता के अतिरिक्त अन्यत्र स्वीकार्य नहीं होते। रचनाकारों ने काव्य लेखन, नाटक, वैचारिक लेखन के अनुसार पात्रानुकूल विषयानुकूल और स्वेच्छानुकूल प्रायः अलग–अलग तरह की अपनी भाषाएँ बना ली है, जो उनकी विशिष्ट पहचान बन गयी है। सर्जनात्मक लेखन ब्रज, अवधी, राजस्थानी, भोजपुरी आदि कई विभाषाओं में भी हो रहा है। उसका साहित्यिक रूप वर्तमान मानक भाषा खड़ी बोली के कामकाजी रूप से पर्याप्त पृथक् भी है। सर्जनात्मक भाषा प्रचार साहित्य, विज्ञापन लेखन और मीडिया लेखन के लिए बहुत उपयोगी है, अतः सर्जनात्मक प्रशिक्षण की व्यवस्था सर्वथा हितकर होगी। हिंदी का साहित्यिक स्वरूप काफी विकसित है। सर्जनात्मक क्षेत्र में हिंदी की अभिव्यक्ति–क्षमता का इस बीच पर्याप्त विस्तार हुआ है। काव्यभाषा, कथाभाषा, नाट्यभाषा और शोध–समीक्षा–भाषा की अलग–अलग आकृतियाँ काफी तेजी से उभरी हैं। हिंदी – वाक्य – संरचना पर यद्यपि अंग्रेजी का आरोपण इधर अधिक दिखाई देता है, फिर भी हिंदी रचनाकारों ने अपने अनेकानेक नये मुहावरे स्थिर कर लिये हैं। कवि–लेखक तो निरंकुश होते ही है। वे साहसपूर्वक भाषा की रूढ़ियों को तोड़ते हुए अपनी नई–नई व्यंजनायें गढ़ लेते हैं, जिनसे अन्ततः रचनाधर्मी हिंदी की श्रीवृद्धि ही होती है। हिंदी का यह रूप कदापि चिन्ताजनक नहीं हैं। इधर प्रयोग कौतुक के कारण यह हिंदी लोक–जीवन से विमुख होने लगी थी, किन्तु अब उसे सहजबोध के सहारे सहज बोली – बानी से परिणत होते देखा जा रहा है। अपने रचनात्मक लेखन के बल पर हिंदी विश्व–भाषाओं के निकट पहुँच रहीं है। उसमें वैश्विक चेतना क्रमशः बढ़ती जा रही है और रचना–संसार उत्तरोत्तर विकसित होता जा रहा है। हिंदी की यह सृजनात्मकता उसकी भाषा संवेदना की देन है, जो सर्वथा सराहनीय है।

संचार भाषा

जन माध्यम के रूप में इसकी उपयोगिता सर्वोपरि है। आज समूचे विश्व में एक प्रकार का अघोषित सूचना युद्ध चल रहा है। समर्थ राष्ट्रों ने अंतरिक्ष में अपनी–अपनी प्रयोगशालायें स्थापित कर ली हैं। कृत्रिम उपग्रहों द्वारा वे भूगोल और खगोल की जानकारी तेजी से संचित करते जा रहे हैं। इसलिए सर्वत्र सूचनाओं का विस्फोट हो रहा है। इस रूप में हिंदी भाषा के सामने अनेक नई चुनौतियाँ उपस्थित हो गई हैं। भारत अन्तरिक्ष युग में प्रतिष्ठित है, इसलिये हिंदी को दूरसंचार की सक्षम भाषा के रूप में गठित करना सबसे बड़ी प्राथमिकता है। विज्ञान और टेक्नोलॉजी ने एक विशेष प्रकार की संचार भाषा को जन्म दिया है जिसमें संकेताक्षरों, लिपि चिह्नों और कूट पदों की बहुतायत है। जिस भाषा में न्यूनतम वर्णाक्षरों तथा सार्थक पदों का प्रयोग किया जाये, वहीं सर्वोत्तम संचार भाषा होती है। उसे ही सुविधापूर्वक कम्प्यूटर में भरा जा सकता है और उसे *टेलैक्स, फैक्स, वाट्सएप, टेलीप्रिंट, फेसबुक, ब्लॉग, ट्विटर*

आदि द्वारा यथावत् सम्प्रेषित किया जा सकता है। अंग्रेजी अपने न्यूनपदत्व के कारण दूरसंचार पर छा गई है। अंग्रेजी भाषी *टेक्नोक्रेट्स* ने दूरदर्शितापूर्वक दशकों पूर्व इस स्थिति का पूर्वाभास कर लिया था। यह भाषिक संरचना मुख्यतः अमेरिकी प्रौद्योगिकी के साथ विकसित हुई है। इस समय विश्व–पटल पर जो अंग्रेजी परिव्याप्त है, वह विलायती 'किंग्स इंगलिश' नहीं है, बल्कि *अमेरिकन इंग्लिश* है। इसकी वर्तनी और वाक्य संरचना काफी भिन्न है। इसे *'कम्युनिकेटिव इंग्लिश'* कहना ही अधिक उपयुक्त होगा। इधर अमेरिका ने वरीयता दी है कामकाजी अंग्रेजी को। इस कम्यूटर युग में उसने अपनी भाषा को प्रयत्नलाघव से जोड़ दिया है और हजारों कोड बना डाले हैं। आज सीधे *'सैटेलाइट* से समाचारपत्रों का मुद्रण और प्रसारण होता है। कम्प्यूटर में सारा विश्वज्ञान भर लेने की स्थिति में हैं वे। इस प्रकार संचार भाषा की निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। भारत अभी *मैनुअल* मुद्रण युग में है। इधर *इलेक्ट्रॉनिक मीडिया* तेजी से फैला है। *केबल टी.वी.* के आ जाने के कारण अब दूरदर्शन को *'ग्लोबल टी.वी.* बनाने की बाध्यता महसूस हो रही है। यही स्थिति रेडियो पत्रकारिता की भी है। इन संचार माध्यमों के अनुकूल इधर हिंदी की एक छवि उद्‌भासित हुई है। अखबारी हिंदी साहित्यिक हिंदी से काफी कुछ भिन्न दिखाई दे रही है। फिल्मी हिंदी भी मानक हिंदी से काफी भिन्न हो गई है। धीरे–धीरे रेडियो और टी.वी. की हिंदी भी स्वायत्त रूप ग्रहण कर लेगी। आवश्यकता यह है कि यह रूपान्तर योजनाबद्ध रूप से किया जाये।

माध्यम भाषा

यह भाषा का तीसरा पक्ष है, जो *'मीडिया'* नहीं, बल्कि *मीडियम* से सम्बन्धित है। जिस भाषा द्वारा पठन–पाठन, अन्वेषण और प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती है, उसे माध्यम भाषा कहते हैं। भारत में उच्च स्तर पर ज्ञान–विज्ञान और तकनीकी का पठन–पाठन प्रायः अंग्रेजी के माध्यम से किया जाता है, जिससे हमारी युवा प्रतिभा को भारी क्षति उठानी पड़ रही है। मानव संसाधन की राष्ट्रीय हानि से बचने का एकमात्र उपाय है, प्रादेशिक भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना। हिंदी की अधिकाधिक स्तरीय पुस्तकें अंग्रेजी की तुलना में ज्यादा सुलभ होनी चाहिए। विडंबना यह है कि अंग्रेजी माध्यम से पढ़कर आने वाले शिक्षक अंग्रेजी माध्यम को ही सुविधाजनक मानते हैं। उच्च शिक्षा में अंग्रेजियत सामाजिक प्रतिष्ठा की प्रतीक बनी हुई है। विज्ञान और तकनीकी के बारे में तो सर्वत्र यह भ्रम भर गया है कि इसका शिक्षण केवल अंग्रेजी द्वारा ही सम्भव है। यह सही है कि अंग्रेजी ज्यादा समृद्ध है। कारण, जो *टैक्नोलॉजी* जिस भाषा से आती है, वह अपने साथ अपनी शब्दावली तथा शब्द संस्कृति भी लेकर आती है। कम्प्यूटर पश्चिम का आविष्कार है। भारत में उसके आने से सैकड़ों अंग्रेजी शब्द हमारे मस्तिष्क में घर कर गये हैं। अन्ततः इनका हिंदीकरण किया जायेगा या फिर इन्हें देवनागरी में लिखकर हिंदी क्रियापदों का ढाँचा अपना लिया जायेगा। इतना हिंदीकरण इन विषम परिस्थितियों में यथेष्ट होगा। जीवन्त भाषा में कठमुल्लापन नहीं होना चाहिए और उसे उधार के शब्दों से परहेज नहीं करना चाहिए, अन्यथा वह अपने को परिपूर्ण नहीं बना पायेगी। अंग्रेजी की परिपूर्णता का मूल कारण है उसकी सर्वसंकलन क्षमता इसीलिए वह एक औपनिवेशिक भाषा के स्तर से उठकर बहुत ऊपर पहुँच गई है।

हमें माध्यम भाषा के रूप में हिंदी की श्रीवृद्धि करनी होगी। इसमें अभी गिने–चुने द्विभाषी और बहुभाषी शब्दकोश हैं। इसी प्रकार विश्वज्ञान कोश, *(इन्साइक्लोपीडिया)* विभिन्न विषयों से सम्बन्धित कोश, संदर्भ कोश आदि कम बन पाये हैं। यह क्षति पूर्ति करना हिंदी की सबसे बड़ी सेवा है। आवश्यकता यह है कि कोश–विज्ञान का प्रशिक्षण देकर विभिन्न बोलियों और विषयों के कोश बना डाले जायें। निम्न मध्य श्रेणी के रचनाकार यदि कविता, कहानी और उपन्यास न लिखकर इस प्रकार के उपयोगी सन्दर्भ ग्रन्थ लिख डालते तो यह उनके लिए और हिंदी के लिए कितना हितकर होता हिंदी में सृजनात्मक लेखन की कमी नहीं है। कमी है विचार–साहित्य या उपयोगी पाठ्य सामग्री की। इसमें प्रत्येक लेखक–विचारक अपनी सहभागिता निभा सकता है। इस समय आवश्यकता है पारिभाषिकों की, संकेताक्षरों की और उनकी एकरूपता की। हमें विदेशी भाषा के हर शब्द का, उसके धात्वर्थ के अनुकूल हिंदी नामान्तर गढ़ना होगा ताकि यह न सिद्ध कर सके कि हिंदी में ऐसे शब्दों का अभाव है। साथ ही हमें हिंदीकरण की प्रक्रिया को भी तेज करना होगा। अभी तक तो यह हिंदीकरण लोकमानस द्वारा होता रहा है। सुविज्ञ पुरूष *'सीन काफ दुरूस्त'* बोलने का अभ्यस्त होता है और इसीलिए वह तत्सम प्रयोगों को दुराग्रही होता है। हिंदीकरण की दिशा में यह एक बाधक तत्व है। यह प्रयास अब विश्वविद्यालयों के स्तर पर होना चाहिए। इसमें शिक्षकों और शोधार्थियों की महती भूमिका हो सकती है। शिक्षा–संस्थाओं से अपेक्षित है कि वे समर्थ अनुवादकों के दल गठित कर लें, जो नवीनतम ज्ञान को तत्काल हिंदी में रूपान्तरित कर डालें। रूपान्तर हिंदी की अपनी अर्थ प्रकृति के अनुसार होना चाहिए। तभी वह सार्थक और प्रभावोत्पादक हो पायेगा। माध्यम भाषा के उपयुक्त लेखन, रूपान्तरण, प्रकाशन

आदि के कार्य आज की आवश्यकता है। माध्यम रूप में हिंदी का प्रचार न तुष्टीकरण द्वारा संभव हैं, न दंड–संहिता द्वारा। इसकी अलग आचार–संहिता होगी। यदि भाषा–ज्ञान को अनिवार्य अर्हता बना दिया जाये तो स्थिति में काफी बढ़ोत्तरी हो सकती है। यदि अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों से बेहतर हिंदी माध्यम वाले स्कूल खोल दिये जायें तो समकालीन प्रवाह को रोक कर इस मानसिकता का भारतीयकरण अर्थात् हिंदीकरण सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

संचार माध्यम भाषा के रूप में हिंदी ने यह कीर्तिमान स्थापित किये हैं। अब तक हिंदी समाचारपत्र विदेशी संवाद–समितियों द्वारा प्रेषित अंग्रेजी समाचारों की अनूदित भाषा छाप रहे थे, किन्तु अब हिंदी समाचार एजेन्सी 'भाषा' ने स्थिति उलट दी है। 'हिन्दुस्तान समाचार एजेन्सी सम्प्रति शिखर पर है। इनकी विश्सनीयता अंग्रेजी की अपेक्षा अधिक है। इसलिए हिंदी दैनिक समाचार पत्रों की पठनीयता में अपूर्व वृद्धि हुई है। हमारी पत्रकारिता का प्रचार–प्रसार विश्व में सर्वोपरि है। आकाशवाणी और दूरदर्शन की समाचार पत्रकारिता भी जनजीवन पर काफी प्रभावी हैं। 'प्रसार भारती' विधेयक को ईमानदारी से लागू कर देने से 'मुक्त प्रेस' की हमारी अवधारणा पुष्ट हुई है, साथ ही शुद्ध स्पर्धा के कारण संचार माध्यम भाषा के रूप में हिंदी का पर्याप्त विकास भी हुआ है। निष्कर्ष यह है कि माध्यम भाषा के रूप में हिंदी–जगत में एक राष्ट्रव्यापी महा अभियान की आवश्यकता है।

संपर्क भाषा

हिंदी भारत में राजभाषा तथा संपर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। इसका कोई एक मानक रूप प्राप्त नहीं होता। पहाड़ी अलग, बिहारी हिंदी अलग। इसी प्रकार अन्य अनेक क्षेत्रों के लहजे परस्तर इतने इसने भिन्न हो गये हैं कि उन्हें एक हिंदी परिवार में पहचान पाना हिंदीतर भाषा–भाषियों के लिए कठिन हो गया है। बोलचाल की हिंदी का चरित्र जनपदीयता या आंचलिकता से इतना प्रभावित है कि यत्न करके अभी तक उसका कोई मानक रूप नहीं बनाया जा सका है। उसमें व्याकरण तथा उच्चारण की इतनी भिन्नता भर गई है कि उसे परिनिष्ठित रूप दे पाना सहज सम्भव नहीं है। किन्तु इस भिन्नता या विविधरूपता के बावजूद बोलचाल की हिंदी विविध विभाषाओं, बोलियों और उपबोलियों से सम्बद्ध है। विविधाता हमारी विशिष्टता भी है। यह हिंदी आज लगभग 72 करोड़ व्यक्तियों के बीच प्रचलित है और संख्या की दृष्टि से यह पूरे विश्व में दूसरे/तीसरे स्थान पर है। इसके सहारे कोटि–कोटि जन किसी न किसी रूप में देश–देशान्तर तक अपना वैचारिक आदान–प्रदान करते है। जब किसी विभाषा का मानकीकरण हो जाता है। तो वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व धारण कर लेती है। गुजराती, पंजाबी, सिन्धी, मैथिली, राजस्थानी और उर्दू इसी प्रकार स्वतंत्र भाषाएँ बन गयी हैं। हिंदी का यह रूप अपनी सहजता एवं सुगमता के लिए विख्यात है। इसमें लोक–जीवन के सहज स्वर है, भारतीय कृषक–संस्कृति की अनुगूँज है और संस्कृत से लेकर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश की भाषिक परम्परा के जीवन संस्कार हैं। कई विदेशी भाषाओं तथा विभिन्न भारतीय भाषाओं ने भी इसे सजाया–सँवारा है। इसलिये यह हिंदी जन–जन का कण्ठहार बनी हुई हैं। राजनीतिक दुराग्रहवश जो हिंदी का विरोध भी करते हैं, वे भी इसे नहीं कर सकते। फिल्मों और मीडिया के माध्यम से यह हिंदी अनुदिन फैलती जा रही है। यह देखा जाता है कि हिंदी में विरचित फिल्मी गीतों और सवादों का प्रायः हर एक पर सम्मोहन–सा छा जाता है। लोग यह महसूस करते हैं कि इसमें एक संक्रामक प्रभाव है। इस सबका एक वैज्ञानिक कारण है। जिस शब्द तथा वाक्य संरचना का जितने अधिक मुखों द्वारा प्रयोग होता है। उस शब्द की अर्थवत्ता अथवा व्यंजना उसी अनुपात में कई गुना बढ़ जाती है। वस्तुतः प्रत्येक मुख स्वयं में शब्दों का एक कारखाना होता है। हर व्यक्ति अपने–अपने उच्चारण और प्रयोग द्वारा उस शब्द में नई–नई अर्थच्छवियाँ भरता जाता है और इस प्रकार उस शब्द की संप्रेषणीयता की बढ़ोत्तरी होती जाती है। हिंदी की शब्द सम्पदा और शक्तिमत्ता का यह मूलाधार है।

बोलचाल की इस हिंदी को गाँधी जी ने 'हिन्दुस्तानी' नाम दिया था, किन्तु साम्प्रदायिक संकीर्णतावश इसे समाज में दीर्घकालिक मान्यता नहीं मिली। इसका कुपरिणाम यह हुआ कि हिंदी उर्दू पृथक हो गई। विचारणीय यह है कि लिपि–भेद के कारण क्या भाषा–भेद होना अपरिहार्य है? यदि ऐसा तो हिंदी में देवनागरी के साथ–साथ मुड़िया, कैथी, फारसी और रोमन जैसी लिपियों का प्रयोग जिन–जिन क्षेत्रों तथा विभाषाओं में होता रहा है वे आज सब छिन्न–भिन्न हो गई होतीं। वस्तुतः किसी भाषा की स्वतंत्र सत्ता तब बनती है, जब स्वतन्त्र शब्द सम्पदा स्थिर हो जाती है और जब उसका पृथक् व्याकरण एवं इतिहास बन जाता है। रेख्त से विकसित खड़ी बोली में उर्दू की जो शब्दावली निर्मित हुई, वह अरब देशों से न आकर भारत की धरती में ही उपजी थी। इसे धीरे–धीरे योजनाबद्ध रूप से फारसीकृत कर दिया गया और फिर मजहबी दबाव वश पृथक् भाषा का नाम दे दिया गया। दूसरी ओर बोलचाल की हिंदी को प्रतिक्रियावश संस्कृत की तत्सम शब्दावली द्वारा परिनिष्ठित बना दिया गया। इसलिए अब इन दोनों की दराज काफी चौड़ी

हो गई अन्यथा उर्दू एक विशिष्ट अन्दाजेबयां अथवा शैली विशेष है। इस भाषा का पुनः संस्कार करना अत्यावश्यक है।

राजभाषा

यह हिंदी का एक नया चरित्र है। इसे अनुप्रयोगात्मक, कार्यालयी, व्यावहारिक, कामकाजी आदि नाम भी दिये गये हैं, किन्तु अब राजभाषा शब्द रूढ़ हो गया है। इसका अर्थ है वह भाषा जो प्रशासन में सहायक होती है। इसे कई वर्गों में विभाजित किया जाता सकता है, यथा–

- प्रशासनिक
- वाणिज्यिक
- तकनीकी

प्रशासनिक वर्ग की राजभाषा में आलेखन, टिप्पण, अनुवाद, पारिभाषिक शब्दावली, संक्षेपण, पत्र–लेखन, विस्तारण (पल्लवन) आदि का प्रयोग होता है। हिंदी भाषी और हिंदीतर कर्मचारी दोनों के लिए इसका प्रशिक्षण हितेय है। सम्प्रति केन्द्रीय कार्यालयों में हिंदी अधिकारी तथा अनुवाद अधिकारी के हजारों पद हैं। प्रशासनिक सेवा प्रतियोगिता में इन विषयों से युक्त हिंदी भाषा का जो पाठ्यक्रम निर्धारित है, उसका प्रशिक्षण हर वर्ग के लिए उपयोगी है। अब तो कुछ विश्वविद्यालयों में भी राजभाषा प्रशिक्षण का प्रमाणपत्र या डिप्लोमा पाठ्यक्रम सुलभ है। राजभाषा प्रशिक्षण का भविष्य निस्सन्देह अनेक सम्भावानओं से युक्त है। प्रशासनिक स्तर पर यदि हिंदी की समुचित प्रतिष्ठा हो गई तो उसका राष्ट्रभाषा, राजभाषा रूप यथासमय स्वतः सुस्थित हो जायगा।

वाणिज्यिक भाषा के रूप में हिंदी को टंकण, आशुलेखन, वाणिज्यिक पत्राचार और नयी आर्थिक शब्दावली से आपूरित करना है, ताकि हिंदी आर्थिक पत्रकारिता का माध्यम बन सके और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में प्रवेश पर सके। इस दशक में बैंकों ने तेजी से हिंदीकरण किया है इसलिये कि वे अपना व्यवसाय सुदूर गाँवों तक फैलाना चाहते हैं। आवश्यकता यह है कि हिंदी प्रशिक्षण को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाये।

तकनीकी राजभाषा का पक्ष हमारी सबसे बड़ी चुनौती है। इसके अन्तर्गत *कम्प्यूटर प्रोग्रैमिंग,* हिंदी *टेलेक्स* और *टेलीप्रिंटर* की व्यवस्था करनी होगी। इसके बिना हम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नहीं ठहर पायेंगे। हिंदी दिनोंदिन अंग्रेजी के समानान्तर अपना रूपान्तरण करती जा रही है। स्पष्ट है कि हिंदी की प्रयोजन प्रकृति से ही उसकी उपयोगिता–वृद्धि होगी। तभी हिंदी भाषियों को आर्थिक स्तर उठेगा, तभी उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा की अभिवृद्धि होगी और तभी हिंदी भाषियों का आर्थिक स्तर उठेगा, तभी उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा की अभिवृद्धि होगी और तभी हमें ग्रन्थि से मुक्ति मिलेगी। अंग्रेजी के न्यूनाधीन समकक्ष पहुँच कर जन–जीवन के हर स्तर पर हम निश्चिंततापूर्वक (सगर्व) हिंदी का प्रयोग करने लगेंगे। भूमंडलीकरण की दृष्टि से भारत संसार का सबसे बड़ा बाजार है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपनी व्यावसायिक नीति के कारण यहाँ अधिकाधिक क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग कर रही हैं। प्रचार, बिक्री एवं प्रकाशन–अधिकारियों की निरन्तर माँग भविष्य में बढ़ेगी। हिंदी माध्यम से इनके प्रशिक्षण की पूर्व व्यवस्था करना समय का तकाजा है। यही सब हिंदी के विकास का निमित्त बनेगा।

मातृभाषा

हिंदी उत्तर भारत के 10 राज्यों (उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, राजस्थान, हरियाणा, हिमालय प्रदेश तथा दिल्ली) में मातृभाषा के रूप में प्रचलित है। इसके अतिरिक्त, अण्डमान–निकोबार में भी वह काफल व्याप्त है। हिंदीतर राज्यों के कई नगरों/क्षेत्रों में बहुत बड़े वर्ग के बीच वह दैनिक जीवन में प्रयुक्त होती दिखती है। जैसे अहमदाबाद, सूरत, मुंबई, हैदराबाद, कोलकाता, चण्डीगढ़, अरूणाचल प्रदेश मेघालय आदि। इसी जन भाषा के सहारे यहाँ दो–दो बार जन जागरण आंदोलन चले, आजादी की जंग जीती गई और विकास का अभियान चलाया गया। हमें हर प्रकार का शिक्षण मातृभाषा के माध्यम से देना होगा। इससे विद्यार्थियों की चिन्तन क्षमता का विकास होता है। विदेशी भाषा के पीछे नष्ट होती हुई 80 प्रतिशत क्षमता मौलिक सोच में परिणत हो सकती है। मातृभाषा रूप में हिंदी की बहुत बड़ी विशेषता है, उसकी सहजता–सुगमता। उसका शब्द भंडार बहुत विस्तृत है। उसमें लगभग 200 उपभाषाएँ, विभाषाएँ, बोलियाँ, उपबोलियाँ हैं। इन सबको मिलाकर मातृभाषा रूप में हिंदी की संस्कृति और भाषायी प्रकृति अत्यन्त प्रभावोत्पादक सिद्ध होती है। क्रमशः इनका व्याकरण, वर्तनी विधान, लिप्यंकन, उच्चारण आदि का मानकीकरण होता जा रहा है। यह हिंदी देश विदेश में कई रूपों में द्रष्टव्य है, जैसे– उर्दू, राजस्थानी, बिहारी, पूर्वी, पश्चिमी, पहाड़ी, दकनी, फिजियन सरनामी, त्रिनी, नेपाली, रोमा, ताज्जिकी, हिन्दुस्तानी आदि। इन सबका विकास अत्यावश्यक है।

राष्ट्रभाषा

भारतीय संविधान में स्वीकृत 22 भाषाओं को *'नेशनल लैंगुवेज'* (राष्ट्रीय भाषाएँ/राष्ट्रभाषाएँ) कहा गया है, जिनमें

एक राष्ट्रभाषा हिंदी भी है। भारतीय संविधान ने यह व्यवस्था दी है कि 'देवनागरी लिपि में लिखी हिंदी संघ की राजभाषा होगी किन्तु इस व्यवस्था को स्थगित कर दिया गया और ऐसी शर्तें लगा दी गईं कि अब शायद ही हिंदी सही अर्थों में पूरे देश की राजभाषा– राष्ट्रभाषा बन पाये। इसके निम्नलिखित कई कारण हैं:

- हिंदी साम्राज्यवाद की आशंका से ग्रस्त हिंदी विरोधियों का कुचक्र
- अंग्रेजीपरस्त प्रशासकों की दुरभिसंधि
- व्यावहारिक भाषा के रूप में हिंदी एवं देवनागरी न्यूवतायें
- अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मिशनरियों का अंग्रेजी–प्रचार
- भारतीय भाषाओं की पारस्परिक भेद–वृद्धि
- अंग्रेजी भाषा से जुड़े आर्थिक प्रलोभन
- हिंदी–भाषियों का हीनताबोध
- जनसाधारण की यथास्थितिवादी प्रवृत्ति।

जिस हिंदी के सहारे आजाद की लड़ाई जीती गई थी, जो हिंदी उत्तर भारत के नवजागरण का माध्यम बनी थी और जो हिंदी इस लोकतन्त्र में जनसंवाद की वास्तविक भूमिका निभा सकती है, उसको अब तक राष्ट्रभाषा की प्रतिष्ठा नहीं दी गई है। देश की 22 भाषाओं को अपने–अपने क्षेत्र की राजभाषा बनाना होगा। देश में उर्दू को द्वितीय राजभाषा और अंग्रेजी को सहसम्पर्क भाषा के नाम पर थोप दिया गया है। इसमें अनेक प्रकार की हानियाँ उठानी पड़ रही हैं। जैसे–

- शासन और जन के बीच सहज प्रीति और प्रतीति नहीं आ पर रही है।
- व्यवस्था पर एक कुलीनतंत्र *(इलीट)* हावी हो गया है। फलतः एक बहुत बड़ा वर्ग सामाजिक न्याय से वंचित है।
- अंग्रेजी को अनिवार्य कर दिये जाने से कई देशी भाषाओं का अस्तित्व शनैः शनैः क्षीण होता जा रहा है।
- अंग्रेजियत ने हिंदी के ढाँचे को अस्त–व्यस्त कर दिया है। इसमें शिक्षितों, अर्धशिक्षितों के बीच जो भाषा बोली जा रही है, वह *'कान्वेण्ट कल्चर'* से उत्पन्न हिंदी– अंग्रेजी की एक वर्णसंकर खिचड़ी भाषा है, जिसे परिहासवश लोग *'हिंगलिश'* कह देते हैं। सम्भव है कालक्रम में यह स्वतन्त्र भाषा का रूप धारण कर ले, उसी तरह जैसे *फ्रेंच, डच* और हिंदी भोजपुरी के परिपाक से मॉरीशस में *क्रिओल* भाषा का प्रचलन हो गया है।
- भारत में अंग्रेजी के आत्यंतिक प्रयोग से मानवीय संसाधन तथा राष्ट्रीय प्रतिभा की क्षति हो रही है। यह बड़ा विचारणीय प्रश्न है कि अरबों – खरबों की बजट व्यवस्था के बावजूद ज्ञान–विज्ञान सीखने वाले हमारे युवा की अस्सी प्रतिशत से अधिक क्षमता भाषा के स्तर पर ही व्यय हो जाती है। शेष बीस प्रतिशत से वह विषयवस्तु को पूर्णतः आत्मसात कैसे कर सकता है? बस, वह *फार्मूला रटन्त* तक पहुँचते–पहुँचते चूक जाता है। प्रसिद्ध उक्ति है कि 'आविष्कार उस भाषा में होते हैं, जिसमें हम सपने देखते हैं। कल्पनाएँ अवचेतन से उठती हैं। यदि उन्हें मातृभाषा से जोड़ दिया जाये तो नई–नई सूझें स्वतः स्फूर्त हो उठेंगी। यह मनोभाषिकी का सर्वसम्मत सिद्धान्त है। भारतेन्दु जी ने ठीक ही लिखा था कि 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।' यहाँ 'निज भाषा का अर्थ है– अपनी–अपनी प्रादेशिक भाषाएँ। यदि उन्हें माध्यम बना लिया जाये तो विकास की द्रुत गति सुनिश्चित है। रूस, जापान, दक्षिण कोरिया आदि देशों ने अपनी–अपनी राष्ट्रभाषाओं के माध्यम से विज्ञान और तकनीकी का अभूतपूर्व विस्तार करके इस कथन को सिद्ध कर दिया है। भारतीय मस्तिष्क में उर्वरता की कमी नहीं हैं। वह वस्तु को देखकर उसकी अनुकृति तुरन्त तैयार कर लेता है। हाँ, मौलिक उद्भावनाएँ नहीं जुटा पाता, इसलिए कि वह अंग्रेजी भाषा के व्यूह से मुक्त होकर ज्ञान–विज्ञान की देशी चिन्तन सरणी को नहीं अपना रहा है। इसमें आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। राष्ट्रभाषा का यह प्रश्न मूलतः हिंदी भाषा–भाषियों की संकल्प शक्ति पर निर्भर है। हम पारिभाषिक शब्द बना सकते है। संकेताक्षर (कूट पद) गढ़ सकते हैं। टंकण, आशुलेखन, कम्प्यूटरीकरण आदि के विकल्प खोज सकते हैं और अनुवाद शब्दकोश, विश्वज्ञानकोश आदि की व्यवस्था भी कर सकते हैं। इनका नितान्त अभाव हिंदी में नहीं है। इस दिशा में पिछले साठ वर्षों में पुष्कल साहित्य प्रकाशित हुआ है और निरन्तर हो रहा है। हिंदी अवश्य ही इस क्षेत्र में अंग्रेजी से स्पर्धा नहीं कर सकती, फिर भी उसके साथ अपनी अस्मिता का भाव तो जुड़ा ही है। हिंदी हमारी इसी राष्ट्रीय अस्तिमा की प्रतीक है। इस भाव (राष्ट्रभाषा) की संकल्पना ही हिंदी का सही कार्यान्वयन कर सकती है। भारत सरकार ने राजभाषा आयोग, संसदीय राजाभाषा समिति, वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग, केंद्रीय हिंदी संस्थान, हिंदी निदेशालय और अन्तर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा इस दिशा में अनेक उपक्रम किए हैं, जैसे

- पूरे देश के केन्द्रीय कार्यालयों में राजभाषा – व्यवस्था का अनुपालन
- मंत्रालयों में हिंदी सलाहकार समितियों का गठन
- हिंदी अधिकारियों की नियुक्ति और राजभाषा अनुभाग का प्रतिष्ठापन
- हिंदी प्रशिक्षण अर्थात् हिंदी प्राज्ञ और प्रवीण जैसी परीक्षाओं का संचालन
- हिंदीतर क्षेत्र में छात्रवृत्ति, पुरस्कार, नौकरी, सम्मानादि द्वारा प्रोत्साहन
- प्रचार– साहित्य और तुलनात्मक साहित्य का प्रकाशन
- विभिन्न प्रान्तों का पारस्परिक परिरभ्रमण आदि।

भाषा की उपेक्षा दण्डविधान का रूप भी धारण कर सकती है, किन्तु मात्र नियमन अथवा दण्ड के सहारे वर्तमान प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सही हिंदीकरण का पाना दुष्कर है। इसकी प्रतिक्रिया अधिक होती है, इसलिए हृदय–परिवर्तन करके हिंदी का प्रचार–प्रसार कर सकना अपेक्षाकृत अधिक व्यावहारिक होगा। इस संदर्भ में विचारणीय है हिंदी का संविधानिक रूप। भारतीय संविधान के भाग 5 (120) और भाग 16 में संघ की राजभाषा नीति निर्धारित की गयी है। इसके अनुसार अनुच्छेद 248 के उपबन्धों के अधीन संसद में कार्य हिंदी या अंग्रेजी में होगें। लोकसभाध्यक्ष किसी सांसद को विशेष परिस्थिति में अपनी भाषा में बोलने की अनुमति दे सकते हैं। हमारे संविधान में यह आश्वासन दिया गया था कि 1965 के बाद अंग्रेजी हटा दी जाएगी किन्तु 1964 के एक आदेश के अन्तर्गत अंग्रेजी प्रयोग को अनिश्चित काल के लिए बढ़ा दिया गया। राजभाषा परिनियमावली के अनुसार राज्यों के विधान मण्डल अपनी क्षेत्रीय राजभाषा या हिंदी/अंग्रेजी में कार्य कर सकते हैं। संघ शासन ने पहले रोमन अंकों को भी स्वीकार किया था, अब नागरी अंक भी स्वीकार्य हैं।

राजभाषा के विकास के लिए राष्ट्रपति की अध्यक्षता में राजभाषा आयोग गठित किया गया। उसके निर्देशानुसार पारिभाषिक कोश बनाने के लिए केन्द्रीय हिंदी निदेशालय और हिंदी शिक्षण के लिए केन्द्रीय हिंदी संस्थान तथा अनुवाद ब्यूरों की स्थापना की गई। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में केन्द्रीय हिंदी समिति तथा विभिन्न मंत्रालयों में हिंदी के कार्यान्वयन के लिए हिंदी सलाहाकार समितियाँ भी गठित की गयीं।

केन्द्र और राज्यों के बीच पत्राचार के लिए 3 वर्गों में राज्यों को वर्गीकृत किया गया। (क) हिंदी भाषी राज्य (ख) हिंदी भाषी और अपनी प्रादेशिक भाषा वाले राज्य तथा (ग) हिंदीतर राज्य।

संविधान की आठवीं अनुसूची में इस समय 22 भाषाएँ दर्ज हैं। राजभाषा अधिनियम के संबंध में राष्ट्रपति ने कई संशोधन तथा आदेश जारी किए हैं, और द्विभाषी नीति (हिंदी अंग्रेजी) के प्रयोग को प्रश्रय दिया है।

उच्च न्यायालयों में भाषा के चयन का अधिकार न्यायाधीशों को दिया गया। तमिलनाडु और जम्मू कश्मीर के लिए कुछ उपबंधों को शिथिल किया गया है। कुछ राज्यों में द्वितीय राजभाषा की व्यवस्था की गयी है। यह निश्चय किया गया कि हिंदी में प्राप्त पत्रों का उत्तर केन्द्र सरकार हिंदी में देगी। कर्मचारी हिंदी–अंग्रेजी दोनों का प्रयोग कर सकते हैं। उन्हें हिंदी में शीघ्र प्रवीणता प्राप्त कर लेनी चाहिए। पदोन्नति के लिए हिंदी का कार्यसाधक ज्ञान अपेक्षित है। उनके लिए 'लीला' साफ्टवेयर द्वारा हिंदी प्रशिक्षण, राजभाषा प्रशिक्षण आदि की शुरूआत हुई है। गृह मंत्रालय में राजभाषा विभाग हिंदी के प्रगामी कार्यक्रम बना रहा है, जिससे देवगारी लिपि वाली हिंदी यथाशीघ्र कम्प्यूटरीकृत राजभाषा बन जाए, पारिभाषिक शब्दावली स्थिर हो जाए, मशीनीकृत अनुवाद शुरू हो जाए और भाषा विवाद पूर्णतः समाप्त हो जाए।

अब आवश्यकता यह है कि क, ख, ग, विभाजन समाप्त हो, अंग्रेजी प्रयोग की अवधि निश्चित की जाए, हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित किया जाए, 14 सितम्बर को 'भारतीय राजभाषा दिवस' के रूप में मनाया जाए, राजभाषा की अवज्ञा करने वाले दण्डित भी किए जाएँ, भाषाओं का पृथकीकरण रोका जाए, उर्दू को हिंदी से जोड़ा जाए, पूर्वोत्तरी राज्यों (जैसे मेघालय, अरूणाचल प्रदेश) में हिंदी को राजभाषा घोषित किया जाए, हिंदी अधिकारियों के रिक्त पद भरे जाएँ, उन्हें भाषा मंत्रालय से प्रतिनियुक्ति पर भेजा जाए और हिंदी प्रकोष्ठ को स्वायत्त बनाया जाए। हिंदी भाषी में प्रत्येक संस्था नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति कार्य करे। उच्च शिक्षा और न्यायपालिका में उसका अनुप्रयोग हो। इन सूत्रों पर पुनर्विचार करके राजभाषा परिनियमावली का पुनर्गठन करना सर्वथा हितकर होगा।

राजभाषा हिंदी के ये प्रशासनिक रूप रोजगार से जुड़े हुये हैं। राजभाषा में अनुवादकों की जरूरत है। हिंदी अधिकारियों की बड़ी खपत है। मीडिया में पत्रकारों की आवश्यकता है। हिंदीतर क्षेत्रों में भाषा– शिक्षकों की माँग है। कार्यालयी हिंदी में पत्राचार, टिप्पण, आलेखन, संक्षेपण, पल्लवन, कम्प्यूटरी हिंदी पारिभाषिक शब्दावली आदि के प्रशिक्षण लेकर कई सुअवसर प्राप्त किये जो सकते हैं। यही 'प्रयोजनी हिंदी का मुख्य

उद्देश्य है।

प्रयोजनमूलक हिंदी के विभिन्न रूप

इस उपभोक्तावादी युग में जो विद्या और जो भाषा अर्थकरी नहीं है, वह व्यर्थ है इसलिए नई पीढ़ी को आश्वस्त करते हुए हमें हिंदी को आजीविका का साधन बनाना होगा। संप्रति हिंदी से जुड़े हुए निम्नलिखित व्यावसायिक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं या चलाए जा सकते हैं:

(1) अनुवाद (2) संपादन (3) समाचार संकलन (4) फीचर लेखन (5) मीडिया समाचार वाचन (6) संचालन (7) उद्घोषणा (8) रेडियो वार्ता (9) रेडियो नाटक (10) वृत्तचित्र (11) पत्र पत्रिका (12) रूपांतरण (13) रिपोर्ताज (14) रेडियो नाटक लेखन (15) *टेलीड्रामा* (16) *डाक्यू ड्रामा* (17) *टेलीफिल्म* (18) *सोप ऑपेरा* (19) नुक्कड़ नाटक (20) पटकथा (21) संवाद–लेखन (22) लोक साहित्य संकलन (23) सर्जनात्मक लेखन (24) विज्ञापन एवं प्रचार साहित्य लेखन (25) डबिंग (26) दुभाषिया प्रविधि (27) राजभाषा प्रशिक्षण (28) स्तरीय व्यावसायिक साहित्य लेखन (29) परीक्षपयोगी स्तरीय लेखन (30) *वेटिंग* (31) पत्रलेखन (जैसे कार्यालयी पत्र, प्रशस्ति–पत्र) (32) संभाषण कला (33) वाचिक अभिनय (34) भाषा शिक्षण (35) मंचीय दाव्यपाठ एवं कथा वाचन (36) हिंदी (देवनागरी) सुलेखन (37) पारिभाषिक शब्दावली–निर्माण (38) पाठानुसंधान / पाठालेखन (39) देवनागरी मुद्रण का प्रूफ–पठन (40) प्रकाशन उद्योग (41) *कैसेट* निर्माण (42) कोश–निर्माण (43) विषयानुसार उपयोगी–जनप्रिय रचनाओं तथा तथ्यों का वर्गीकृत संदर्भांकन, (44) *डाटा*–संकलन एवं आपूर्ति (45) आशुलेखन (46) हिंदी *कम्प्यूटर इंटरनेट प्रोग्राम* (47) प्रतियोगितापरक परीक्षाओं हेतु हिंदी प्रशिक्षण (48) *कमेंट्रीकला* (49) विचारपरक लेखन आदि।

इसके अतिरिक्त भी कई रोजगार हिंदी के माध्यम से खोजे जा सकते हैं। आवश्यकता यह है कि युवा पीढ़ी के हित में हिंदी का यह नया चरित्र हम सत्यनिष्ठापूर्वक विकसित करें। यही आज का युगधर्म है। इससे बड़ी हिंदी–सेवा कोई और नहीं। हिंदी का यह पक्ष लगभग 45 वर्षों से चल रहा है। इसे मोट्टूरि जी ने 'प्रयोजनमूलक हिंदी' नाम देकर 1974 में अनुवाद तथा पत्रकारिता पाठ्यक्रमों से साथ स्थापित किया था। 1977 में मैंने इसमें कार्यालयीय हिंदी (राजभाषा–प्रशिक्षण), प्रचार साहित्य, वाक् कला, रंगमच, मीडिया लेखन, सर्जनात्मक प्रशिक्षण तथा कम्प्यूटिंग का सन्निवेश करके उपर्युक्त 50 संभावानाओं की ओर ध्यानाकर्षण किया था। इस समय उच्च स्तर पर पूरे देश में कई भारतीय विश्वविद्यालय प्रयोजनमूलक हिंदी के पाठ्यक्रम चला रहे हैं, जिससे रोजगार के नए क्षितिज खुल रहे हैं और अंग्रेजी से टक्कर लेती हुई हिंदी कामकाजी भाषा के रूप पूरी क्षमता के साथ उभर रही है।

"हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदूस्तान की सभी बोलियों व भाषाओं में जो उत्तम चीजे हैं, उन्हें हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए उसका हिस्सा बनाना चाहिए और यह प्रक्रिया अविरल चलती रहनी चाहिए"

– नरेन्द्र मोदी

राजभाषा प्रभाग

राजभाषा : स्वरूप और अनुप्रयोग

राजेंद्र गौतम
906, झेलम अर्पाटमेंट, प्लाट सं–8, सेक्टर–5, द्वारका, नई दिल्ली

'भाषा' शब्द के उच्चारण के साथ ही सर्वप्रथम इसका प्रकार्यात्मक रूप हमारे समक्ष उभर कर आता है। प्रकार्यात्मक रूप में भाषा संप्रेषण–माध्यम है। भाषाओं के वर्गीकरण से हमारे मन में बनने वाला चित्र किसी देश, स्थान या व्यक्ति की भाषा का होता है। इसीलिए भाषा भारतीय भाषा, यूरोपीय भाषा अथवा मराठी भाषा, जापानी भाषा, फ्रेंच भाषा, अंग्रेजी भाषा, हिंदी भाषा आदि विविध रूपों में हमारे सामने आती है। लेकिन राजभाषा शब्द से आशय इस वर्गीकरण से बिल्कुल भिन्न प्रकार का है। यह भिन्नता भाषा के भौगोलिक वर्गीकरण की अपेक्षा उसके अनुप्रयोगात्मक रूप पर आधारित है। यह अनुप्रयोगात्मक रूप इसके प्रयुक्ति क्षेत्र अथवा इसके *'लैंग्वेज रजिस्टर'* से निर्धारित होता है। प्रयुक्त क्षेत्र किसी भाषा की शब्दावली को ही निर्धारित नहीं करता उसकी शैली को भी निर्धारित करता है।

प्रश्न उत्पन्न होता है कि 'राजभाषा' शब्द का मूल अर्थ क्या है? जब हम इस सामासिक शब्द का विग्रह कर अर्थ जानने की कोशिश करते हैं तो तीन संभावित अर्थ सामने आते हैं। इसका प्रथम संरचनात्मक अर्थ हुआः 'राजा की भाषा'। लेकिन यहाँ राजा का अर्थ *'किंग'* रूप में न लेकर हमें 'शासक' अर्थ लेना होगा। निश्चित रूप से सामंती व्यवस्था का राजा लोकतंत्र के राजा से भिन्न है। इसलिए लोकतंत्र में 'शासक' भी भिन्न है। वह व्यक्ति न होकर एक संस्था है। सामान्यतः वह संस्था 'राज्य' है।

इसी क्रम में संरचनात्मकता की दृष्टि से ही राजभाषा का दूसरा अर्थ स्पष्ट होता है। वह है : 'राज्य की भाषा'। भारत के संविधान में भाषा संबंधी बहुत सी अवधारणाएं, व्याख्याएं, अनुच्छेद आदि समाहित किए गए हैं। वहीं पर इसकी एक आठवीं अनुसूची ऐसी भी है, जिसके अनुसार राजभाषा का तात्पर्य 'राज्यों की भाषाएँ' होता है। संविधान के अनुच्छेद 345 के निर्देश भी राजभाषा के इसी आशय को स्पष्ट करते हैं। लेकिन यहाँ ध्यान रखना होगा कि पहले अर्थ में 'राज्य' प्रभुसत्ता सम्पन्न देश है और दूसरे अर्थ में इसके घातक के रूप में विद्यमान विभिन्न राज्य अथवा प्रांत हैं।

'राज' का एक तीसरा अर्थ और उभरता है। वह अर्थ क्रमशः शासन और प्रशासन से होते हुए 'राजकाज' तक जाता है। अनुप्रयोग की दृष्टि से राजभाषा का अर्थ हुआः 'राजकाज' की भाषा'। इसे हम *'ऑफिशियल लैंग्वेज'* के रूप में अनूदित कर सकते हैं। *ऑफिशियल* का अर्थ हुआ सरकार द्वारा अनुमति प्राप्त। इसी रूप में वह 'सरकारी कामकाज की भाषा' बनती है। राज्य की सम्पूर्ण व्यवस्था से जुड़े होने के कारण ही 'राजभाषा विभाग' को भारत सरकार के गृह मंत्रालय से अधीन किया गया है। एक समय था जब देश के कार्यालयों में राजभाषा के कार्य को देखने वाले अधिकारी को 'हिन्दी अधिकारी' कहा जाता था। लेकिन अब इस पदनाम को बदल दिया गया है। अब वह 'राजभाषा अधिकारी' है अथवा राजभाषा प्रबंधक है जो राजभाषा के अनुप्रयोगात्मक पक्ष से सामंजस्य रखता है। *ऑफिशियल* का एक और अर्थ हुआ–'ऑफिस का' अर्थात कार्यालयी। असल में सरकार और कार्यालय सहवर्ती है। कोई भी व्यक्ति सरकार के रूप में तभी काम कर पाता है या तभी 'सरकारी काम' कर पाता है– जब वह कोई *ऑफिस होल्ड* करता है अर्थात पदस्थापित होता है। इससे यह तथ्य सामने आता है कि राजभाषा के अनुप्रयोग के क्षेत्र वहाँ–वहाँ है, जहाँ–जहाँ सरकार है। हम जानते हैं कि सरकार तीन रूपों में उपस्थित होती है। वे रूप हैं– विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका। अतएव राजभाषा के अनुप्रयोग के भी यही तीन क्षेत्र हैं। इन तीनों क्षेत्रों की समानांतर उपस्थिति संघ सरकार और राज्य सरकार के स्तर पर होती है। संघ स्तर पर विधायिका की उपस्थिति संसद (राष्ट्रपति, राज्यसभा और लोकसभा) के रूप में है तथा राज्य स्तर पर विधान–मंडल (राज्यपाल, विधानसभा और विधान परिषद (जहाँ भी हों) के रूप में होती है। जिस प्रकार कार्यपालिका के अंतर्गत केन्द्र सरकार, इसके अन्य संबद्ध अधीनस्थ कार्यालय, केंद्रीय उपक्रम तथा स्वायत्त संस्थाएँ आती हैं, उसी प्रकार राज्य स्तर पर राज्य सरकार के कार्यालय मंडल तथा जिला स्तर का प्रशासन, और उपक्रम आदि आते हैं। संघ स्तर पर न्यायपालिका की उपस्थिति उच्चतम न्यायालय के रूप में होती है और राज्य स्तर पर उच्च न्यायालय, जिला न्यायालय तथा अन्य अधीनस्थ न्यायालयों के रूप में।

मोटे रूप में संविधान में राजभाषा संबंधी किए गए प्रावधानों

का उल्लेख अनुच्छेद 120, अनुच्छेद 210 तथा अनुच्छेद 343 से अनुच्छेद 351 तक उपलब्ध होता है। अनुच्छेद 120, 210, 343 और 344 जहाँ केंद्र से संबंधित है, वहीं अनुच्छेद 345 और 346 का संबंध राज्यों से है। अनुच्छेद 348 न्यायपालिका के साथ जुड़ा है। अनुच्छेद 349 जहाँ अनुच्छेद 348 की ही विशेष व्याख्या है वहाँ अनुच्छेद 350 शिक्षा और सामाजिक न्याय से विशेष रूप से सम्बद्ध है। इसलिए आज इसकी प्रासंगिकता नई शिक्षा नीति के कार्यान्वयन में विशेष है।

राजभाषा संबंधी उपबंधों में अनुच्छेद 351 का विशेष महत्त्व है। यह अनुच्छेद राजभाषा के स्वरूप को निर्धारित करता है। देखा जाए तो राजभाषा के उपबंधों के दो पक्ष हैं। एक स्थैतिक पक्ष है जो उसके *स्टेटस*– उसकी वैधानिक स्थिति को परिभाषित करता है, दूसरा कायिक *(कॉरपोरल)* रूप है जो उसकी संरचनात्मक को साकार करता है और उसके स्वरूप का परिचायक है। इस कथन को समझने के लिए अनुच्छेद 343 का उदाहरण लेते हैं। इस अनुच्छेद का पहला वाक्य है– (1) ''संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी, संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा"। इसमें हिंदी को 'संघ की राजभाषा' का *'स्टेटस'* प्रदान किया गया है। यह उसकी वैधानिक स्थिति है। 'देवनागरी लिपि' और 'भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप का प्रयोग' उसकी संरचना का निर्देश करते हैं। यह उसके कायिक रूप को संकेतित करता है। लेकिन महत्त्वपूर्ण यह है कि राजभाषा के रूप में हिंदी के कायिक रूप का इतने भर से पूरा चित्र नहीं बनता। पूरा चित्र उभरता है– अनुच्छेद 351 के माध्यम से। इस अनुच्छेद में कहा गया है : "संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द–भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे"।

आइए इस अनुच्छेद के इस दीर्घ वाक्य के घटकों को समझें। मूल तथ्य यह उभर कर आता है कि संघ के तीन प्रमुख कार्य होंगेः 1. हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाना, 2. उसका विकास करना और 3. इन दोनों कार्यों के माध्यम से हिन्दी की समृद्धि सुनिश्चित करना। लेकिन प्रसार और विकास का उद्देश्य क्या होगा, यह भी इस अनुच्छेद में स्पष्ट किया गया है। वह उद्देश्य है, हिन्दी को भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने में सक्षम करना। 'भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्व' अत्यंत महत्त्वपूर्ण पदबंद है। राजभाषा के रूप में हिन्दी का यह दायित्व निर्धारित करना संविधान सभा का विवेकसम्पन्न और महत्त्वपूर्ण निर्देश है। यहाँ संस्कृति के साथ 'सामासिक' विशेषण का प्रयोग भी विचारणीय है। यहाँ पर बल *'कम्पोजिट कल्चर'* पर, सामासिक संस्कृति पर है। वह संस्कृति जो सभी जातियों, धर्मों, और संप्रदायों के प्रति समावेशी दृष्टि रखती है, जो लैंगिक समानता पर आधारित है, वही सामासिक संस्कृति हो सकती है; जो संस्कृति भौगोलिक क्षेत्रों, कबीलों, जनजातियों या आदिवासी समूहों से लेकर खान–पान, पहनावे, रीति–रिवाज की विविधता को स्वीकार करती है, वही सामासिक संस्कृति हो सकती है; जो संस्कृति समग्र भारत की तस्वीर प्रस्तुत करती है, वही सामासिक संस्कृति हो सकती है। इससे स्पष्ट होता है कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का लक्ष्य तोड़ना नहीं, जोड़ना होगा। प्रश्न यह है कि इतनी भाषाई विविधता वाले इस देश में यह संभव कैसे होगा? अनुच्छेद 351 राजभाषा हिन्दी के कायिक *(कॉरपोरल)* रूप के निर्माण के लिए जो आधारभूत निर्देश प्रस्तुत करता है, वे एक ओर हिन्दी को भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने में सक्षम हैं, दूरी ओर भाषाई विविधता को बाधक मानने की अपेक्षा उसे स्वयं में एक समृद्ध संसाधन बना देते हैं। अनुच्छेद 351 के अनुसार संघ का दायित्व होगा–'हिन्दी की समृद्धि सुनिश्चित करना'। इस समृद्धि से आशय उसके शब्द–भंडार की समृद्धि है। पहले तो इस बात पर बल दिया गया कि हिन्दी की मूल प्रकृति में हस्तक्षेप नहीं करना है, फिर भी उसे हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए यह समृद्धि प्रदान करनी होगी। हम जानते हैं कि वर्तमान में आठवीं अनुसूची में भारत की प्रमुख 22 भाषाएं हैं। इन भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करने का अर्थ है, सम्पूर्ण भारत की भाषा–संपदा का दोहन और सदुपयोग करना। आवश्यक या वांछनीय स्थिति में हिन्दी के शब्द–भंडार को समृद्ध करने के लिए जहाँ अन्य भाषाओं से गौणतः शब्द ग्रहण के लिए कहा गया है, मुख्यतः संस्कृत से शब्द ग्रहण करने का निर्देश है। ये दोनों स्थितियाँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। संस्कृत भारत की प्राचीन और समृद्धतम भाषा है। हिन्दी की मूल जड़ें संस्कृत तक जाती है। इसलिए बहुत–से तत्सम संस्कृत शब्द हिन्दी में पहले से ही विद्यमान हैं। उनसे नए शब्दों को निर्मित करना सरल है।

यों, संस्कृत संसार की उन गिनीचुनी भाषाओं में है, जिसमें एक मूल क्रिया या धातु से अनेक शब्दों के निर्माण की क्षमता है। दूसरा महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत की अन्य भारतीय भाषाएँ या तो स्वयं संस्कृत से निरूसृत अपभ्रंशों से विकसित हुई हैं या उनका शब्द–भंडार संस्कृत मूल के शब्दों को समाहित किये है। इसलिए संस्कृत से शब्द ग्रहण करने से हिन्दी की अखिल भारतीय संप्रेषणीयता निश्चित होती है। संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी का यही स्वरूप अपेक्षित था। राजभाषा हिन्दी में अन्य भाषाओं से गौणतः शब्द ग्रहण करने के निर्देश का उद्देश्य यही है कि ऐसे शब्दों की आनुपातिक अधिकता अलग–अलग राज्यों में अर्थ–ग्रहण में बाधा बन सकती है।

जैसा हमने ऊपर स्पष्ट किया है राजभाषा के अनुप्रयोग के व्यापक संदर्भ को समझना होगा। विधायिका में इसके अनुप्रयोग के निर्देशों से जुड़े अनुच्छेद 120 से संकेत मिलता है कि संविधान सभा के निर्णयों में व्यावहारिकता सर्वप्रमुख है। तत्कालीन परिस्थितियों में अंग्रेजी की हिन्दी के साथ स्वीकृति इसी का संकेत देती है। इस अनुच्छेद में लिखा गया है: "संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा – (1) भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा। परंतु, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिंदी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ–भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(2) जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो "या अंग्रेजी में" शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो।

राज्यों के संदर्भ में राजभाषा के अनुप्रयोग की ऐसी ही व्यावहारिकता अनुच्छेद 210 में दिखाई देती है– "विधान–मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा– (1) भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान–मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा।

परंतु, यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी भाषा में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(2) जब तक राज्य का विधान–मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो "या अंग्रेजी में" शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो :

परंतु हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय और त्रिपुरा राज्यों के विधान–मंडलों के संबंध में, यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो इसमें आने वाले "पंद्रह वर्ष" शब्दों के स्थान पर "पच्चीस वर्ष" शब्द रख दिए गए हों :

परंतु यह और कि अरुणाचल प्रदेश, गोवा और मिजोरम राज्यों के विधान–मंडलों के संबंध में यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो इसमें आने वाले "पंद्रह वर्ष" शब्दों के स्थान पर "चालीस वर्ष" शब्द रख दिए गए हों"।

भारत की राजभाषा नीति के समग्र आकलन के लिए तथा इसके अनुप्रयोग और स्वरूप को समझने के लिए भारत सरकार के निम्नलिखित प्रावधानों का विस्तार सहित अध्ययन अपेक्षित है–

- संविधान के अंतर्गत प्रावधान
  (क) अनुच्छेद 120, 210, 343–351.
  (ख) संविधान की आठवीं अनुसूची
- राष्ट्रपति के आदेश, 1960
- राजभाषा अधिनियम, 1963
- (यथासंशोधित,1967), (1963 का अधिनियम संख्यांक 19)
- राजभाषा संकल्प, 1968
- राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 (यथा संशोधित, 1987)
- राजभाषा विभाग अधिसूचना 2007

उपर्युक्त सामग्री जहाँ भारत की राजभाषा नीति की सैद्धांतिकी को विस्तार से हमारे समक्ष रखती है, वहाँ केन्द्र सरकार, इसके अन्य संबद्ध अधीनस्थ कार्यालयों, केंद्रीय उपक्रमों तथा स्वायत्त संस्थाओं के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अपने दैनिक कार्य के निष्पादन और राजभाषा के अनुप्रयोग के लिए 'राजभाषा संकल्प, 1968' तथा 'राजभाषा नियम,1976' के निर्देशों की व्यावहारिक उपयोगिता अत्यधिक है।

राजभाषा प्रभाग

विश्व में हिंदी का बढ़ता स्वरूप

अभिषेक कुमार सिंह, ब्रह्म प्रकाश, मनोज कुमार त्रिपाठी एवं विनय कुमार सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

आज के गला काटने वाले प्रतिस्पर्धात्मक युग में कोई भी भाषा केवल अपने साहित्य के बल पर अपने अस्तित्व की लड़ाई नहीं लड़ सकती है, अपितु उसे व्यवसाय, विज्ञान तथा रोजगार की भाषा की कसौटी पर भी खरे उतरना परम आवश्यक है। जो भाषा किसी बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार देने में अपने को असमर्थ पाती है, उस भाषा का क्षेत्र धीरे–धीरे संकुचित होने लगता है। अंग्रेजी भाषा के अंतर्राष्ट्रीय भाषा होने का सर्वोच्च कारण लोगों को उनकी आजीविका सुनिश्चित करने में सहायक होना है। केवल शौक के लिए किसी नई भाषा को सीखने वालों की संख्या अत्यंत सीमित होती है। जबकि व्यवसाय के अवसरों को सृजन करने वाली भाषा को अधिकांश लोग सीखना चाहते हैं। हिंदी भारत के अधिकांश लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है। संविधान द्वारा हिंदी को राजभाषा के पद पर आसीन होने के पश्चात हिंदी भाषा का स्वरूप व्यावहारिक होता जा रहा है। हिंदी संस्कृति, संवेदना तथा हृदय की भाषा होने के साथ–साथ अब रोजगार की भाषा भी हो गई है। हिंदी भाषा केवल अपने समृद्ध साहित्य के बल पर ही आज जीवित नहीं है, अपितु व्यवसाय, विज्ञान तथा रोजगार में उसका सम्मिलित होना उसमें नई प्राण शक्ति फूँक रहा है। हमारे लिए हर्ष तथा सम्मान का विषय है कि वर्तमान में हिंदी भाषा सभी कसौटियों पर खरी उतरकर एक नया वैश्विक रूप प्राप्त कर रही है। विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी भाषा के बढ़ते वर्चस्व तथा प्रयोजनीयता के कारण हिंदी आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सिंहासन की दहलीज पर पहुँच चुकी है। *यूनेस्को* की एक *रिपोर्ट* के अनुसार वर्तमान में विश्व के करीबन 137 देशों में हिंदी पैर पसार चुकी है। नेपाल, चीन, सिंगापुर, म्यांमार, श्रीलंका, थाईलैंड, मलेशिया, तिब्बत, भूटान, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश, मालदीव आदि जैसे विभिन्न देशों में हिंदी भाषी परिवार पीढ़ी दर पीढ़ी निवास कर रहे हैं। नेपाल की भाषाएँ हिंदी की विभाषाएँ ही हैं। इंडोनेशिया, जावा तथा सुमात्रा में आम बोलचाल में प्रयोग की जाने वाली उर्दू को भी देवनागरी लिपि में लिखने पर वह हिंदी भाषा ही है। दुबई की अधिकांश जनसंख्या न केवल हिंदी समझती है, अपितु बोलती भी है।

विश्व के चुनिंदा देशों में भारत तीव्र गति से उभरने वाली आर्थिकी है। साथ ही साथ अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भी देश की हैसियत लगातार बढ़ रही है। जब किसी राष्ट्र को विश्व बिरादरी महत्व तथा स्वीकृति देती है तथा उसके प्रति अपनी निर्भरता में वृद्धि पाती है तो उस राष्ट्र की तमाम चीजें स्वतः ही अधिक महत्वपूर्ण हो जाती हैं। आज वैश्विक स्तर पर उसकी स्वीकार्यता और व्याप्ति स्वतः ही अनुभव की जा सकती है। अतीत में जिन देशों में हिंदी का ज्ञान लगभग न के बराबर था, वर्तमान में वहाँ भी हिंदी की गूँज स्पष्ट सुनी जा सकती है। सरकारी स्तर पर हिंदी के प्रयोग से हिंदी अपने देश में ही नहीं अपितु, सम्पूर्ण संसार में अपनी अमिट छाप छोड़ रही है। प्रधानमंत्री जी एवं उनके मंत्रिमंडल द्वारा कार्यालयी कार्यों एवं बोलचाल में हिंदी के प्रयोग में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है, जिसके कारण हिंदी दिन पर दिन विश्व पटल पर आगे की तरफ बढ़ती जा रही है। सारिणी 1 में निहित आंकड़ों के माध्यम से यह देखा जा सकता है कि किस प्रकार विभिन्न देशों में हिंदी का बोलबाला बढ़ा है।

सारिणी 1: देश के कुछ प्रमुख देशों में हिंदी बोलने वाले व्यक्तियों की जनसंख्या

क्रम सं.	देश	हिंदी बोलने वाली आबादी
1.	नेपाल	60,00,000
2.	संयुक्त राज्य अमेरिका	6.50,000
3.	मॉरीशस	4.50,000
4.	फिजी	3,80,000
5.	दक्षिण अफ्रीका	2,50,000
6.	सूरीनाम	1,50,000
7.	युगांडा	1,00,000
8.	*यूनाइटेड किंग्डम*	45,000
9.	न्यूजीलैंड	20,000
10.	जर्मनी	20,000
11.	त्रिनिदाद और टोबैगो	16,000
12.	सिंगापुर	3,000

स्रोतः दैनिक जागरण समाचार पत्र दिनांक 14 सितंबर 2019

परीक्षाओं में बढ़ता प्रभुत्व

आज नई पीढ़ी के लिए हिंदी भारत बोध और राष्ट्रीय अस्मिता का साधन है। हिंदी अब प्रतियोगी परीक्षाओं में भी अपना प्रभुत्व दिखला रही है। *नीट* तथा *जेईई* से लेकर संघ लोक सेवा आयोग तक हिंदी भाषा का माध्यम लेकर विद्यार्थी परीक्षाएं दे रहे हैं। वर्ष 2016 में राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा जिसे *नीट* (स्नातक) नाम से जाना जाता है, में वर्ष 2019 में 1,79,000 विद्यार्थियों ने हिंदी माध्यम से प्रवेश परीक्षा दी थी जो वर्ष 2024 में बढ़कर 3,57,000 हो गई है। इसी प्रकार संयुक्त प्रवेश परीक्षा–मुख्य *(जेईई–मेन)* जैसी परीक्षाएं अंग्रेजी व हिंदी सहित 11 अन्य भारतीय भाषाओं में भी आयोजित की जा रही हैं तथा इसमें भी गत पाँच वर्षों में हिंदी माध्यम से परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों की संख्या में दोगुना वृद्धि दर्ज की गई है। इन परीक्षाओं में हिंदी भाषा में परीक्षा देने वाले छात्रों की संख्या अंग्रेजी से अभी भी कम है लेकिन उत्तीर्ण होने वाले छात्रों का औसत अधिक है। अब उत्तरी भारत के उत्तर प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा तथा उत्तराखंड जैसे हिंदी भाषी राज्यों ने *मेडिकल* तथा *इंजीनियरिंग* जैसे विशिष्ट वैज्ञानिक विषयों का अध्यापन हिंदी सहित दूसरी स्थानीय भाषाओं में करने की पहल की गई है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने *एम.बी.बी.एस.* और *इंजीनियरिंग* की पढ़ाई को हिंदी में भी आरंभ करने के हर संभव प्रयास करने के निर्देश दिए हैं। हिंदी *आई.आई.टी.* तथा *आई.आई.एम.* तक में प्रवेश कर चुकी है। मानविकी के अतिरिक्त, विधि, वाणिज्य, विज्ञान, प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में हिंदी में शिक्षण आरंभ हो चुका है। यह बहुत बड़ा परिवर्तन है जो अत्यंत सराहनीय है।

तकनीकी क्षेत्र में प्रभावी कार्य

आज का दौर तकनीक का है और तकनीक लगातार सूक्ष्मतर होती जा रहीं है। हिंदी भी नई तकनीक के सहारे *ई पेपर, ई जर्नल* एवं *ई बुक* के रूप में वैश्विक स्तर पर पहुंच रहीं है। अब उपग्रह प्रसारित चैनलों, सिनेमा से लेकर *ओ.टी.टी.* तक हिंदी का बोलबाला है। हिंदी के इस फैलाव में *डिजिटल* दुनिया और *इंटरनेट मीडिया* की सबसे अहम भूमिका है। अब हिंदी *वायस सर्च क्वेरी* 400 प्रतिशत की दर से प्रति वर्ष बढ़ रहीं है और *इंटरनेट मीडिया* हिंदी जानने वालों का सबसे बड़ा पटल बन गया है। गूगल के अनुसार, गत एक दशक में *इंटरनेट* पर उपलब्ध होने वाली सामग्री हिंदी में 94 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। भाषाई *इंटरफेस* के कारण वर्तमान में जो तकनीकी सुविधा अंग्रेजी में उपलब्ध है, वह हिंदी में भी उपलब्ध है। अंग्रेजी की तुलना में *इंटरनेट मीडिया* पर हिंदी अधिक लोकप्रिय है। भारत निकट भविष्य में भूमंडल का सबसे बड़ा इंटरनेस उपभोक्ता देश बनने जा रहा है जिसका सबसे प्रभावी माध्यम हिंदी रहने वाली है। अब भाषाओं का प्रशिक्षण भी *ई–लर्निंग* के माध्यम से संभव है। तकनीकी क्षेत्र में प्रभावी कार्य को लेकर हिंदी का भविष्य अत्यंत उज्जवल है।

विश्व के विभिन्न देशों में हिंदी का प्रचार–प्रसार

भारत की अर्थव्यवस्था आज विश्व की पाँचवी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। वैश्विक वित्तीय सेवा कंपनी मॉर्गन स्टेनली की रिपोर्ट के अनुसार भारत का सकल घरेलू उत्पाद *(जीडीपी)* वर्ष 2028 तक 5.7 ट्रिलियन डॉलर तक पहुँच जाएगा। तब भारत जर्मनी को पीछे छोड़ते हुए विश्व की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगा। जैसे–जैसे भारत की आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है तथा वह वैश्विक मंच पर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज करा रहा है, वैसे–वैसे भारत के बहुसंख्यक व्यक्तियों द्वारा बोली जाने वाली हिंदी भाषा भी वैश्विक पटल पर अपनी स्थिति को और भी सुदृढ़ होती जा रही है। आज हिंदी संपूर्ण लोक में 65 करोड़ लोगों की पहली भाषा तथा 50 करोड़ लोगों की दूसरी और तीसरी भाषा बन चुकी है। विश्वभाषा से तात्पर्य यह होता है कि उसे बोलने और समझने वाले लोग कितने देशों में पाये जाते है। वर्तमान में भारत के बाहर नेपाल, सिंगापुर, मलेशिया, भूटान, हाँग काँग, थाईलेंड, मॉरीशस, गुआना, फिजी, त्रिनिदाद, इंग्लैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं कनाड़ा में हिंदी भाषी व्यक्तियों की प्रचुर संख्या विद्यमान है। जगत के 137 देशों में प्रवास कर रहे भारतीय मूल के लगभग दो करोड़ व्यक्ति अपना सम्पूर्ण कार्य हिंदी में ही निष्पादित करते हैं। हिंदी का किसी देश अथवा विदेशी भाषा से किंचित मात्र भी विरोध नहीं है। हिंदी अनेक भाषाओं के शब्दों को अंगीकार कर लेती है जिसके परिणामस्वरूप आज हिंदी का शब्दकोश विश्व के सबसे बड़े भाषिक शब्दकोश के रूप में परिलक्षित होता है। आज की हिंदी अपनें जिस वैभव के साथ विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर हैं, वह अनेक बोलियों से मिलकर बनी है। उसका वर्तमान रूप इन्हीं से निर्मित हुआ है। हिंदी के विकास में इन बोलियों के अलावा देश के सभी कवियों, संतों, भक्तों और साहित्यकारों की विशेष भूमिका रहीं है। हिंदी भारत की सांस्कृतिक एकता का मजबूत आधार बन गई है। भारतीय राज्यों में यह गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, पंजाब, कश्मीर तथा पूर्वोत्तर के राज्यों और अधिकाश केंद्र शासित प्रदेशों में द्वितीय भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। इस प्रकार संपूर्ण विश्व में लगभग 135 करोड़ लोग किसी न किसी रूप में हिंदी को बोलते अथवा समझते हैं। विश्व की कुल जनसंख्या में हिंदी जानने वाले व्यक्तियों के बारे में आंकड़े सारिणी 2 में प्रदर्शित किए गए हैं।

सारिणी 2: विश्व में हिंदी जानने वालों से संबंधित जानकारी

क्षेत्र	कुल जनसंख्या	हिंदी जानने वालों की कुल संख्या	प्रतिशत
भारत को छोड़कर विश्व के अन्य देश	5,94,64,09,008	28,64,86,582	4.81
विश्व की कुल जनसंख्या	7,22,06,00,000	1,29,86,17,995	17.98
(पूर्णांकित)	7,22,06,00,000	1,30,00,00,000	18.00

स्रोतः डॉ जयन्ती प्रसाद नौटियाल द्वारा किया गया शोध अध्ययन सन् 2015 (अनुमानित आंकड़े)

भारत के विभिन्न राज्यों की आधिकारिक भाषाएँ

संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के अंतर्गत विभिन्न राज्यों ने अपने राज्य में सरकारी काम–काज के लिए आधिकारिक भाषाएँ घोषित की हुई है। कुछ राज्यों ने एक भाषा को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिया है जबकि कई राज्यों द्वारा विभिन्न भाषाओं को आधिकारिक भाषाओं की मान्यता दी गई है। भारत के विभिन्न राज्यों के सरकारी कामकाज करने की आधिकारिक भाषाएँ सारिणी 3 में दर्शाई गई हैं।

सारिणी 3: भारत के विभिन्न राज्यों के सरकारी कामकाज करने की आधिकारिक भाषाएँ

राज्य	आधिकारिक भाषा	अन्य आधिकारिक भाषाएँ
आंध्र प्रदेश	तेलुगू, उर्दू	अंग्रेजी
अरुणाचल प्रदेश	अंग्रेजी	–
असम	असमिया, बोड़ो	बांग्ला (बराक घाटी में)
बिहार	हिंदी	उर्दू
छत्तीसगढ़	हिंदी	छतीसगढ़ी
गोवा	कोंकणी, अंग्रेजी	मराठी
गुजरात	गुजराती	हिंदी
हरियाणा	हिंदी	अंग्रेजी तथा पंजाबी
हिमाचल प्रदेश	हिंदी	संस्कृत
झारखंड	हिंदी	अंगिका, बंगला, भोजपुरी, भूमिज, हो, खड़िया, खोरठा, कुरमाली, कुरुख, मगही, मैथिली, मुंडारी, नागपुरी ओड़िया, संधाली तथा उर्दू
कर्नाटक	कन्नड़	हिंदी
केरल	मलयालम	हिंदी
मध्य प्रदेश	हिंदी	
महाराष्ट्र	मराठी	
मणिपुर	मणिपुरी	अंग्रेजी
मेघालय	अंग्रेजी	खासी तथा गारो
मिजोरम	मिज़ो, अंग्रेजी	
नागालैंड	अंग्रेजी	
ओड़िशा	ओड़िया	अंग्रेजी
पंजाब	पंजाबी	
राजस्थान	हिंदी	
सिक्किम	अंग्रेजी, नेपाली, सिक्किमी, लेपचा	गुरुड़, लिम्बू, मगर, मुखिया, नेवारी, किरौती (राय), शेर्पा तथा तामाड़
तमिलनाडु	तमिल	अंग्रेजी
तेलंगाना	तेलुगू	उर्दू
त्रिपुरा	बांग्ला, अंग्रेजी, ककबरक	
उत्तर प्रदेश	हिंदी	उर्दू
उत्तराखंड	हिंदी	संस्कृत
पश्चिम बंगाल	बंगला, अंग्रेजी	नेपाली (दार्जिलिंग तथा कुर्सियांग अनुमंडल में), उर्दू, हिंदी, ओड़िया, संथाली, पंजाबी, कामतापुरी, राजवंशी, कुरमाती, कुरुख तथा तेलुगू

हिंदी के बढ़ते कदम

हिंदी के पत्र–पत्रिकाओं का बोल–बाला केवल अपने ही देश में नहीं अपितु, भारत के बाहर लगभग 25 देशों से 100 से अधिक हिंदी की पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें से अधिकांश पत्रिकाएं अभी भी प्रकाशित हो रहीं हैं। मुंबई निवासी डॉ. जवाहर कर्नावट के पास इनमें से 23 देशों की 95 पत्र–पत्रिकाओं का संग्रह है। यह हिंदी के बढ़ते स्वरूप को दर्शाता है। हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि विश्व के जितने भी विकसित राष्ट्र हैं, उन सबने अपनी भाषा में ही विकास को प्राप्त किया है। यह बात अमेरिका, रूस, जर्मनी, जापान, फ्रांस, ब्रिटेन, इटली, स्पेन, पुर्तगाल, इजराइल तथा चीन तक समान रूप से देखी जा सकती है। अपनी भाषा का महत्व यह है कि इजराइल जैसे छोटे से राष्ट्र ने हिब्रू में उत्कृष्ट तथा मौलिक शोध कार्य करके अब तक 12 नोबेल पुरस्कार प्राप्त किए हैं। इतना ही नहीं, यह समस्त देश अपनी भाषाओं के विकास पर बड़ी धनराशि भी खर्च करते हैं। इन देशों की सरकारें अपनी भाषा तथा साहित्य के प्रति आकर्षण बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार की योजनाएं बनाकर कार्यान्वित करतीं हैं।

वर्तमान सरकार में राष्ट्रपति भवन तथा प्रधानमंत्री कार्यालय से लेकर भारत सरकार के अनेक मंत्रालय हिंदी में अपना कार्य दक्षता पूर्ण तरीके से कर रहे हैं। आज हिंदी फ़िजी एवं संयुक्त अरब अमीरात जैसे देशों में आधिकारिक भाषा बन गई है। संयुक्त अरब अमीरात ने तो न्यायालयों में हिंदी के प्रयोग की अनुमति दे दी है। आज इतना बड़ा बदलाव आया है कि अब संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अपना *एक्स हैंडल* और *वेबसाइट* को हिंदी में आरंभ कर दिया है। इसके साथ ही साथ रेडियो पर एक घंटे का हिंदी कार्यक्रम भी प्रसारित करता है। भारत सरकार के प्रयासों से संयुक्त राष्ट्र संघ ने हिंदी, उर्दू एवं बांग्ला तीन भारतीय भाषाओं में कामकाज की सुविधा दे दी है।

विश्व की सबसे लोकप्रिय भाषाः हिंदी

विगत 2–3 वर्षों में भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने विश्व के विभिन्न देशों के अपने आधिकारिक भ्रमण में अपने संबोधन हिंदी में देने के साथ ही साथ, संयुक्त राष्ट्र संघ में भी अपना उद्‌बोधन हिंदी में ही दिया। उनके सभी व्याख्यानों को संसार के करोड़ों व्यक्तियों द्वारा बहुत ध्यानपूर्वक सुना गया। इतना ही नहीं, अपितु इन व्याख्यानों को हिंदी में सजीव प्रसारित भी किया गया। हिंदी की लोकप्रियता एवं उसका प्रभाव मंडल केवल भारत के पड़ोसी देशों में ही नहीं अपितु जगत के अनेक देशों में फैल गया है। आज हिंदी मॉरीशस, फिजी, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाद एवं टोबेगो जैसे राष्ट्रों में राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित है। साथ ही साथ, आस्ट्रेलिया, ब्रिटेन, अमेरिका, इंडोनेशिया, अफ्रीका एवं खाड़ी के देशों में भी अत्यंत लोकप्रिय हो रही है। इस प्रकार आज हिंदी इस भूमंडल पर बोली जाने वाली दूसरी सबसे बड़ी भाषा बन गई है। आज हिंदी इतनी लोकप्रिय हो गई है कि सम्पूर्ण विश्व आज हिंदी को जानना चाह रहा है उसके पीछे कारण यह है कि पूरे विश्व के लगभग 18 प्रतिशत व्यक्ति हिंदी जानते हैं, जिसके कारण से आज अनेक देश अपने *प्रिंट मीडिया* एवं *इलेक्ट्रॉनिक मीडिया* में हिंदी को सम्मानजनक स्थान दे रहे हैं।

विश्व में शिक्षण एवं प्रशिक्षण में हिंदी का प्रभाव

जिस प्रकार अपने देश के अनेक विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में विभिन्न विदेशी भाषाएं पढ़ाई जाती हैं, उसी प्रकार संसार के विभिन्न देशों में भी हिंदी का पठन–पाठन किया जाता है। हिंदी की लोकप्रियता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि विश्व के लगभग 150 से अधिक देशों में हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण का कार्य अनेकों शैक्षणिक संस्थानों के द्वारा चलाया जा रहा है। वर्तमान में दुनिया के 30 से अधिक देशों और लगभग 175 विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन–अध्यापन किया जा रहा है। केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही कैलिफोर्निया, टेक्सास, शिकागो, पेंसिलवेनिया, हयूटन स्थित विश्वविद्यालयों सहित 20 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी का पठन–पाठन हो रहा है। साथ ही दिनों–दिन इसमें बढ़ोत्तरी भी देखी जा रही है जो कि हिंदी के भविष्य को लेकर एक बहुत ही अच्छा संकेत है। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ में भी हिंदी से अंग्रेजी द्विभाषाविद की आवश्यकता निरंतर महसूस की जा रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 2009 में हिंदी समाचार बुलेटिन आरंभ किया गया है तथा 2019 में हिंदी में एक समाचार *वेबसाइट* शुरू की गई है। साथ ही, हिंदी में अपने *ट्विटर* संदेश भी भेजे जा रहे हैं। अनेक देशों के भारतीय दूतावासों में हिंदी से शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को अनुवादक, संस्कृति सचिव, *सेकंड सेक्रेटरी,* सांस्कृतिक सहचारी आदि पदों पर नियुक्त करके रोजगार दिया जा रहा है। वैश्विक *इंटेलिजेंस* एजेंसियों तथा सुरक्षा एजेंसियों के साथ–साथ अमेरिकी सेना में भी हिंदी अनुवादक भर्ती किए जाते हैं। भारत सरकार एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के प्रयासों से हिंदी सीखने वालों की संख्या में दिनों–दिन बढ़ोत्तरी होती जा रही है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि हिंदी भारत की ही नहीं, अपितु विश्व की अत्यंत सरल, जीवित तथा वैज्ञानिक भाषा है। वर्तमान में हिंदी में उद्यमिता तथा तकनीकी की अपार संभावनाएं हैं। कुछ वर्षों पूर्व तक हिंदी भाषा को हीन भाषा के रूप में समझने वाले व्यक्ति भी आज विश्व में हिंदी भाषा के बढ़ते महत्व तथा उसकी बढ़ती प्रयोजनीयता से परिचित हो गए हैं। आज हिंदी विश्व की अत्यंत लोकप्रिय भाषा के रूप में उभर रही हैं। भारत सरकार द्वारा हिंदी भाषा को बढ़ावा देने के साथ ही साथ, हिंदी को रोजगारोन्मुखी बनाने के भी प्रयास किए जा रहे हैं जो निसंदेह अत्यंत सराहनीय हैं। आज भारत के प्रधानमंत्री जैसे सर्वोच्च पद पर आसीन व्यक्ति के साथ ही साथ केंद्र तथा विभिन्न राज्य सरकारों के मंत्रीगण तथा उच्च अधिकारीगण वैश्विक मंच पर भी हिंदी में अपने विचार व्यक्त कर रहे हैं जिससे न केवल प्रत्येक भारतीय अपने को गौरान्वित महसूस कर रहा है, अपितु प्रत्येक हिंदी भाषा का ज्ञान रखने वाला भी अपने को सम्मान का अधिकारिणी समझ रहा है। हमको आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि वह दिन दूर नहीं जब भारत में हिंदी संवैधानिक रूप से राष्ट्रभाषा के रूप में राज कर रही होगी। भारत सरकार तकनीकी, चिकिसा, विज्ञान तथा कृषि जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों की भाषा को हिंदी में प्रस्तुत करने के प्रयत्न कर रही है, इससे यह विश्वास होता है कि भविष्य में हिंदी भाषा में रोजगार के नित्य नए–नए अवसर सृजित होंगे।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना में एकीकृत जल प्रबंधन

चन्द्र गुप्ता
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

संयुक्त राष्ट्र ने भविष्यवाणी की है कि 2025 तक, दुनिया की दो–तिहाई आबादी–लगभग 5.5 बिलियन लोग, पानी की गंभीर कमी का सामना करने वाले देशों में रह रहे होंगे। भारत एक पानी की कमी वाला देश है और कनाडा और ब्राजील जैसे देशों की तुलना में भारत में प्रति व्यक्ति ताजे पानी की उपलब्धता बहुत कम है। गन्ना एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है, जो न केवल दुनिया भर में 78 प्रतिशत चीनी का उत्पादन करती है, बल्कि सह–उत्पादन, शराब और ईंधन के रूप में ऊर्जा की मांग में भी योगदान देती है और इसके अलावा बड़ी संख्या में उच्च लागत, मूल्य वर्धित, उपयोगी उत्पाद भी पैदा करती है। लाखों किसान और मजदूर इसकी खेती में लगे हुए हैं। हालाँकि, हमें पानी की बचत करने और सीमित पानी की उपलब्धता के प्रभावी उपयोग के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करके घटते जल संसाधनों की स्थिति से निपटना होगा।

गन्ना एक उष्णकटिबंधीय फसल है (महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात क्षेत्र आदि) और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र में उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और बिहार महत्वपूर्ण गन्ना उत्पादक राज्य हैं, जो बड़ी मात्रा में *बायोमास* का उत्पादन करते हैं और अधिकतम उपज पैदा करने के लिए पानी और नाइट्रोजन दोनों के पर्याप्त इनपुट की आवश्यकता होती है। गन्ना देश की 6.46% सिंचाई क्षमता का उपयोग करता है जबकि यह शुद्ध बोए गए क्षेत्र का केवल 2.55 प्रतिशत हिस्सा घेरता है। फसल अवधि के दौरान पानी का कुल उपभोग 200 से 250 सेंमी. तक होता है। यह अनुमान लगाया गया है कि एक टन गन्ना पैदा करने के लिए लगभग 250 टन पानी की आवश्यकता होती है। एक किलो चीनी बनाने में 2,000 से 2,500 लीटर पानी लगता है। गन्ना उत्पादन में पानी सबसे महत्वपूर्ण *इनपुट* है, लेकिन देश के अधिकांश गन्ना उत्पादक क्षेत्रों में इसकी पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता मुश्किल होती जा रही है। सूखा बार–बार पड़ रहा है और हाल के दिनों में इसने गन्ना और चीनी उत्पादन को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। इन परिस्थितियों में गन्ना उत्पादन को बनाए रखने के लिए उपलब्ध पानी की पूरी क्षमता का दोहन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसे अधिकतर सिंचित फसल के रूप में उगाया जाता है। उष्णकटिबंधीय *बेल्ट* में 12 महीने की फसल को 30–36 सिंचाई मिलती है और उपोष्णकटिबंधीय में सिंचाई की संख्या 5–10 तक होती है। यह लेख गन्ने में जल प्रबंधन के हमारे शोध परिणामों का विवरण देता है। ये जल बचत प्रौद्योगिकियां गन्ने में सिंचाई जल उपयोग दक्षता को 1.5 से 2.5 गुना तक बढ़ा सकती हैं।

वर्तमान में, गन्ने का क्षेत्रफल ~ 5.0 मिलियन हेक्टेयर है और 81.0 टन/हेक्टेयर की औसत उत्पादकता के साथ 405.34 मिलियन टन गन्ने का उत्पादन होता है।

सिंचाई का उद्देश्य

सिंचाई फसल के जड़ क्षेत्र में पानी का कृत्रिम अनुप्रयोग है जो वर्षा की एक पूरक क्रिया है, ताकि फसल के सामान्य विकास और उपज का एहसास करने के लिए फसल के जड़ क्षेत्र में इष्टतम मिट्टी की नमी की स्थिति प्रदान की जा सके। अधिकांश स्थानों पर, अधिकांश फसलों के बढ़ते मौसम के दौरान वर्षा समान रूप से वितरित नहीं होती है। ऐसे में किसी न किसी स्तर पर फसलों को पानी की कमी से जूझना पड़ेगा। सिंचाई का उद्देश्य अपर्याप्त वर्षा के समय फसलों में पानी की कमी को दूर करना है।

कब करें सिंचाई?

सिंचाई मुख्य रूप से पौधों के वांछित घटक की उपज और गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए आवश्यकतानुसार पानी की आपूर्ति करने के लिए की जाती है। सिंचाई तब होनी चाहिए जब मिट्टी में पानी की क्षमता अभी भी काफी अधिक हो, ताकि मिट्टी स्थानीय वायुमंडलीय मांगों को पूरा करने के लिए इतनी तेजी से पानी की आपूर्ति कर सके और पौधों को तनाव में रखे बिना, जिससे कटी हुई फसल की उपज या गुणवत्ता कम हो जाएगी। जब मिट्टी की नमी ऊपरी सीमा में होती है, जो खेत की क्षमता के बहुत करीब होती है, तो गन्ने का उत्पादन अच्छा होता है। यह पाया गया है कि गन्ने के लिए सिंचाई वनस्पति चरण (रोपण से लेकर रोपण के 270 दिन बाद तक) के दौरान उपलब्ध मिट्टी की नमी के 50 प्रतिशत की कमी पर और परिपक्वता चरण (यह रोपण के 270 दिन बाद से लेकर कटाई तक) के दौरान उपलब्ध मिट्टी की नमी के 75 प्रतिशत की कमी पर दी जानी चाहिए।

कितनी सिंचाई करें?

सिंचाई के लिए आवश्यक पानी की मात्रा वह मात्रा है जो मिट्टी की नमी को उसके घटते स्तर से मिट्टी की क्षेत्र क्षमता और परिवहन और अनुप्रयोग हानि तक वापस लाने के लिए आवश्यक होती है। चूंकि गन्ने की सक्रिय जड़ प्रणाली मिट्टी की 50 सेंमी. गहराई तक फैली हुई है, इसलिए पूरे शीर्ष 50 सेंमी. मिट्टी की परत में मिट्टी की नमी को खेत की क्षमता तक वापस लाने के लिए सिंचाई करनी होगी। मिट्टी की नमी की मात्रा को उपलब्ध मिट्टी की नमी के 50 प्रतिशत से बढ़ाकर क्षेत्र की क्षमता तक परिवहन और अनुप्रयोग हानि सहित बढ़ाने के लिए आवश्यक पानी की मात्रा मिट्टी की बनावट के आधार पर 50 से 80 मिमी तक होती है। रेतीली मिट्टी को कम पानी की आवश्यकता होती है जबकि चिकनी मिट्टी को प्रति सिंचाई अधिक पानी की आवश्यकता होती है। लेकिन रेतीली मिट्टी में मिट्टी की नमी का ह्रास तेजी से होता है जबकि चिकनी मिट्टी में इसकी गति धीमी होती है। इसलिए, रेतीली मिट्टी में चिकनी मिट्टी की तुलना में अधिक बार सिंचाई करनी पड़ती है।

गहराई–अंतराल–उपज दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण में, मिट्टी और पानी की स्थिति को ध्यान में रखे बिना मनमाने ढंग से विभिन्न गहराइयों और अंतरालों को तय करके प्रयोग किए जाते हैं। अधिकतम उपज पैदा करने वाली गहराई और अंतराल को सर्वोत्तम अभ्यास के रूप में चुना जाता है और किसानों को अनुशंसित किया जाता है। यह पाया गया है कि लंबे अंतराल पर थोड़ी भारी सिंचाई की तुलना में बार–बार हल्की सिंचाई अधिक प्रभावी होती है। अध्ययनों से पता चला है कि निम्नलिखित सिंचाई कार्यक्रम दोमट प्रकार की मिट्टी में उगाए गए गन्ने के लिए प्रति सिंचाई 60 मिमी पानी इष्टतम है (तालिका 1)।

हल्की मिट्टी में सिंचाई के बीच के अंतराल को थोड़ा कम करना पड़ता है जबकि भारी मिट्टी में इसे थोड़ा बढ़ाना पड़ता है। पुनः विभिन्न अवधियों के दौरान प्राप्त वर्षा की मात्रा के आधार पर अंतराल को समायोजित करना पड़ता है।

तालिका 1. फसल की उम्र और सिंचाई अंतराल की अवस्था

फसल की अवस्था	सिंचाई के बीच का अंतराल
अंकुरण (35वें दिन तक)	7 दिन
टिलरिंग (36वें से 100वें दिन)	10 दिन
भव्य वृद्धि (101वें से 270वें दिन)	7 दिन
परिपक्वता (271वें दिन से)	15 दिन

गन्ने की पानी की आवश्यकता

फसल की उपज के स्तर और देश के विभिन्न हिस्सों में प्रचलित जलवायु परिस्थितियों के आधार पर, पानी की आवश्यकता 1,200 से 3,500 मिलीमीटर तक काफी भिन्न होती है। सिंचाई का सहारा तब लिया जाता है, जब फसल की पानी की आवश्यकता वर्षा से पूरी नहीं होती है। गन्ने की पानी की आवश्यकता उपोष्ण क्षेत्र में 1,200–1,800 मिलीमीटर तक होती है जबकि महाराष्ट्र को छोड़कर उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में यह 1,600–2,700 मिलीमीटर है। महाराष्ट्र में अदसाली गन्ने के लिए कुल फसल जल की आवश्यकता लगभग 3,500 मिलीमीटर है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में 30 से 40 बार सिंचाई की जाती है। उपोष्ण क्षेत्र में, ऐसे स्थान हैं जहां गन्ना वर्षा आधारित परिस्थितियों में उगाया जाता है, ऐसे स्थान हैं जहां गर्मी के महीनों के दौरान केवल 3 से 5 सुरक्षात्मक सिंचाई दी जाती है और ऐसे स्थान हैं जहां लगभग 15 सिंचाई की जाती है। उन स्थानों पर जहां जलवायु की वाष्पीकरणीय मांग कम है, पानी की आवश्यकता भी कम है। किसी भी जलवायु परिस्थिति में, अधिक उपज वाली फसल के लिए पानी की आवश्यकता अधिक होती है और कम उपज वाली फसल के लिए कम होती है। पूरे देश में विभिन्न गन्ना उत्पादक राज्यों की वार्षिक पानी की आवश्यकता का अनुमान तालिका 2 में दिया गया है। पानी की आवश्यकता *(डब्ल्यूआर)* मौसम की स्थिति, मिट्टी की बनावट और फसल स्टैंड (पौधे की वृद्धि और विकास या पेड़ी की फसल) के आधार पर अलग–अलग जगहों पर भिन्न होती है।

देश में अधिकांश खेत की फसलें वर्षा अवधि के साथ ही उगाई जाती हैं। इसलिए उनकी सिंचाई जल की आवश्यकता कम है। गन्ना पूरे वर्ष खेत में पड़ा रहता है और गन्ने के लिए सिंचाई के पानी की सबसे अधिक आवश्यकता गर्मी के महीनों में होती है जब सिंचाई के पानी की उपलब्धता बहुत कम होती है।

सिंचाई के तरीके

सतही सिंचाई

इस विधि में, सिंचाई के पानी को स्रोत से खेत तक, आमतौर पर मिट्टी की नालियों के माध्यम से पहुंचाया जाता है और खेत में पानी को मिट्टी की सतह पर बहने दिया जाता है। यह विधि सरल, सस्ती और अपनाने में आसान है। लेकिन पानी का एक बड़ा हिस्सा परिवहन और अनुप्रयोग दोनों के

तालिका 2. भारत के विभिन्न गन्ना उत्पादक राज्यों में पानी की आवश्यकता

राज्य	जल की आवश्यकता (हें.–सें.मी.)
उपोष्णकटिबंधीय भारत	
बिहार	140
उत्तर प्रदेश	160–180
पंजाब	170–180
उष्णकटिबंधीय भारत	
आंध्र प्रदेश	160-170
तमिलनाडु	180
कर्नाटक	200-240
महाराष्ट्र	
गन्ना पौध (मौसमी)	250
गन्ना रोपें (मौसमी पूर्व)	300
पौधा गन्ना (अदसाली)	350
पेड़ी	300
मध्य प्रदेश	270

रूपांतरितः श्रीवास्तव और जौहरी (1979); वर्मा (2004)

दौरान नष्ट हो जाता है। सतही सिंचाई की विभिन्न विधियाँ हैं जिनका वर्णन नीचे दिया गया है:

पानी भरा/जल भराव सिंचाई

इस प्रकार की सिंचाई आमतौर पर समतल प्रणाली में लगाई गई फसल के लिए और मेड़ और नाली प्रणाली में लगाई गई फसल के बाद के चरणों में अपनाई जाती है। इस विधि में सिंचाई के पानी को खेत में कभी भी नियंत्रित नहीं किया जाता है और अनियंत्रित रूप से बहने दिया जाता है। इस विधि में प्रति सिंचाई सिंचाई जल की आवश्यकता अक्सर 100 मिलीलीटर से अधिक होती है। चूँकि पानी, कई घंटों तक खेत में जमा रहता है, अधिकांश पानी जड़ क्षेत्र से बाहर चला जाता है और परिणामस्वरूप बहुमूल्य सिंचाई जल की बर्बादी होती है। इसके अलावा हर बार जब सिंचाई की जाती है तो जड़ क्षेत्र की मिट्टी कुछ दिनों तक संतृप्त रहती है जो मिट्टी के मृदाश्वसन को प्रभावित करती है और परिणामस्वरूप फसल की वृद्धि को प्रभावित करती है। इस विधि को उन स्थानों पर कदापि नहीं अपनाना चाहिए, जहाँ सिंचाई जल की उपलब्धता सीमित है।

बेसिन सिंचाई की जाँच करें

इस विधि को सिंचाई की समतल *बेड* विधि के रूप में भी जाना जाता है। इस विधि में, एक समय में एक खेत में एक छोटे से बेड की सिंचाई करने के लिए सिंचाई जल को विनियमित और नियंत्रित किया जाता है। यह विधि जल भराव सिंचाई से कुछ हद तक बेहतर है। इस विधि को उन स्थानों पर भी कभी नहीं अपनाना चाहिए, जहां सिंचाई जल की उपलब्धता सीमित है।

कूँड एवं नाली विधि सिंचाई

यह गन्ने के लिए अपनाई जाने वाली सबसे आम सिंचाई विधि है। मुख्य *चैनल* से पानी को छोटी–छोटी या चौड़ी क्यारियों के बीच ढलान के साथ छोटे नालियों में मोड़ दिया जाता है। नाली विधि में पानी, मेड़ों और ऊपर मिट्टी को नम करने के लिए अच्छा कार्य करता है। यह एक सस्ता और आसान तरीका है, लेकिन इसके प्रयोग से कुछ मात्रा में हानि होती है। उचित सिंचाई कार्यक्रम अपनाकर और मिट्टी की उपलब्ध नमी धारण क्षमता के आधार पर प्रति सिंचाई पानी की मात्रा को विनियमित करके विधि में सुधार किया जा सकता है। सिंचाई जल के प्रवाह की दर के आधार पर एक समय में सिंचाई जल को निर्दिष्ट संख्या में नालियों तक निर्देशित करके सिंचाई जल की मात्रा को कम किया जा सकता है।

एक नाली छोड़कर *(स्किप फरो)*

यह नाली सिंचाई का एक संशोधन है जिसमें पंक्तियों के बीच रिक्त स्थान के उपयुक्त समायोजन द्वारा सिंचाई के लिए फसल की दो पंक्तियों को एक आम नाली के नीचे लाकर वैकल्पिक नाली को छोड़ दिया जाता है। फसल में कूँड़ों की संख्या वही रहती है जबकि सिंचित कूड़ों की संख्या कम हो जाती है। सिंचाई की *स्किप फ़रो विधि* अपनाने से सिंचाई जल की मात्रा में 30 से 36 प्रतिशत की बचत हो सकती है। हालांकि, गन्ने की पैदावार में 14 फीसदी की कमी भी दर्ज की गई है।

वैकल्पिक नाली सिंचाई

वैकल्पिक नाली सिंचाई, नाली सिंचाई का एक और संशोधन है, जिसमें चक्र में विषम और सम संख्या वाले नाली में सिंचाई की जाती है। इस विधि को अपनाने से सिंचाई जल की मात्रा में 41 प्रतिशत की बचत होती है। लेकिन गन्ने की उपज में 26 प्रतिशत तक की कमी आई।

उपसतही सिंचाई

इसे अन्यथा रिसाव सिंचाई के रूप में जाना जाता है। यह उन स्थानों पर उपयोगी विधि है जहां मिट्टी भारी है और जल स्तर ऊंचा (सतह के निकट) है। इस विधि में, सिंचाई के लिए या तो निश्चित गहराई और अंतराल पर मिट्टी में दबी हुई

छिद्रपूर्ण पाइपलाइनों या निश्चित गहराई या अंतराल पर खोदी गई नालियों का उपयोग किया जाता है। जब पाइपलाइनों या नालियों में पानी छोड़ा जाता है, तो पौध केशिका क्रिया के माध्यम से पानी सतह पर आ जाता है। जब सतह पर्याप्त रूप से गीली हो जाती है, तो सिंचाई के पानी की आपूर्ति रोक दी जा सकती है और पाइपलाइनों या नालियों में बचे अतिरिक्त पानी को उनके *आउटलेट* खोलकर निकाला जा सकता है। भारी वर्षा की अवधि में, अतिरिक्त पानी की निकासी के लिए पाइपलाइनों या नालियों का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रणाली का मुख्य लाभ यह है, कि अतिरिक्त पानी को आसानी से हटाया जा सकता है।

ओवरहेड/स्प्रिंकलर सिंचाई

इस विधि में, पानी को आसानी से पाइप लाइनों द्वारा सतह पर बिछाए गए पाइपों के माध्यम से ले जाया जाता है और एक प्रकार के नोजल द्वारा छिड़का जाता है। स्प्रिंकलर के विभिन्न आकार होते हैं, उदाहरण के लिए *बाइवोट स्प्रिंकलर, जेट स्प्रिंकलर* और *सेंटर–पिवोट स्प्रिंकलर* सिंचाई। मध्यम आकार के पौधे 10 से 15 मीटर के दायरे तक पानी छिड़क सकते हैं और उन्हें खेत में इस तरह से व्यवस्थित किया जा सकता है कि पानी का छिड़काव पूरे खेत में कमोबेश एक समान हो। *रेन गन* द्वारा 30 मीटर से अधिक के दायरे तक पानी छिड़का जा सकता हैं। इन्हें *सेमी सर्कल* में भी *फिक्स* और *ऑपरेट* किया जा सकता है। केवल एक *रेन गन* एक समय में 0.1 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र को *कवर* कर सकता है। यहां पानी का परिवहन और अनुप्रयोग हानियां कम हैं और लागू किए जाने वाले पानी की मात्रा को नियंत्रित करना आसान है। फसल की कम अवधि होने पर यह एक उपयोगी और व्यवहार्य विधि है। लेकिन बाद के चरणों में, जब फसल *कैनोपी* की ऊंचाई बढ़ जाती है, तो खेत में *पाइप* और *स्प्रिंकलर* को एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानांतरित करना बहुत मुश्किल हो जाता है और इसे अपनाने में व्यावहारिक समस्याएं पैदा होती हैं। सिंचाई की यह प्रणाली जड़ प्रणाली को मिट्टी की सतह परत तक सीमित कर देती है, जिससे गन्ने का जमाव हो जाता है। पानी का वितरण भी पूरे खेत में एक समान नहीं है। *सिस्टम* की प्रारंभिक लागत बहुत अधिक है और *सिस्टम* के संचालन के लिए ऊर्जा की आवश्यकता भी बहुत अधिक है।

ट्रिकल/ड्रिप सिंचाई

यह प्रणाली दबाव से पानी वाली ट्यूबों के एक *नेटवर्क* द्वारा पौधों को पानी की आपूर्ति को नियंत्रित करती है।

ड्रिप प्रणाली का मुख्य लाभ यह है कि सिंचाई के पानी को स्रोत से फसल के जड़ क्षेत्र तक *ट्यूबिंग* के जाल के माध्यम से बिना अधिक परिवहन हानि के पहुंचाया जाता है। साथ ही *ड्रिप* सिंचाई प्रणाली में सिंचाई जल की मात्रा को फसल की वास्तविक आवश्यकता के अनुसार आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है, अर्थात न अधिक और न ही कमी। *ड्रिप* सिंचाई के माध्यम से फसल के जड़ क्षेत्र में खेत की क्षमता के पास नमी लगभग निरंतर बनाए रखी जा सकती है। चूंकि परिवहन हानि व्यावहारिक रूप से समाप्त हो जाती है और सिंचाई का पानी सीधे फसल के जड़ क्षेत्र में, फसल के लिए आवश्यक स्तर पर डाला जाता है, इससे सिंचाई के पानी की मात्रा में बचत होती है। *ड्रिप* सिंचाई से फसल की पानी की आवश्यकता कम नहीं होती है। फसल की पानी की आवश्यकता जलवायु की वाष्पोत्सर्जन मांग का एक कार्य है।

किसी भी स्थान पर सिंचाई की विधि चाहे जो भी हो, फसल की वाष्पीकरण–वाष्पोत्सर्जन संबंधी आवश्यकता समान होती है। *ड्रिप* सिंचाई में सिंचाई जल की किफायत केवल परिवहन और अनुप्रयोग हानियों में कमी करके हासिल की जाती है।

ड्रिप सिंचाई प्रणाली के प्रकार

मुख्य रूप से *ड्रिप* सिंचाई प्रणालियाँ दो प्रकार की होती हैं। सतह और उप–सतह प्रणाली। सतह प्रणाली में, पाइपों को सतह पर बिछाया जाता है और पाइपों पर वांछित अंतराल पर *ड्रिपर्स* लगाए जाते हैं। इस प्रकार के *ड्रिपर्स* को *ऑनलाइन ड्रिपर्स* के रूप में जाना जाता है। इस प्रकार में, फिर से साधारण *ड्रिपर्स* और *सेल्फ फ्लशिंग* और दबाव क्षतिपूर्ति करने वाले *ड्रिपर्स* होते हैं। *ड्रिपर्स* अलग–अलग क्षमता पर उपलब्ध हैं, जैसे 2, 4, 6 या 8 लीटर प्रति घंटे। पाइप के बीच की दूरी, *ड्रिपर्स* के बीच की दूरी और *ड्रिपर्स* की क्षमता फसल की आवश्यकता के आधार पर भिन्न हो सकती है। यहां पानी मिट्टी की सतह पर टपकता है और सतह के वाष्पीकरण के माध्यम से पानी के नष्ट होने की संभावना रहती है।

उप–सतह प्रणाली में, पाइपों को फसल पंक्तियों के साथ वांछित गहराई पर मिट्टी में दबा दिया जाता है। इन पाइपों में उत्सर्जक अंदर लगे होते हैं और इन्हें *इनलाइन ड्रिपर्स* के रूप में जाना जाता है। इन्हें वांछित अंतराल पर स्थापित किया जाता है, जिससे पानी फसल के जड़ क्षेत्र में ही उत्सर्जित होता है और इस पानी की थोड़ी सी मात्रा ही सतह पर आती है। इसलिए, इस प्रणाली में, सतही वाष्पीकरण के माध्यम से पानी के नुकसान की संभावना बहुत कम है। उत्सर्जकों के साथ विभिन्न प्रकार के उप–सतह पाइप व्यावसायिक रूप से

उपलब्ध हैं।

ड्रिप सिंचाई का निर्धारण

ड्रिप सिंचाई में सिंचाई जल की अर्थव्यवस्था तभी हासिल की जा सकती है जब वास्तविक पानी की आवश्यकता की गणना दैनिक या दो दिनों में एक बार की जाती है और केवल तभी जब गणना की गई मात्रा लागू की जाती है। रोपण के समय, *ड्रिप* प्रणाली को लगभग 24 घंटे तक लगातार चलाया जाता है ताकि फसल के जड़ क्षेत्र में नमी को खेत की क्षमता तक लाया जा सके। इसके बाद, सिंचाई जल की मात्रा की गणना फसल गुणांक (केसी–kc मान) और जलवायु की वाष्पीकरणीय मांग (पैन–वाष्पीकरण) के आधार पर की जानी चाहिए। मध्यम आर्द्रता और हवा के वेग वाले स्थान के लिए अलग–अलग उम्र में गन्ने के लिए केसी मान तालिका 3 में दिए गए हैं। प्रतिदिन पैन वाष्पीकरण डेटा प्राप्त करना कठिन हो सकता है। इसके लिए, जिस जिले में फार्म स्थित है, उसका औसत मासिक पैन–वाष्पीकरण (पीईटी) मान एकत्र किया जा सकता है और पैन वाष्पीकरण के लिए प्रतिस्थापित किया जा सकता है। रोपण से लेकर कटाई तक प्रत्येक दिन, कितने समय के लिए *सिस्टम* को संचालित किया जाना चाहिए, इसके लिए एक *चार्ट* तैयार किया जा सकता है। जब भी बारिश होती है, तो किसान को अपने विवेक का उपयोग करना पड़ता है और कुछ दिनों के लिए सिंचाई रोक सकते हैं।

किसी दिए गए दिन सिंचित किए जाने वाले पानी की मात्रा की गणना नीचे दिए गए सूत्र का उपयोग करके की जा सकती है

क्यू = ए. × केसी × पीई

जहाँ,

क्यू = किसी दिए गए दिन सिंचित किए जाने वाले पानी की मात्रा (लीटर में)

तालिका 3. अलग–अलग उम्र में गन्ने के लिए फसल गुणांक मान *(केसी)*

फसल की आयु (महीनो में)	केसी मान (kc)
0 - 1	0.55
1 - 2	0.80
2 - 2.5	0.90
2.5 - 4	1.00
4 - 10	1.05
10 - 11	0.80
11 - 12	0.60

ए. = खेत का क्षेत्रफल वर्ग मीटर में

केसी = फसल की उम्र के आधार पर फसल गुणांक मान

पीई = मिलीमीटर में दिन के लिए पैन वाष्पीकरण

प्रारंभिक वर्षों के दौरान, उष्णकटिबंधीय परिस्थितियों में गन्ने की खेती में इसकी व्यवहार्यता और प्रभावकारिता का पता लगाने के लिए *ड्रिप* सिंचाई पर काम शुरू किया गया था। *ड्रिप* सिंचाई के अलावा *स्किप फ़रो* सिंचाई का भी प्रयास किया गया। प्रारंभिक प्रयोग में, सामान्य सिंचाई की तुलना में *ड्रिप* सिंचाई विधि में 50 प्रतिशत पानी की बचत का लक्ष्य रखा गया था। वास्तव में बचाए गए पानी की मात्रा 46% थी। *स्किप फ़रो* में 34% पानी की बचत हुई। हालाँकि, सामान्य *फ़रो* सिंचाई प्रणाली की तुलना में दोनों प्रणालियों में उपज में कमी आई। उपज में कमी के लिए निम्नलिखित कारणों को जिम्मेदार ठहराया गया: 1. फसल के विकास के बाद के चरणों में पानी की आवश्यकता दी गई मात्रा से अधिक हो सकती है, और 2. *ड्रिप* सिंचित भूखंडों में दीमक का भारी हमला। पहले प्रयोग मई देखी गई उपज में कमी को दूर करने के लिए छह महीने बाद अधिक मात्रा में पानी मिलाया गया। दीमक के हमले को रोकने के लिए, क्लोरोपाइरीफॉस को रोपण के समय और 90 दिनों पर भी लगाया गया था।

ड्रिप सिंचाई पर प्रयोग 1977–78 के दौरान पांच सिंचाई विधियों के साथ जारी रखा गया था। (1) सामान्य सिंचाई (पारंपरिक विधि), (2) *ड्रिप* सिंचाई (फ़रो विधि), (3) *ड्रिप* सिंचाई (समतल विधि), (4) स्किप फ़रो सिंचाई और (5) वैकल्पिक फ़रो सिंचाई। अवधि के दौरान प्राप्त सिंचाई की मात्रा और उपज और गुणवत्ता विशेषताओं का विवरण तालिका 4 में प्रस्तुत किया गया है। *ड्रिप, स्किप फ़रो* और वैकल्पिक *फ़रो* प्रणाली में सामान्य सिंचाई की तुलना में पानी की बचत 40.6 प्रतिशत, 30.7 प्रतिशत और 42.3 प्रतिशत थी। क्रमशः तुलना में आज़माई गई दोनों *ड्रिप* सिंचाई प्रणालियों में उपज में कोई कमी नहीं आई सामान्य सिंचाई. *ड्रिप सिस्टम* के तहत सीसीएस % में थोड़ा सुधार देखा गया। सामान्य सिंचाई और *ड्रिप–फ़रो* विधि के बीच उपज में कोई अंतर नहीं था। हालाँकि, *ड्रिप फ़्लैट* विधि से सामान्य विधि की तुलना में लगभग 13 टन अधिक गन्ने की उपज दर्ज की गई। *ड्रिप* प्रणालियों ने सामान्य प्रणाली की तुलना में अधिक सीसीएस उपज दर्ज की। हालाँकि, *स्किप फ़रो* और वैकल्पिक *फ़रो सिस्टम* के तहत उपज में कमी आई।

ड्रिप सिस्टम पर आगे के प्रयोगों से पता चला कि पारंपरिक *फ़रो* सिंचाई की तुलना में *ड्रिप* सिंचाई में उच्च जल

उपयोग दक्षता के साथ लगभग 44 प्रतिशत पानी की बचत होती है।

एक पौधे और दो पेड़ियों के औसत परिणाम ने *ड्रिप सिस्टम* को नियोजित करके सिंचाई के पानी में लगभग 30 प्रतिशत की बचत का संकेत दिया। दबाव क्षतिपूर्ति करने वाले *ड्रिपर्स* के साथ सतह ड्रिप को लगभग 15 टन/हेक्टेयर अधिक गन्ना उपज देने के लिए बेहतर पाया गया (तालिका 5)।

कुछ स्थानों पर तो उपज में 10 से 30 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की गई है। कुछ अन्य स्थानों पर पारंपरिक कुंड सिंचाई की तुलना में ड्रिप सिंचित भूखंड की उपज में व्यावहारिक रूप से कोई वृद्धि नहीं हुई। सामान्य तौर पर, यदि सिंचाई के पानी की गुणवत्ता खराब है, तो ड्रिप सिंचित गन्ने की उपज पारंपरिक फ़रो सिंचाई प्रणाली के तहत प्राप्त उपज से अधिक नहीं होती है। खराब गुणवत्ता वाले सिंचाई जल के कारण *ड्रिपर्स/एमिटर* में बार–बार रुकावट आती है, जिसके परिणामस्वरूप फसल असमान रूप से खड़ी होती है और उपज खराब होती है। पानी की कमी वाले स्थानों पर *ड्रिप* सिंचाई उपयोगी है। लेकिन ऐसी जगहों पर पानी की गुणवत्ता हमेशा खराब रहती है। इसलिए, जब तक *क्लॉगिंग* की समस्या का ठीक से प्रबंधन नहीं किया जाता, *ड्रिप* सिंचाई फायदेमंद नहीं हो सकती है। लवब जमा होने के कारण *ड्रिपर* में रुकावट को नियमित *एसिड* उपचार द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

गन्ने में जल उपयोग दक्षता की दिशा में अनुसंधान की हमारी परिप्रेक्ष्य योजनाएँ

विभिन्न नई सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों पर काम करना और संबंधित समस्याओं का अध्ययन करना और सिंचाई और *फर्टिगेशन* के लागत प्रभावी तरीकों को विकसित करना, जो उत्पादकता को बनाए रख सकते हैं और सिंचाई के पानी को किफायती बना सकते हैं।

फर्टिगेशनः फर्टिगेशन एक सिंचाई प्रणाली के माध्यम से उर्वरक का अनुप्रयोग है। सूक्ष्म सिंचाई और *फर्टिगेशन* पोषक तत्वों और पानी के सटीक नियंत्रण का लाभ प्रदान करते हैं, जो फसलों के विकास को नियंत्रित करने वाले मुख्य *इनपुट* हैं।

फर्टिगेशन की आवश्यकताः *फर्टिगेशन* से पानी और उर्वरक की आवश्यकता कम हो जाती है। उर्वरक की खपत में कमी से विदेशी मुद्रा को कम करने में मदद मिलती है। तीन मुख्य कारक हैं:

- पानी और उर्वरक उपयोग दक्षता को अधिकतम करना
  - पानी और पोषक तत्वों को जड़ क्षेत्र तक सटीक और समान रूप से पहुंचाता है।
  - पोषक तत्वों की उपलब्धता और ग्रहण को बढ़ाता है।
  - लीचिंग से पोषक तत्वों की हानि कम हो जाती है।
  - पानी और पोषक तत्व उपयोग दक्षता को अधिकतम करता है।
- फसल और मिट्टी की उत्पादकता को अधिकतम करना
  - गुणवत्तापूर्ण उपज के साथ अधिक पैदावार

तालिका 4: अंकुरण, उपज और गुणवत्ता विशेषताओं पर डेटा के साथ सिंचाई प्रणालियों का विवरण

उपचार	सिंचाई की मात्रा (सें.मी.)	अवधि के दौरान वर्षा (सें.मी.)	45 दिनों पर अंकुरण प्रतिशत	सीसीएस (%)	उपज (टन/हेक्टेयर)	सीसीएस (टन/हेक्टेयर)
सामान्य सिंचाई	107.50	92.57	71.16	10.49	94.23	9.81
ड्रिप सिंचाई नाली विधि	63.90	92.57	69.55	11.40	92.66	10.58
ड्रिप सिंचाई समतल विधि	63.90	92.57	63.33	10.82	107.12	121.00
नाली सिंचाई (एकनाली छोड़कर)	74.50	92.57	65.55	9.89	73.67	7.11
वैकल्पिक नाली सिंचाई	60.75	92.57	71.00	11.13	77.57	8.62

(वार्षिक रिपोर्ट, एसबीआई)

तालिका 5. गन्ने की उपज और गुणवत्ता पर सिंचाई विधियों का प्रभाव (2 वर्ष का औसत)

क्र.सं.	उपचार	गन्ने की उपज (टन/हेक्टेयर)	वाणिज्यिक गन्ना चीनी (%)	चीनी उपज (टन/हेक्टेयर)			
		पौध	पेड़ी	पौध	पेड़ी	पौध	पेड़ी
1	*फ़रो*, पारंपरिक	94.7	59.5	11.62	11.98	11.02	7.11
2	फ़रो, आईडब्ल्यू/सीपीई	67.9	34.8	11.18	12.00	7.69	4.17
3	बाइवॉल, 60/120 सें.मी.	98.0	59.6	11.44	12.37	11.21	7.38
4	बाइवॉल, 40/140 सें.मी.	98.1	56.4	11.49	12.06	11.32	6.81
5	सतही टपकन, 40/140 सें.मी.	90.1	47.4	11.57	12.12	10.44	5.74
6	मानक त्रुटि	4.17	3.11	0.23	0.16	0.36	0.27
7	क्रान्तिक अन्तर (पी = 0.05)	8.60	6.43	NS	NS	0.75	0.57

– खड़ी ढलान वाली और सीमांत भूमि को खेती योग्य बनाया जा सकता है

- उत्पादन लागत को न्यूनतम करना – श्रम शुल्क, पोषक तत्व और पानी की बचत।

सिफारिशें

- खेत स्तर पर वर्ष के विभिन्न महीनों में सिंचाई जल की उपलब्धता की जांच की जानी चाहिए तथा जिस महीने में उपलब्धता सबसे कम हो उसे चिह्नित किया जाना चाहिए।
- जल भराव विधि सिंचाई से न केवल कीमती पानी की बर्बादी होती है बल्कि फसल की उत्पादकता भी कम हो जाती है। इसलिए जल भराव विधि सिंचाई से बचने के प्रयास किये जाने चाहिए।
- *फ़रो* सिंचाई किसानों के लिए उपलब्ध सर्वोत्तम विधि है, जिसे अपनाना आसान है और पानी की बर्बादी को कम किया जा सकता है। लंबे कुंड में गन्ना बोना और *सर्ज* सिंचाई अपनाना लाभप्रद होगा। स्रोत से *फील्ड हेड* तक पानी का परिवहन यथासंभव पाइपलाइनों के माध्यम से ही किया जाना चाहिए।
- पानी की कमी के समय, वैकल्पिक कूँड सिंचाई को अपनाया जा सकता है। जब पानी की उपलब्धता अनुकूल हो जाती है तो किसान सामान्य नाली सिंचाई पर वापस लौट सकता है।
- सूखे की अवधि के दौरान पाक्षिक अंतराल पर 2.5 प्रतिशत यूरिया और 2.5 प्रतिशत म्यूरेट ऑफ पोटाश युक्त घोल का *मल्चिंग* और पत्तियों पर छिड़काव जैसी सूखा प्रबंधन प्रथाएं सूखे के दुष्प्रभावों से निपटने के लिए की जा सकती हैं।
- *फर्टिगेशन* के साथ *ड्रिप* सिंचाई सिंचाई के पानी और उर्वरकों को बचाने के लिए फायदेमंद है, जिससे गन्ने की उपज में वृद्धि होती है। इसके अलावा, सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली को आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनाने के लिए रोपण की विधि (युग्मित पंक्ति/गड्ढे विधि/*ट्रेन्च* विधि) और फसल ज्यामिति जैसी उन्नत तकनीकों के माध्यम से उत्पादन लागत को कम करने और गन्ने की उपज में सुधार करने की संभावनाओं का पता लगाया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

पानी की बढ़ती कमी और बार–बार पड़ने वाले सूखे तथा अन्य फसलों और घरेलू और औद्योगिक उपयोगकर्ताओं से प्रतिस्पर्धा को देखते हुए, गन्ने की खेती में जल प्रबंधन में सुधार की तत्काल आवश्यकता है। गन्ने की जल उपयोग दक्षता और उत्पादकता को आने वाले वर्षों और दशकों में बड़े पैमाने पर अपनाने की आवश्यकता है। ड्रिप प्रणाली की लागत को कम करने के लिए किए गए प्रयासों से कृषक समुदाय के बड़े वर्ग द्वारा इसे अपनाने में काफी मदद मिलेगी। *सिस्टम* की लंबी उम्र, गुणवत्तापूर्ण पुर्जों और घटकों की आसान उपलब्धता से सिस्टम को लोकप्रिय बनाने में मदद मिलेगी। गन्ना रोपण *पैटर्न* में परिवर्तन जैसे जोड़ी पंक्ति रोपण, *रिंग पिट* विधि रोपण और *ड्रिप* प्रणाली की सफलता के लिए पेड़ी दर पेड़ी *(मल्टी–रैटूनिंग)* की आवश्यकता है।

इस प्रकार देश में सिंचाई जल की भारी कमी और भविष्य में भी कमी को देखते हुए, यह आवश्यक है कि सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों को लोकप्रिय बनाया जाए क्योंकि वे पानी की बचत करने और उत्पादकता बनाए रखने का वादा करती हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने में ड्रिप सिंचाई विधिः एक क्रांतिकारी तकनीक

संजय कुमार यादव, एस.के. शुक्ल, ए.पी. द्विवेदी, विश्वनाथ प्रताप यादव एवं दिनेश सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

परिचय

गन्ना भारत की प्रमुख नकदी फसलों में से एक है, और इसका उत्पादन लाखों किसानों की आजीविका का आधार है। यह फसल न केवल चीनी उद्योग के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि देश के ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के अवसर भी प्रदान करती है। हालांकि, गन्ने की खेती में पानी की अत्यधिक आवश्यकता होती है, जो कई बार जल संकट और पर्यावरणीय समस्याओं का कारण बनती है। जलवायु परिवर्तन, कम वर्षा और बढ़ती जल की आवश्यकता, गन्ने के किसानों के लिए एक बड़ी चुनौती बन चुकी है। इस समस्या से निपटने के लिए, *ड्रिप इरिगेशन* एक महत्वपूर्ण और प्रभावी समाधान के रूप में सामने आया है। यह तकनीक गन्ने की खेती में जल प्रबंधन को बेहतर बनाने, उत्पादकता बढ़ाने और संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने में मदद करती है।

ड्रिप इरिगेशन क्या है?

ड्रिप इरिगेशन एक उन्नत सिंचाई तकनीक है, जिसमें पानी को सीधे पौधों की जड़ों तक बूँद–बूँद करके पहुँचाया जाता है। यह प्रणाली विशेष रूप से उन फसलों के लिए उपयुक्त है जिनकी पानी की आवश्यकता नियंत्रित और सटीक रूप से पूरी की जानी चाहिए। गन्ने जैसी फसलों में, जहाँ पानी की खपत अधिक होती है, *ड्रिप इरिगेशन* विधि से पानी का सही उपयोग किया जाता है और जल की बर्बादी को कम किया जाता है। इस प्रणाली में मुख्य रूप से पाइप, नलिकाएँ और ड्रिपर का उपयोग होता है, जो खेत के प्रत्येक पौधे के पास पानी पहुँचाते हैं। पानी की यह आपूर्ति नियंत्रित होती है, जिससे केवल आवश्यकता के अनुसार पानी दिया जाता है। इससे पानी की अधिकता और कमी दोनों की समस्या से बचा जा सकता है।

गन्ने में *ड्रिप इरिगेशन* के लाभ

गन्ने की खेती में *ड्रिप इरिगेशन* के कई फायदे हैं, जो न केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि किसानों की आर्थिक स्थिति को भी मजबूत करते हैं।

- **जल का प्रभावी उपयोगः** गन्ने की फसल को अधिक पानी की आवश्यकता होती है, और पारंपरिक सिंचाई विधियाँ पानी की अत्यधिक बर्बादी का कारण बन सकती हैं। *ड्रिप इरिगेशन* में पानी सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचता है, जिससे पानी का व्यर्थ बहाव कम होता है और जल की बचत होती है। इससे गन्ने के किसानों को पानी की कमी से बचने में मदद मिलती है, विशेषकर ऐसे क्षेत्रों में जहाँ जल संसाधन सीमित हैं।
- **फसल की उपज में वृद्धिः** जब गन्ने को नियमित रूप से, लेकिन नियंत्रित तरीके से पानी मिलता है, तो इसकी जड़ें स्वस्थ रहती हैं और पौधों की वृद्धि में मदद मिलती है। इसके परिणामस्वरूप, उपज में वृद्धि होती है और गन्ने की गुणवत्ता भी बेहतर होती है।
- **खरपतवारों पर नियंत्रणः** *ड्रिप इरिगेशन* के दौरान पानी केवल पौधों तक पहुँचता है, जिससे खेत के अन्य हिस्सों में पानी नहीं फैलता और खरपतवारों को पानी की कमी हो जाती है। इस प्रकार, खरपतवारों की वृद्धि नियंत्रित होती है और किसानों को कम समय और मेहनत में खरपतवार नष्ट करने में मदद मिलती है।
- **सिंचाई का समय और श्रम की बचतः** पारंपरिक सिंचाई विधियों में समय और श्रम की अधिक आवश्यकता होती है, जबकि *ड्रिप इरिगेशन* में एक बार *सिस्टम* स्थापित हो जाने के बाद, सिंचाई प्रक्रिया स्वचालित और नियंत्रित होती है। इससे किसानों की मेहनत और समय की बचत होती है।
- **मिट्टी की संरचना में सुधारः** पारंपरिक सिंचाई में पानी की अधिकता से मिट्टी में क्षरण हो सकता है, जबकि *ड्रिप इरिगेशन* से मिट्टी की संरचना बनी रहती है और जल प्रवाह संतुलित होता है। इससे मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी नहीं होती और भूमि का स्वास्थ्य बेहतर रहता है।

ड्रिप इरिगेशन प्रणाली की स्थापना

ड्रिप इरिगेशन प्रणाली की स्थापना कुछ विशेष कदमों के माध्यम से की जाती है। यह प्रक्रिया किसानों के लिए प्रारंभ

में थोड़ी महंगी हो सकती है, लेकिन इसके लाभ दीर्घकालिक रूप से अधिक होते हैं।

- **भूमि की तैयारी:** सबसे पहले, खेत की समतलता का ध्यान रखा जाता है। यदि भूमि में कोई असमानताएँ हैं, तो उन्हें ठीक किया जाता है ताकि पानी का प्रवाह एकसमान हो। खेत में नालियाँ भी बनाई जाती हैं, ताकि पानी का बहाव सही दिशा में हो सके।
- **पाइपलाइन और ड्रिपलाइन का डिजाइन:** *ड्रिप इरिगेशन* में *पाइपलाइन* और *ड्रिपलाइन* की सही स्थापना महत्वपूर्ण होती है। इन *पाइपलाइनों* में पानी का प्रवाह नियंत्रित किया जाता है। *ड्रिपलाइन* को खेत में हर पौधे के पास रखा जाता है, ताकि पानी सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँच सके।
- **फिल्टर और पंप सिस्टम:** पानी की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए *फिल्टर* का उपयोग किया जाता है, जिससे पानी में कोई अवरोध न हो। *पंप सिस्टम* का चयन भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पानी की आपूर्ति की गति और दबाव को नियंत्रित करता है।
- **नियंत्रण और मॉनिटरिंग:** *ड्रिप इरिगेशन* सिस्टम की स्थापना के बाद, इसका नियमित रूप से परीक्षण और *मॉनिटरिंग* करना आवश्यक होता है। किसानों को यह सुनिश्चित करना होता है कि *सिस्टम* में कोई गड़बड़ी न हो और पानी का प्रवाह सही ढंग से हो रहा हो।

ड्रिप इरिगेशन का आर्थिक पक्ष

ड्रिप इरिगेशन प्रणाली की स्थापना की शुरुआत में कुछ निवेश की आवश्यकता होती है, जैसे *पाइपलाइनों, पंप* और *फिल्टर* की लागत। हालांकि, इसके दीर्घकालिक लाभ इस निवेश को उचित ठहराते हैं। इस प्रणाली से जल, उर्वरक, ऊर्जा और श्रम की बचत होती है, जिससे कुल उत्पादन लागत में कमी आती है और किसानों की आय में वृद्धि होती है। भारत सरकार और राज्य सरकारें भी *ड्रिप इरिगेशन* को बढ़ावा देने के लिए कई प्रकार की *सब्सिडी* और वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं, जिससे किसानों को इस प्रणाली को अपनाने में सहायता मिलती है।

निष्कर्ष

गन्ने की खेती में *ड्रिप इरिगेशन* एक अत्यधिक प्रभावी और पर्यावरण–संवेदनशील तकनीक है। यह न केवल जल की बचत करता है, बल्कि फसल की गुणवत्ता और उपज में सुधार करता है। इस प्रणाली को अपनाकर किसान अपनी फसल की उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग कर सकते हैं। हालांकि, इसकी स्थापना में प्रारंभिक खर्च अधिक हो सकता है, लेकिन इसके दीर्घकालिक लाभ किसान की आय में वृद्धि और उत्पादन में सुधार लाते हैं। यदि सही तरीके से स्थापित और संचालित किया जाए, तो *ड्रिप इरिगेशन* गन्ने की खेती को एक नई दिशा दे सकता है, जिससे कृषि क्षेत्र में क्रांतिकारी बदलाव संभव है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

उत्तर प्रदेश में गन्ने की उत्पादन तकनीकी

विश्वनाथ प्रताप यादव, पलाश कुमार कौरव, संजय कुमार यादव एवं आदित्य प्रकाश द्विवेदी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

उत्तर प्रदेश, जो भारत में गन्ने का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है, अपनी उन्नत कृषि तकनीकों और आधुनिक कृषि प्रबंधन से न केवल गन्ने के उत्पादन में वृद्धि कर रहा है, बल्कि किसानों के जीवन में भी बदलाव ला रहा है। यहाँ की जलवायु और भूमि गन्ने की खेती के लिए उपयुक्त हैं, लेकिन उत्पादन में वृद्धि और गुणवत्ता सुधारने के लिए नई तकनीकों को अपनाना बेहद आवश्यक है। संस्तुत उन्नत गन्ना किस्मों एवं उन्नत उत्पादन तकनीकों को अपनाकर गन्ने की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है, जिससे गन्ना किसानों को अधिक लाभ मिल सके। गन्ना उत्पादन बढ़ाने की उन्नत कृषि तकनीकों का वर्णन आगे किया गया है जिसको किसान अपने खेतों में अपनाकर उत्पादन बढ़ाने के साथ गन्ना खेती से अधिक लाभ भी अर्जित कर सकते हैं।

खेत की तैयारी

उचित जल निकास वाले खेत का चयन करना गन्ने की पैदावार हेतु उचित माना जाता है। आमतौर पर बलुई दोमट से दोमट और भारी मिट्टी वाले खेत में गन्ने की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। गन्ना बुआई से पहले मिट्टी में पर्याप्त नमी के लिए पलेवा करें। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 3–4 जुताई *कल्टीवेटर* से करके मिट्टी को गुरगुरी तथा समतल कर लें। अन्तिम जुताई के समय यदि सम्भव हो तो गोबर/कम्पोस्ट/प्रेसमड की खाद 10–15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिला दें। अन्तिम जुताई के बाद पाटा लगाए।

बुवाई का समय

उत्तर प्रदेश में मौसम के उतार–चढ़ाव से निपटने के लिए जलवायु स्मार्ट तकनीकों का उपयोग बढ़ रहा है। इसमें, किसानों को मौसम के पूर्वानुमान से संबंधित जानकारी दी जाती है, ताकि वे अपने फसलों की देखभाल सही समय पर कर सकें। गन्ने के उत्तम जमाव हेतु बुवाई के समय वातावरण का तापमान 20 से 30 डिग्री सेन्टीग्रेड होना चाहिए। यह तापमान उत्तर प्रदेश में 15 फरवरी से मार्च तक तथा अक्टूबर में रहता है जिसके आधार पर गन्ने की खेती को दो समय में (शरदकालीन व बसंतकालीन) सफलतापूर्वक लगाया जाता है। शरद कालीन गन्ने की बुवाई का उचित समय 25 सितम्बर से 31 अक्टूबर के मध्य उचित रहता है। उत्तर प्रदेश में सबसे अधिक क्षेत्रफल में गन्ने की बुवाई बसंत में की जाती है। इसका उचित समय 01 फरवरी से 31 मार्च के मध्य होता है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश के पश्चिम क्षेत्रों में मुख्य तौर पर गन्ने की खेती गेहूं की फसल के कटाई के बाद की जाती है जिसे पछेती गन्ना भी बोला जाता है। इसकी पैदावार कम होती है। किसान गन्ने की बुवाई 15 अप्रैल से 31 मई (गेहूँ की कटाई के बाद) के मध्य खेत तैयार करके करते है।

बीज उपचार एवं बुवाई (प्लांटिंग)

स्वस्थ एवं रोग रहित बीज गन्ने के अधिक उत्पादन हेतु प्रयोग करना चाहिए। गन्ने का बीज प्रमाणित संस्थान से लेकर गन्ने के 3–3 आँख के टुकड़े किसी धारदार गड़ासे से काटकर बावस्टीन दवा की 200 ग्राम मात्रा को 100 ली. पानी में घोलकर 30 मिनट तक उपचारित करके बोएँ। दीमक व अंकुर बेधक के नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल का 500 मिलीलीटर या क्लोरेन्ट्रानिलिप्रॉल 18.5 एससी का 325 मिलीलीटर 1,600 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ना बुवाई के बाद कूँड/नाली में हजारे की सहायता से छिड़काव कर ढक दें। गन्ने की मोटाई एवं पोरियों की लम्बाई के अनुसार 60–80 कुन्टल बीज गन्ना प्रति हे. की दर से बुआई करनी चाहिए। आधुनिक कृषि यंत्रों के माध्यम दो आँख वाले टुकड़ों को बुवाई के लिए प्रयोग किया जा सकता है जिससे बीज की बचत होती है।

पंक्ति से पंक्ति की दूरी एवं गहराई

1. शरदकालः 90–120 सेंटीमीटर
2. बसन्त कालः 75–90 सेंटीमीटर
3. विलम्बित बुवाईः 60–75 सेंटीमीटर
4. कूँड की गहराईः 10–15 सेंटीमीटर

गन्ने में उर्वरक का प्रयोग

गन्ने की उचित उपज हेतु नत्रजन 150, फास्फोरस 60, पोटास 60 कि.ग्रा./हे. की दर से डालें। नत्रजन की 1/3 मात्रा फास्फोरस एवं पोटास की पूरी मात्रा बुआई के समय नाली में डालकर अच्छी तरह से मिट्टी में मिला दें। नत्रजन की शेष 2/3 मात्रा को दो बराबर–बराबर भागों में कल्ले निकलते समय अप्रैल से जून के अन्त तक उचित मृदा नमी अवस्था पर गन्ने की पंक्तियों के किनारे–किनारे प्रयोग कर गुड़ाई करें। पेड़ी गन्ने हेतु नत्रजन की 25 प्रतिशत अतिरिक्त मात्रा देनी चाहिए।

सिंचाई व खरपतवार नियंत्रण

गन्ने में सिंचाई गन्ने की बुवाई का समय, मिट्टी का प्रकार तथा जलवायु के आधार पर निर्भर करती है। 6–8 सिंचाइयाँ वर्षा ऋतु के पूर्व 10–15 दिन के अन्तराल पर मौसम की दशा के अनुसार तथा 1–2 सिंचाइयाँ वर्षा ऋतु के बाद करें। श्रमिकों के अभाव में खरपतवारों के नियंत्रण हेतु एट्राजीन (50 प्रतिशत डब्लू.पी.) की 2.0 कि.ग्रा. दवा को 1,000 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ना बुआई के बाद तीन दिनों के अन्दर खेत में सतह पर नमी बने रहने तक छिड़काव करें। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु 2.4–डी. सोडियम साल्ट दवा की 1.00 किग्रा सक्रिय तत्व मात्रा को 1,000 ली. पानी में घोल बनाकर गन्ना बुवाई के 60–75 दिन बाद छिड़काव करें। खरपतवार के नियंत्रण हेतु गन्ने की सूखी पत्तियों को गन्ने की दो पंक्ति के मध्य बिछाएं जिससे खरपतवारों का आपतन कम होता है, मृदा स्वास्थ्य में सुधार के साथ मृदा नमी भी संरक्षित रहती है।

गन्ने के साथ सहफसली खेती

पंक्ति से पंक्ति की दूरी अधिक होने के कारण शरदकालीन गन्ने के साथ मटर, आलू, शलजम, गाजर, फूल गोभी, पात–गोभी, गाँठ गोभी, मूली, राई, लाही, मसूर, राजमा, चना, गेहूं, मसाले वाली फसलों की सहफसली खेती सफलतापूर्वक करके प्रति इकाई क्षेत्रफल एवं समय में अतिरिक्त आय प्राप्त करें।

फसल सुरक्षा

गन्ने में रोगों के प्रबंधन हेतु रोग–रोधी गन्ना प्रजातियों की ही बुवाई करनी चाहिए। यदि किसी खेत के गन्ने में उकठा, कंडुआ, लाल सड़न आदि में से किसी रोग का आपतन हो जाता है तो उक्त प्रजाति को बदल दें और उस खेत में उस वर्ष गन्ना न लेकर हरी खाद वाली फसल उगाएं। *ट्राइकोडर्मा* नामक फफूँद का प्रयोग करके गन्ने में लगने वाले रोगों के प्रकोप को कम किया जा सकता है। मार्च से मई तक प्ररोह तथा चोटी बेधक कीटों के अण्ड समूहों व ग्रसित प्ररोहों को निकालकर नष्ट करते रहें। यदि प्रकोप अधिक हो तो क्लोरेन्ट्रानिलिप्रॉल 18.5 एस सी के 325 मिलीलीटर को 1,000 लीटर पानी में घोलकर ड्रेचिंग करें। चोटी बेधक कीट के जैविक नियंत्रण हेतु अप्रैल माह में *ट्राइकोग्रामा जैपोनिकम* के 2 *ट्राइकोकार्ड* (40 *स्ट्रिप्स* में 50,000 अण्डे) साप्ताहिक अन्तराल पर गन्ने की फसल में प्रयोग करें। चोटी बेधक कीट के रासायनिक नियंत्रण हेतु जून माह के दूसरे सप्ताह के बाद जब भी माँथ (सफेद रंग का कीट) दिखाई दे, तब कार्बोफ्यूरान 3 जी के 33 कि.ग्रा./हे. दाने पौधों की जड़ों के समीप भूमि में डालें। ध्यान रहे कि खेत में मृदा नमी प्रचुर हो। बुरकाव प्रातः काल ही करें। जुलाई से अक्टूबर तक तना बेधक, पोरी बेधक, प्लासी बेधक, गुरदासपुर बेधक आदि कीटों के जैविक नियंत्रण हेतु *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* के 2 *ट्राइकोकार्ड* (40) *स्ट्रिप्स* में 50,000 अण्डे) प्रति हे. 10 दिन के अन्तराल पर गन्ने की फसल में छोड़ें। पायरिला कीट के नियंत्रण हेतु *एपिरीकेनिया मिलानेल्यूका* परजीवी कीट के 4–5 लाख अण्डे तथा 4–5 हजार ककून प्रति हे. खेत में छोड़े।

मिट्टी चढ़ाना व बंधाई करना

समय पर लगाई गई फसल जून–जुलाई में मिट्टी चढ़ाएं जिससे फसल के गिरने में कमी होती है। आवश्यकतानुसार गन्ने की फसल की प्रथम बंधाई जुलाई के अन्तिम सप्ताह में गन्नों के थानों की करें। तत्पश्चात द्वितीय बंधाई अगस्त से सितम्बर के प्रथम सप्ताह तक आमने–सामने के थानों को मिलाकर कैंचीनुमा बंधाई करें।

फसल की कटाई एवं कटाई उपरान्त प्रबंधन

गन्ना फसल की बुवाई का समय, किस्म एवं उसकी आयु व परिपक्वता के अनुसार भूमि की सतह से कटाई करें। अधिक परता सुनिश्चित करने के लिए फसल की कटाई कम से कम 10 माह के बाद करनी चाहिए। कटाई के 24 घंटे के अन्दर साफ गन्ना पेराई के लिए चीनी मिल/गुड़ इकाई भेजें। गन्ना भेजने में विलम्ब होने की दशा में गन्ना ढेर बनाकर सूखी पत्ती से ढक कर पानी का छिड़काव कर दें।

गन्ने की उपज

गन्ने की अच्छी फसल की पैदावार लगभग 90–100 टन आसानी से प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्ष

उत्तर प्रदेश में गन्ने के उत्पादन में सुधार के लिए जो तकनीकें अपनाई जा रही हैं, इन तकनीकों के माध्यम से न केवल गन्ने की पैदावार में वृद्धि होगी, बल्कि कृषि में लागत में भी कमी आएगी। अगर इन तकनीकों को सही तरीके से लागू किया जाता है, तो आने वाले समय में उत्तर प्रदेश गन्ने का उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में अग्रणी बना रहेगा।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना उत्पादन की उन्नतशील कृषि तकनीक

हिमांशु पाण्डेय[1], बरसाती लाल[1], कामता प्रसाद[1], जय प्रकाश वर्मा[1], राहुल कुमार रॉय[2], मुस्तफा हुसैन[3] एवं धीरज यादव[4]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
[2]बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा
[3]इंटीग्रल विश्वविद्यालय, लखनऊ
[4]महर्षि सूचना एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

गन्ना फसल भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में अपना महत्वपूर्ण योगदान अदा कर रही है। सम्पूर्ण देश में वर्ष 2022–23 के आंकड़ों के अनुसार लगभग 58.83 लाख हेक्टेयर भूमि पर 84.01 टन प्रति हेक्टेयर औसत उपज की दर से लगभग 494.22 मिलियन टन गन्ना उत्पादन किया गया था तथा गन्ना उद्योग से लगभग 60 लाख कृषक परिवार और 5 लाख से अधिक कुशल व अकुशल श्रमिकों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार मिल रहा है। देश भर में चीनी मिलों में 10.36 प्रतिशत से अधिक औसत शर्करा परता के हिसाब से लगभग 38 मिलियन टन चीनी का उत्पादन किया जा रहा है। देश में उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, बिहार, गुजरात, हरियाणा, इत्यादि प्रमुख गन्ना उत्पादक प्रदेश हैं। अब तो गन्ना से जैव ईधनः ईथनॉल भी बनाया जा रहा है जो पर्यावरण मैत्री ईधन है तथा ऐसी संभावना व्यक्त की जा रही है कि आने वाले वर्षों में गन्ना से बनाया गया ईथनॉल ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने में सक्षम होगा।

इस प्रकार गन्ना की फसल भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के साथ–साथ ग्रामीण परिवेश में रहने वाले कृषक परिवारों की आर्थिक स्थिति को मजबूत बनाने में भी प्रमुख भूमिका अदा कर रही है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिक से अधिक उपज प्राप्त की जायें और यह तभी संभव होगा जब गन्ना कृषक वैज्ञानिकों द्वारा बताई गयी खेती की उन्नतशील तकनीकों को अपनाकर खेती करना प्रारम्भ करेंगे।

खेत की तैयारी

गन्ना की उन्नत खेती में सबसे अहम कदम खेत की तैयारी करना है। गन्ने के उपयुक्त जमाव के लिए मिट्टी में पर्याप्त नमी होना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए खेत में पलेवा करके ओट आने पर मिट्टी पलटने वाले हल से एक गहरी जुताई करके उसके बाद 3–4 उथली जुताई करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे खेत समतल हो जाये। जुताई के समय ही 20–25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद या प्रेसमड डालकर खेत में मिला देने से खाद पूरे खेत में पूर्णतः मिल जाती है।

स्वस्थ बीज का चुनाव

उन्नत व स्वस्थ बीज गन्ना उपज बढ़ाने में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान देता है। क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत गन्ना प्रजाति जो कीटों एवं रोगों से मुक्त हो, उस गन्ना बीज का चुनाव करना चाहिए तथा जिस गन्ना फसल से बोने के लिए बीज प्रयोग किया जाना हो उसकी आयु लगभग 10 माह हो, तथा पेड़ी या गिरे हुए गन्नों को बीज के लिए प्रयोग नहीं करना चाहिए। गन्ने के ऊपरी एक तिहाई भाग को बुवाई के लिए प्रयोग में लाना चाहिए जिससे जमाव अच्छा होता है। गन्ना बीज को आर्द्र–उष्ण वायु उपचार यंत्र में 54 डिग्री सेन्टी ग्रेड पर ढाई घंटे तक उपचारित कर लें जिससे बीजजनित बीमारियों जैसे लाल सड़न, उकठा, कंडुवा, पेडीकुंठन, घासी प्ररोह के प्रकोप से बचाया जा सके। अब उपचारित गन्ना बीजों

को *बाविस्टीन* की 200 ग्राम मात्रा का 100 लीटर पानी में घोल बनाकर लगभग 15 मिनट तक डुबोकर रखें जिससे जमाव शीघ्र व अधिक होता है। गन्ना फसल को दीमक से बचाव के लिए 20 प्रतिशत सांद्रता वाले क्लोरोपायरीफॉस के 5 लीटर दवा 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से कूड़ों में गन्ना टुकड़ों के ऊपर छिड़काव करना चाहिए। गन्ना के उत्तम जमाव के लिए वातावरण का तापमान 25 से 30 डिग्री सेंटीग्रेड सबसे अनुकूल होता है। तापक्रम की यह अवस्था उपोष्ण जलवायु वाले प्रदेशों में अक्टूबर–नवम्बर तथा फरवरी से मार्च में रहती है तथा उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में यह अवस्था लगभग पूरे वर्ष बनी रहती है। उत्तर भारतीय प्रदेशों में शरदकालीन गन्ने की बुवाई 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तथा बसन्तकालीन गन्ने की बुवाई 15 फरवरी से 15 मार्च के मध्य करनी चाहिये। गन्ना प्रजाति व मोटाई के अनुसार एक हेक्टेयर खेत में बुवाई के लिए लगभग 60–70 क्विंटल गन्ना बीज की आवश्यकता होती है।

गन्ना बोने की विधियाँ

भारत में प्रचलित प्रमुख गन्ना बुवाई विधियाँ निम्नलिखित हैं जैसे– समतल विधि, नाली विधि, गोल गड्ढा विधि, अंतरालित प्रतिरोपण विधि, पाली बैग विधि, कटर प्लान्टर द्वारा गन्ने की बुवाई। उत्तर भारत में सबसे प्रचालित विधि समतल विधि है जिसमें शरदकालीन बुवाई के लिए 90 सेंटीमीटर तथा बसंन्तकालीन बुवाई के लिए 75 सेंटीमीटर की दूरी पर 7 से 10 सेंटीमीटर गहरी कूड़ों में तीन आँख वाले टुकड़ों की बुवाई करते है। एक हेक्टेयर खेत में लगभग 40,000 टुकड़ों की आवश्यकता होती है। बुवाई के बाद कूड़ों को देशी हल या कुदाली से ढक्कर पाटा लगा देते है। इस विधि में मिट्टी तथा गन्ना टुकड़ों से नमी का ह्रास तेजी से होता है इसलिए उचित सिंचाई व्यवस्था वाले क्षेत्रों में ही इस विधि को अपनाना चाहिए। सिंचाई की कमी वाले क्षेत्रों में नाली विधि से गन्ना बुवाई करना चाहिए। इस विधि में केन्द्र से केन्द्र 120 सेंटीमीटर की दूरी पर 30 सेंटीमीटर चौड़ी तथा 30 सेंटीमीटर गहरी नालियाँ बनाते है तथा इन नालियों में गोबर की खाद या प्रेसमड डालकर गन्ना के दो आँख वाले टुकड़ों की बुवाई प्रत्येक नाली में गन्ने की दो लाइने लगाते है। तत्पश्चात 4–5 सेंटीमीटर मिट्टी डालकर ढक देते है। बुवाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई नालियों में कर देनी चाहिए तथा ओट आने पर एक अन्धी गुड़ाई करना अत्यंत लाभप्रद होता हैं। समतल विधि में 30–35 प्रतिशत जमाव की अपेक्षा इस विधि में जमाव लगभग 70–75 प्रतिशत तक हो जाता है।

प्रतिकूल दशाओं में गन्ने की भरपूर उपज के लिए गोल गड्ढा विधि से बुवाई करनी चाहिए। इस विधि में 90 सेंटीमीटर व्यास तथा 30 सेंटीमीटर गहराई के गोल गड्ढे, गड्ढा खुदाई यंत्र से बना लेते है। अब प्रत्येक गड्ढे में 3 किलोग्राम गोबर की खाद, 20 ग्राम डी.ए.पी., 8 ग्राम यूरिया, 16 ग्राम पोटाश तथा 2 ग्राम जिक सल्फेट डालकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिलाकर 2 आँख वाले 20 उपचारित गन्ना टुकड़ों को साइकिल के पहिये में लगी तीलियों की भाँति गड्ढे की सतह में बिछाकर *क्लोरोपायरीफॉस* घोल का छिड़काव करने के बाद टुकड़ों को 2 इंच मोटी मिट्टी की सतह से ढक देते है। गन्ने में चार पत्तियों की अवस्था आ जाने के बाद 16 ग्राम यूरिया प्रति गड्ढा और गड्ढे में 2 इंच मिट्टी डालकर भर देना चाहिए। जून के अन्तिम सप्ताह या वर्षा पूर्व 16 ग्राम यूरिया प्रति गड्ढा डालकर गड्ढों की भराई करके खेत समतल करना अत्यंत आवश्यक है।

गन्ना बीज की बचत के लिए अंतरालित प्रतिरोपण विधि सबसे उत्तम विधि है। इस विधि में एक हेक्टेयर खेत की बुवाई के लिए 20 क्विंटल बीज की आवश्यकता होती है जिसकी नर्सरी 50 वर्गमीटर क्षेत्र में तैयार की जाती है। अच्छी तरह से तैयार नर्सरी में एक आँख वाले उपचारित गन्ना टुकड़ों को लम्बवत इस प्रकार मिट्टी में दबाते हैं कि टुकड़े की आँख तथा उसके पास जड़ निकलने वाला सफेद पट्टी भूमि की सतह से ठीक ऊपर हो। इन टुकड़ों पर ढाई सेंटीमीटर मिट्टी डालकर पुआल या सूखी पत्तियों से ढक देते हैं और 2–3 दिन के अन्तराल पर हजारा से सिंचाई करते रहते हैं। 35–40 दिन के बाद 4–5 पत्तियाँ निकल आती हैं और पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाती हैं तथा इन पौधों को उखाड़कर तैयार खेत में बने कूड़ों व नालियों में पानी भरकर में 60 सेंटीमीटर की दूरी पर रोपाई कर दें। गन्ने के नये बीज के संवर्धन मे यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।

गेहूँ कटाई के बाद खेत खाली होने पर गन्ना बुवाई वाली स्थिति में देरी से हुए नुकसान की भरपाई के लिए पाली बैग विधि से गन्ने की बुवाई एक उपयोगी विधि है। साथ ही साथ उन्नतशील गन्ना प्रजाति के बीजों के संवर्धन में भी यह विधि अत्यन्त उपयोगी है। इस विधि में खेत की बजाय पॉली बैग में नर्सरी तैयार की जाती है। 5 इंच लम्बी व 5 इंच चौड़ी पॉलीथीन बैग में मिट्टी, बालू या गोबर की खाद के बराबर मिले मिश्रण को भरकर इसमें एक आँख वाले उपचारित गन्ना टुकड़ों को लम्बवत रखते हैं तथा उसके ऊपर 2–3 सेंटीमीटर मिट्टी से ढक देते हैं। 5–6 दिन के अन्तराल पर नर्सरी में

पानी का छिड़काव करते हैं। चार सप्ताह में 3–4 पत्तियाँ निकल आती हैं और यह पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं। अब इन पौधौ को अंतरालित प्रतिरोपण विधि की भाँति खेत में रोप देते है।

अच्छी गन्ना उपज प्राप्त करने के लिए उर्वरक प्रबन्धन

उत्तर भारतीय प्रदेशों के लिए साधारणतया गन्ने की भरपूर उपज के लिए प्रति हेक्टेयर 150 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस एवं 60 किलोग्राम पोटाश संस्तुत की गई है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन की एक तिहाई मात्रा को बुवाई के समय कूँड़ों में तथा शेष नत्रजन की मात्रा को बराबर–बराबर दो बार *टॉप ड्रेसिंग* में बुवाई के 90 दिनों के अंदर खेत में गन्ना पंक्तियों के किनारे डालना चाहिए। गन्ने की अच्छी उपज तथा मृदा की उर्वरा शक्ति को बरकरार रखने के लिए संस्तुत उर्वरक की मात्रा की आधी मात्रा कार्बनिक खाद जैसे गोबर, प्रेसमड, खलियाँ इत्यादि व आधी अकार्बनिक स्रोतों जैसे यूरिया, डी.ए.पी., एम.ओ.पी. इत्यादि से देना चाहिए।

खरपतवार प्रबन्धन

खेतों में निकलने वाले खरपतवार गन्ना वृद्धि के लिए आवश्यक संसाधनों जैसे प्रकाश, पोषक तत्व, जल व स्थान के लिए प्रतिद्वंद्वी होते हैं जिससे गन्ना वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा फसल के प्रारंभिक काल (बुवाई से 60–120 दिनों) तक अधिक नुकसान पहुँचता है। अतः इन दिनों में खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिए। इसके लिए वर्षा पूर्व प्रत्येक सिंचाई के बाद गुड़ाई करना आवश्यक है या फिर तीन गुड़ाइयाँ (बुवाई के 30, 60 व 90 दिनों) के बाद करना चाहिए। समेकित खरपतवार नियंत्रण को अपनाकर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए बुवाई के दो–तीन दिन बाद एट्राजीन की 2 किलोग्राम मात्रा को 800 लीटर पानी में घोलकर खेत में छिड़काव करें तथा बुवाई के 50–55 दिन बाद 2,4 डी. की 2 किलोग्राम मात्रा का 500 लीटर पानी में बने घोल को छिड़कना करना चाहिए तथा बुवाई के 85–90 दिन बाद खेत की गुड़ाई करवा देना अत्यंत आवश्यक है जिससे खरपतवार गन्ना उत्पादन पर अपना विपरीत प्रभाव डालने में सफल न हो।

गन्ना फसल की अच्छी पैदावार के लिए उचित सिंचाई विधियाँ

गर्मियों में खेत में कम नमी होने की वजह से किल्लों की संख्या में कमी आ जाती है जिससे प्रति इकाई क्षेत्रफल में मिल योग्य गन्ना की संख्या घट जाती है तथा उपज भी कम प्राप्त होती है। इसलिए इन दिनों भूमि में पर्याप्त नमी बनाए रखने के लिए वर्षा पूर्व 4–5 सिंचाई की आवश्यकता होती है। साथ ही वर्षा ऋतु के बाद भी 2 सिंचाई गन्ना फसल के लिए काफी फायदेमंद होती है।

गन्ने की दो पंक्तियों के बीच की जगह में एकान्तर क्रम से बुवाई के 35–40 दिनों के बाद 45 सेंटीमीटर चौड़ी तथा 15 सेंटीमीटर गहरी नाली बना दें तथा इन्हीं नालियों में सिंचाई करें जिससे सिंचाई जल में 35–40 प्रतिशत तक की बचत की जा सकती है।

नाली विधि से सिंचाई गन्ना में एक उपयुक्त सिंचाई विधि है जिसमें खेत की ढलान की ओर 35–40 मीटर लम्बी नाली बनाकर सिंचाई की जाती है तथा इस विधि में 25–30 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है। गन्ने की क्रांतिक वृद्धि अवस्थाओं जैसे जमाव, प्रथम, द्वितीय व तृतीय किल्ले निकलने की अवस्थाओं पर सिंचाई कर सिंचाई जल में बचत की जा सकती है।

बूँद–बूँद सिंचाई विधि अपनाकर सिंचाई जल में 40–50 प्रतिशत तक की बचत की जा सकती है। इस विधि में गन्ने की नालियों के समीप प्लास्टिक पाइपों को बिछा दिया जाता है जिसमें छोटे छिद्र वाले *'इमिटर'* लगे होते है और पाइपों में दवाब बढ़ाकर इमिटरों से बूँद–बूँद पानी गिरता रहता है।

गन्ने में किल्ले निकलने की प्रक्रिया पूरी हो जाने के बाद लम्बवत बढ़वार तेजी से होती है तथा गन्ने की लंबाई 10–15 फीट तक हो जाती है। ऐसी स्थिति में जड़ें उथली होने या हल्की मिट्टी होने के कारण गन्ना गिर जाता है तथा उपज में काफी नुकसान होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि गन्ने को गिरने से बचाया जाये। इसके लिए जून के अंतिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में गन्ने की जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दें। इसके बाद अगस्त माह में प्रत्येक थानों की बंधाई अलग–अलग कर दें तथा इसकी बंधाई सितम्बर माह में आमने–सामने के थानों को आपस में मिलाकर कर दें। ऐसा करने से वर्षा ऋतु में तेज हवाओं के बहाव के बावजूद गन्ना गिरता नहीं है तथा फसल में नुकसान नहीं होने पाता है।

नाशी कीट प्रबंधन

लगभग 200 नाशी कीट बुवाई से कटाई तक फसल को नुकसान पहुँचाते हैं जिससे उपज में 15–20 प्रतिशत तथा

शर्करा परता में 10–15 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है। गन्ने के प्रमुख नाशी कीटों में दीमक, सफेद लट, प्ररोह बेधक, तना बेधक, पोरी बेधक, जड़ बेधक, गुरदासपुर बेधक, अंकुर बेधक, पायरिला, काला चिकटा, ऊनी माहू, थ्रिप्स आदि प्रमुख है। इसलिए बुवाई के समय से ही नाशी कीटों की रोकथाम या प्रबंधन के लिए आवश्यक उपाय अपनाना चाहिए।

बुआई के समय दीमक, जड़ बेधक अंकुर बेधक व सैनिक कीटों से बचाव के लिए 20 प्रतिशत सांद्रता वाले *क्लोरोपायरीफॉस* के 5 लीटर रसायन का 1,500–1,600 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से गन्ना टुकड़ों के ऊपर छिड़काव करना चाहिए।

ऊनी माहू की रोकथाम के लिए नमी वाले स्थान के समीप ऊनी माहू को ढूंढें तथा *मेटासिस्टॉक्स* 0.05 प्रतिशत घोल 600 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिन के अन्तराल पर अप्रैल से जून के मध्य 2 से 3 बार छिड़काव करें।

चोटी बेधक की रोकथाम के लिए जून के अंतिम सप्ताह में *फ्यूराडान 3जी* का 33 किलाग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से गन्ना थानों के पास दोपहर के पहले खेतों में डालें तथा खेत में नमी सुनिश्चित कर लें। चोटी व अन्य बेधक कीटों से बचाव के लिए *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* (अण्ड परजीवी) के 50,000 व्यस्क कीट *ट्राइकोकार्ड* के रूप में प्रति हेक्टेयर की दर से 10 दिनों के अंतराल पर खेतों में जुलाई से अक्टूबर के मध्य छोड़े जा सकते हैं। मानसून की पहली बरसात के बाद सफेद लट के वयस्क कीट को खेतों में प्रकाश ट्रैप द्वारा इकट्ठा कर नष्ट कर दें तथा व्यस्क कीट निकलनें के समय *क्विनलफॉस* 5 जी 50 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में डाल देना चाहिए।

अक्टूबर से नवम्बर के मध्य तना बेधक का प्रकोप काफी होने की संभावना होती है। इसकी रोकथाम के लिए गन्ने की सूखी पत्तियों को 30 दिन के अंतराल पर तथा जल किल्लों को 15 दिन के अंतराल पर निकालना चाहिए तथा नवम्बर से दिसम्बर के मध्य काला चिकटा से बचाव के लिए *बिवेरिया बैसियाना घुसरित* काला चिकटा के 5,000 वयस्क प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में छोड़ने से नाशी कीटों का प्रबंधन सुगमता से किया जा सकता है।

नाशी रोग प्रबंधन

गन्ने की प्रति इकाई क्षेत्रफल उपज कम होने के कई कारणों में एक कारण फसल में लगने वाली बीमारियाँ है। वैसे तो गन्ने में लगभग 50 बीमारियाँ लगती हैं लेकिन इनमें से प्रमुख लाल सड़न, उकठा, कंडुआ, घासीय प्ररोह, पेड़ी कुंठन इत्यादि है जो बीजजनित होने के कारण गन्ने की फसल को ज्यादा नुकसान पहुँचाती हैं। वैसे अन्य बीमारियाँ जैसे पोरी विगलन रोग, पत्तियों में फंफूदी, पत्तियों के धब्बे रोग, जड़गलन, निमेटोड आदि भी लगती हैं लेकिन इन बीमारियों से फसल को कम नुकसान होता है। इसलिए गन्ने को बीजजनित महत्वपूण बीमारियों से बचाने के लिए रोगरोधी स्वीकृत प्रजातियों के स्वस्थ बीज की ही बुवाई करना अत्यंत आवश्यक हैं। गन्ना बीज को आर्द्र–उष्ण वायु यंत्र से उपचारित करें तथा गन्ना बीज टुकड़ों को फफूँदीनाशक रसायन जैसे बाविस्टीन घोल में 10–15 मिनट तक उपचारित कर ही बोयें। इसके बावजूद अगर खेत में रोग ग्रसित कोई थान दिखाई पड़े उसे तुरंत उखाड़कर जला दें या गड्ढ़ा खोदकर मिट्टी में दबा देना चाहिए।

गन्ना फसल की कटाई

खेत में स्वस्थ गन्ना फसल तैयार हो जाने के बाद यह आवश्यक है कि गन्ने की कटाई ठीक से की जाए तथा कटाई उपरान्त देखभाल ठीक हो जिससे किसानों को अधिकतम मूल्य प्राप्त हो सके। देशभर में गन्ने की कटाई किसानों द्वारा स्वयं या श्रमिकों द्वारा की जाती है। गन्ना कटाई के लिए लकड़ी पर लगे तेज धार वाले यंत्र का प्रयोग करना चाहिए जो गन्ने के वृन्त को एक कोण पर काट देता है। गन्ने की कटाई हमेशा भूमि की सतह से ही करें। गन्ना खेती से अधिक लाभ कमाने के लिए किसान बंधुओं को बावक गन्ने की कटाई 15 फरवरी से 15 मार्च के मध्य कर लेना चाहिए जिससे गन्ने की पेड़ी में संस्तुत उर्वरकों, सिंचाई व रसायनों का उचित समय पर प्रयोग करके कम लागत में गन्ने की अच्छी उपज प्राप्त की जा सके।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ने में पाइनएपिल रोग का समेकित प्रबंधन

प्रकाश चंद्र त्रिपाठी, राहुल कुमार तिवारी एवं दिनेश सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

परिचय

गन्ना विश्व के 110 से भी अधिक देशों में उगाया जाता हैं। गन्ना (*सैकेरम औफीसिनरम* एल.) विश्व की एक प्रमुख नकदी फसल है, जिससे चीनी, गुड़, राब, मिश्री आदि का निर्माण होता हैं। विश्व में भारत गन्ने के उत्पादन में ब्राजील के बाद दूसरे स्थान पर है तथा उपभोक्ता के रूप में सबसे बड़ा देश है। 2023 में गन्ना लगभग 60 लाख हेक्टेयर में उगाने का अनुमान लगाया गया था जबकि औसतन इसकी खेती 48–50 लाख हेक्टेयर में की जाती है। भारत में इसका सबसे ज्यादा उत्पादन उत्तर प्रदेश में होता है उसके बाद क्रमशः महाराष्ट्र तथा कर्नाटक को दूसरा तथा तीसरा स्थान प्राप्त है।

भारत में तमिलनाडु राज्य की गन्ने की उत्पादकता सबसे अधिक लगभग 100 टन/हेक्टेयर की है, उसके बाद कर्नाटक तथा महाराष्ट्र दूसरे तथा तीसरे स्थान पर हैं। भारत की उत्पादकता लगभग 79 मैट्रिक टन/हेक्टेयर का अनुमान लगाया गया हैं जब कि इसके पहले वर्ष में गन्ने की उत्पादकता लगभग 83 मैट्रिक टन प्रति हेक्टेयर थी।

गन्ने में बहुत से रोग लगते हैं जैसे कि लाल सड़न, उकठा, पोक्का बोइंग, कंडुआ रोग इत्यादि, उनमें से *पाइन एपिल* रोग एक प्रमुख रोग है जो कि, *सेराटोसिस्टिस पैराडोक्सा* नामक कवक के कारण होता है, जो कि विश्व स्तर पर गन्ने की फसलों के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा है। यह रोग पौधे के संवहनी तंत्र को प्रभावित करता है, जिससे गन्ने के पौधों में विभिन्न लक्षण उत्पन्न होते हैं जो उपज को काफी हद तक कम कर देते हैं और चीनी की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं।

पाइन एपिल रोग गन्ने की पैदावार और गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है, जिसके परिणामस्वरूप उपज में कमी तथा संक्रमित पौधे कम और छोटे डंठल पैदा करते हैं, जिससे कुल उपज कम हो जाती है। इसके साथ ही संक्रमित डंठलों में चीनी की मात्रा कम हो जाती है, जिससे उत्पादित चीनी की गुणवत्ता उपज भी खराब होती है। आर्थिक नुकसान के दृष्टिकोण से इस बीमारी के परिणामस्वरूप गन्ना उत्पादकों को महत्वपूर्ण वित्तीय नुकसान हो सकता है। पाइन एपिल रोग के प्रभाव को कम करने के लिए शीघ्र पहचान और उपचार आवश्यक है। रोग के कारणों और लक्षणों को समझकर और प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों को लागू करके, गन्ना उत्पादक अपनी फसलों की रक्षा कर सकते हैं और पैदावार बनाए रख सकते हैं। भारत के उत्तर प्रदेश राज्य में, *पाइन एपिल* रोग एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है एवं विशेष रूप से कोएस 07250 और कोएस 97264 जैसी गन्ने की किस्मों को प्रभावित करता है, जिनकी संक्रमण दर 2–5 प्रतिशत है। यह रोग *ग्रास शूट* रोग के साथ मिश्रित संक्रमण में भी देखा जाता है, लेकिन इसकी *इंसीडेंस* दर लगभग 4 प्रतिशत से कम होती है। उपज और गुणवत्ता के गंभीर नुकसान की संभावना को देखते हुए, लक्षणों की निगरानी करना और निवारक कार्रवाई करना महत्वपूर्ण है। यह लेख गन्ने में *पाइन एपिल* रोग के प्रबंधन के कारणों, लक्षणों और रणनीतियों की पड़ताल करता है।

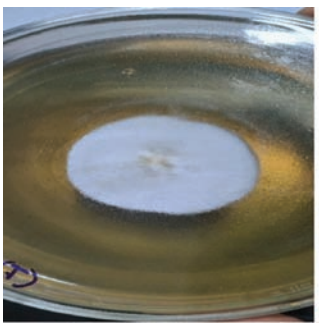

लक्षण

रोग के लक्षणों में प्रमुख परिवर्तन देखे जा सकते हैं जैसे कि– संक्रमित डंठल अनानास जैसा दिखाई देता है। डंठलों पर लाल–भूरे रंग के घाव और दरारें पायी जाती है। डंठलों का आंतरिक भाग सड़ने लगता हैं और नरम हो जाता है। संक्रमित पौधे का विकास भी रूक जाता है। गन्ने की उपज कम हो जाती हैं तथा संक्रमण के कारण उत्पाद की गुणवत्ता कम हो जाती है।

चित्र संख्या–3

चित्र संख्या–4

रोग कारक और प्रसार

पाइन एपिल रोग कवक *सेराटोसिस्टिस पैराडोक्सा* द्वारा उत्पन्न होता है, जो घाव या प्राकृतिक छिद्रों के माध्यम से पौधे में प्रवेश करता है। यह रोग एक कवक द्वारा प्रेरित होता है जो कम तापमान और लंबे समय तक नमी की स्थिति में पनपता है। यह रोग गर्म, आर्द्र परिस्थितियों में पनपता है और दूषित मिट्टी, पानी और उपकरणों से फैल सकता है। यह रोग मुख्य रूप से गन्ने के कटे हुए टुकड़ों से फैलता है और यांत्रिक रूप से क्षतिग्रस्त खड़े गन्ने को भी प्रभावित कर सकता है।

रोग वाहक

यूरोफोरस ह्यूमरेलिस (एफ), *कार्पोफिलस हेमिप्टेरस* (एल) और *हैप्टोनकस ऑक्यूलिस* (फेयरमेयर) जैसे रोगवाहक जो क्रमशः अनानास *बीटल*, सूखे फल *बीटल* और *सैप बीटल* हैं, *पाइन एपिल* रोग के प्रसार को सुविधाजनक बनाने के लिए जाने जाते हैं।

प्रबंधन रणनीतियाँ

पाइन एपिल रोग के प्रभावी प्रबंधन में कृषि, रासायनिक और जैविक नियंत्रण विधियों का संयोजन शामिल है।

कृषिक नियंत्रण

पाइनएपिल रोग को नियंत्रित करने के लिए फसल चक्र एक प्रभावी तरीका है। इसमें विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं जो रोग के चक्र को तोड़ती हैं या रोगजनक की संख्या को कम करती हैं। रोग–तोड़ने वाली फसलें जैसे– केला *(मूसा स्पीशीज़)*, पपीता *(कारिका पपाया)*, मक्का *(ज़िया मेज़)* और गन्ना (*सैकेरम ऑफिसिनेरम*) है। जाल फसलें मुख्य रूप से गेंदा (*टैगेट्स स्पीशीज़*) जो सूत्रकृमि अथवा गोल कृमि को दूर करती है जो पाइनएपिल रोग फैलाते हैं। मिर्च *(कैप्सिकम एनम)* जो रोग फैलाने वाले कीटों को दूर करती है। फिर हैं साथी फसलें जैसे हल्दी *(करकुमा लोंगा)* जो कवकरोधी गुणों वाली है। अदरक *(जिंजिबर ऑफिसिनेल)* जो पुनः कवकरोधी गुणों वाली है। नीम *(आज़ादिराच्टा इंडिका)* जो वस्तुतः कीटों को दूर करती है और कवकरोधी गुणों वाली है। ढकावन फसलें; मूंग *(विग्ना रेडिएटा)*, लोबिया *(विग्ना अनगुइकुलाटा)* और *सन हेम्प (क्रोटालेरिया जंसिया)* है। इन फसलों के फायदे हैं कि रोगजनक की संख्या कम होती है, रोग के चक्र को तोड़ती हैं, मिट्टी की सेहत में सुधार होता है, लाभदायक सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ती है, गोल कृमि की संख्या कम होती है। इन सभी फसलों एवं फसल चक्रों का प्रयोग करके हम निश्चित रूप से गन्ने में लगने वाले इस अनानास रोग के प्रभाव को रोक सकते है। मिट्टी की जल निकासी और वातन में सुधार करने के लिए कुछ तरीके हैं जैसे जल निकासी में सुधार के लिए मिट्टी में जैविक पदार्थ जैसे गोबर की खाद या कम्पोस्ट डालना। वातन में सुधार के लिए मिट्टी की सतह पर घास या पौधे लगाना एवं मिट्टी को नियमित रूप से जोतना या हल चलाना। प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग जैसे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा विकसित की गयी जो किस्में हैं उदाहरण स्वरुप कोएस 95255, कोएस 97214, कोएस 0822 का उचित समय पर प्रयोग। पौधे के चोट और तनाव को कम करने के लिए कुछ तरीके हैं जैसे पौधे को तेज़ हवा, अत्यधिक तापमान और अत्यधिक वर्षा से बचाना। पौधे को पर्याप्त पानी देना, पौधे को पर्याप्त धूप देना, पौधे को उर्वरक देना। अपने क्षेत्र, जलवायु और मिट्टी के अनुसार फसलें चुनें। स्थानीय कृषि विशेषज्ञों या प्रसार अधिकारियों से परामर्श लें।

रासायनिक नियंत्रण

रासायनिक नियंत्रण में शामिल विधियों में प्रमुखतः फफूँदनाशक का छिड़काव ही प्रचलित हैं जो कि विभिन्न फफूँदनाशकों के पृथक–पृथक खुराक के दर से दिए जाते हैं। जैसे कि बोरेक्स (*सोडियम टेट्राबोरेट*): 10–15 किलोग्राम/हेक्टेयर, मिट्टी में डालने या फ़रो सिंचाई के रूप में उपयोग करें। *कॉपर ऑक्सीक्लोराइड* (ब्लू कॉपर): 3–4 किलोग्राम/हेक्टेयर, मिट्टी में डालने या पत्ती के छिड़काव के रूप में उपयोग करें। *मैनकोज़ेब* (डिथेन): 2–3 किलोग्राम/हेक्टेयर, मिट्टी में डालने या पत्ती के छिड़काव के रूप में उपयोग करें। *प्रोपिकोनाजोल* (टिल्ट): 0.5–1 किलोग्राम/हेक्टेयर, मिट्टी में डालने या पत्ती के छिड़काव के रूप में उपयोग करें। फ्लूअजिनाम (शिर्लन): 1–2 किलोग्राम/हेक्टेयर, मिट्टी में डालने या पत्ती के छिड़काव के रूप में उपयोग करें।

ध्यान दें

- हमेशा फफूंदनाशक के लेबल को पढ़ें और निर्देशों का पालन करें।
- स्थानीय नियमों और गन्ने की किस्म के अनुसार खुराक को समायोजित करें।
- रोग के पहले संकेत पर फफूंदनाशक का उपयोग करें और आवश्यकतानुसार दोहराएं।
- फफूंदनाशकों को स्वच्छता, सिंचाई प्रबंधन और फसल चक्र जैसे अच्छे कृषि प्रथाओं के साथ मिलाएं।

मृदा धूम्रीकरण

मृदा धूम्रीकरण प्रक्रिया मिट्टी में कार्बन के जमा होने के कारण होती है, जिससे मिट्टी का रंग गहरा हो जाता है और उसके गुणों में परिवर्तन होता है। यह प्रक्रिया कई कारकों से प्रभावित होती है, जैसे कि जैविक पदार्थों का जमा होना, पौधों के अवशेषों का जमा होना। इसके फायदे है मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि होना, कार्बन *सिंक* के रूप में कार्य करता है, मिट्टी की जल धारण क्षमता में वृद्धि करता हैं। इसके साथ ही नुकसान भी है जैसे मिट्टी की पीएच में परिवर्तन, मिट्टी की जल निकासी में परिवर्तन, मिट्टी के पोषक तत्वों की कमी इत्यादि।

गन्ने में पाइनएपिल रोग का जैविक नियंत्रण

ट्राइकोडर्मा विरिडी एक ऐसा *फंगस* है जो *पाइन एपिल* रोग के *फंगस* को नष्ट करने में मदद करता है। इसके अलावा *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* एक जीवाणु है जो *पाइन एपिल* रोग के फंगस को नष्ट करने में मदद करता है। *बैसिलस सबटिलिस* जो कि एक जीवाणु है वह *पाइन एपिल* रोग के *फंगस* को नष्ट करने में मदद करता है। गन्ने के अवशेषों को मिट्टी में मिलाने से *पाइन एपिल* रोग के फंगस को नष्ट करने में मदद मिलती है। उपरोक्त सभी जैविक नियंत्रण की विधियां अलग–अलग हैं जैसे कि *ट्राइकोडर्मा विरिडी* या *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस* को गन्ने के बीजों पर छिड़कें। *बैसिलस सबटिलिस* को मिट्टी में मिलाएं। गन्ने के अवशेषों को मिट्टी में मिलाएं। नियमित रूप से गन्ने की जांच करें और आवश्यकतानुसार जैविक नियंत्रण विधियों का उपयोग करें। इससे अनानास रोग के नियंत्रण में मदद मिलती है। गन्ने की पैदावार बढ़ती है। जैविक नियंत्रण विधियों का उपयोग करने से रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों की आवश्यकता कम होती है एवं पर्यावरण को सुरक्षित रखने में मदद मिलती है।

निष्कर्ष

पाइन एपिल रोग गन्ने की फसल के लिए एक गंभीर खतरा है, लेकिन प्रभावी प्रबंधन रणनीतियों के माध्यम से इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है। कारणों, लक्षणों को समझकर और पारंपरिक, रासायनिक और जैविक नियंत्रण विधियों के संयोजन से, गन्ना उत्पादक संक्रमण के जोखिम को कम कर सकते हैं और अपनी उपज की रक्षा कर सकते हैं। संक्षेप में, रोग को नियंत्रित करने के लिए गन्ने के बीज को चूने के पानी या कार्बेन्डाजिम–*वेटेबल पाउडर* में 24 घंटे तक भिगोना शामिल हो सकता है। रोपण से पहले सेटों को एक पंजीकृत कवकनाशी के साथ भी उपचार किया जा सकता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि मिट्टी का तापमान कम से कम 18 डिग्री सेल्सियस है।

जिन हिंदीतर राज्यों में स्थित विश्वविद्यालयों तथा उच्च शिक्षण संस्थानों की परीक्षाओं / साक्षात्कारों में परीक्षार्थियों को हिंदी में उत्तर देने का विकल्प नहीं है उनमें परीक्षार्थियों को हिंदी में उत्तर देने का विकल्प प्रदान किया जाए।

संस्तुति संख्या : 36
राष्ट्रपति आदेश दिनांक 31 मार्च, 2017

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना और अन्य फसलों के लिए सूक्ष्म सिंचाई: भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन का समाधान

रवि कांत पांडेय एवं राजेश यू. मोदी
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

हाल के वर्षों में, कृषि क्षेत्र कई चुनौतियों का सामना कर रहा है, विशेष रूप से भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन के कारण। जल की बढ़ती कमी और अनियमित मौसम *पैटर्न* के साथ, किसानों को फसल की उपज बनाए रखने के लिए नवीन सिंचाई तकनीकों को अपनाने के लिए मजबूर होना पड़ा है। सूक्ष्म सिंचाई, जिसमें ड्रिप और *स्प्रिंकलर* सिंचाई जैसी विधियाँ शामिल हैं, एक प्रभावी समाधान के रूप में उभरी है। इस लेख में, हम गन्ना और अन्य फसलों के लिए सूक्ष्म सिंचाई के लाभों का अन्वेषण करेंगे, विशेष रूप से भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में।

भूजल की कमी का अर्थ है जल निकायों में जल स्तर का घटना, जो अत्यधिक निकासी के कारण होता है। इसके पीछे के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं:

1. **सिंचाई के लिए अधिक निकासी:** पारंपरिक बाढ़ सिंचाई विधियों के कारण बहुत अधिक पानी बर्बाद होता है।
2. **शहरीकरण और औद्योगीकरण:** शहरी क्षेत्रों में जल की बढ़ती मांग अक्सर ग्रामीण भूजल संसाधनों के अव्यवस्थित उपयोग का कारण बनती है।
3. **जलवायु परिवर्तन:** वर्षा के *पैटर्न* में बदलाव से प्राकृतिक जल पुनर्भरण कम होता है।

भूजल की कमी कृषि की स्थिरता के लिए गंभीर खतरे पैदा करती है, जिसमें शामिल हैं:

- जल की कमी के कारण फसल की उपज में कमी
- गहरे कुओं की आवश्यकता के कारण उत्पादन लागत में वृद्धि
- अधिक निकासी के कारण भूमि का क्षरण और लवणता।

जलवायु परिवर्तन ने कृषि उत्पादकता को प्रभावित करते हुए अनियमित मौसम *पैटर्न* को जन्म दिया है। इसके मुख्य प्रभाव हैं:

बढ़ता तापमान: उच्च तापमान फसलों पर तनाव डाल सकता है, विशेष रूप से जल–गहन फसलों जैसे गन्ने पर।

अनियमित वर्षा: वर्षा के असामान्य *पैटर्न* सूखा या बाढ़ के कारण सिंचाई प्रबंधन को जटिल बनाते हैं।

कीट और रोगों का बढ़ता प्रभाव: गर्म परिस्थितियों में कीटों की संख्या और रोगों के प्रकोप में वृद्धि हो सकती है।

जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन

किसानों को इन परिवर्तनों का सामना करने के लिए रणनीतियाँ अपनानी चाहिए, और सूक्ष्म सिंचाई इस संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

सूक्ष्म सिंचाई

सूक्ष्म सिंचाई ऐसी प्रणालियाँ हैं जो लंबे समय तक कम दरों पर पानी देती हैं। इसके दो मुख्य प्रकार हैं:

***ड्रिप* सिंचाई:** पानी को पौधों की जड़ों के क्षेत्र में सीधे एक *नेटवर्क* के माध्यम से दिया जाता है।

***स्प्रिंकलर* सिंचाई:** पानी को पाइप और पंपों के माध्यम से फसलों पर छिड़का जाता है।

सूक्ष्म सिंचाई के लाभ

सूक्ष्म सिंचाई के कई लाभ हैं, विशेष रूप से भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में:

जल संरक्षण: ये प्रणाली सीधे पौधों की जड़ों तक पानी पहुंचाती हैं, जिससे वाष्पीकरण और बर्बादी कम होती है।

उच्च फसल उपज: स्थिर नमी स्तर से बेहतर फसल स्वास्थ्य और उच्च उपज होती है।

भूमि स्वास्थ्य: जलभराव और लवणता को कम करने से भूमि की संरचना और उर्वरकता बनी रहती है।

कम श्रम लागत: स्वचालित प्रणालियों के कारण *मैन्युअल* सिंचाई की आवश्यकता कम होती है, जिससे श्रम लागत में कमी आती है।

गन्ने के लिए सूक्ष्म सिंचाई का महत्व: गन्ना कई देशों, जैसे भारत, ब्राजील और चीन में एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। हालांकि, यह भी अत्यधिक जल–गहन है। जलवायु परिवर्तन और भूजल की कमी के कारण प्रभावी सिंचाई के लिए आवश्यक है कि इसकी उत्पादन क्षमता को बनाए रखा जाए।

गन्ना उत्पादन में सूक्ष्म सिंचाई का कार्यान्वयन

प्रणाली की *डिज़ाइन*: उचित *डिज़ाइन* महत्वपूर्ण है। पंक्ति स्थान, *इमिटर* स्थान और *डिस्चार्ज* दर जैसे कारकों का ध्यानपूर्वक मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

भूमि की तैयारी: सूक्ष्म सिंचाई की प्रभावशीलता के लिए सही मिट्टी की स्थिति सुनिश्चित करना आवश्यक है। मिट्टी के परीक्षण से सिंचाई की विधि और कार्यक्रम निर्धारित करने में मदद मिल सकती है।

सिंचाई का कार्य: मिट्टी की नमी के *सेंसर* और मौसम के *डेटा* का उपयोग करके उचित सिंचाई कार्यक्रम निर्धारित किया जा सकता है, जिससे जल उपयोग में कमी आएगी।

महाराष्ट्र में किसानों ने *ड्रिप* सिंचाई प्रणालियों को अपनाने के बाद 60% तक जल की बचत और गन्ने की उपज में वृद्धि की है।

अनुसंधान से पता चला है कि सूक्ष्म सिंचाई गन्ने की उपज को 30% तक बढ़ा सकती है, जिससे इस फसल का जल पदचिह्न काफी कम होता है।

अन्य फसलों के लिए सूक्ष्म सिंचाई

गन्ना सूक्ष्म सिंचाई से विशेष लाभान्वित होता है, अन्य फसलें भी महत्वपूर्ण लाभ दे सकती हैं।

फल और सब्जियाँ: फल और सब्जियाँ अक्सर गुणवत्ता और उपज प्राप्त करने के लिए सटीक सिंचाई की आवश्यकता होती हैं। *ड्रिप* सिंचाई सुनिश्चित करती है कि नमी का स्तर स्थिर रहे, जिससे बीमारियों का प्रकाप कम होता हैं और स्वस्थ विकास को बढ़ावा मिलता है।

अनाज की फसलें: सूक्ष्म सिंचाई अनाज की फसलों जैसे चावल और गेहूँ के लिए भी लाभकारी हो सकती है। जड़ों के क्षेत्र में सीधे पानी देने से, किसान जल उपयोग को कम करते हुए उपज बनाए रख सकते हैं।

टमाटर: कैलिफ़ोर्निया में, *ड्रिप* सिंचाई ने टमाटर की उपज में वृद्धि और फल की गुणवत्ता में सुधार के साथ महत्वपूर्ण जल की बचत की है।

चावल: एशिया में किए गए अध्ययन दिखाते हैं कि सूक्ष्म सिंचाई का उपयोग करते हुए वैकल्पिक भराई और सुखाने (ए डब्लू डी) तकनीकों के कारण पारंपरिक तरीकों की तुलना में 30% जल की बचत हो सकती है।

सूक्ष्म सिंचाई का आर्थिक प्रभाव: लागत–लाभ विश्लेषण

सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों में निवेश की प्रारंभिक लागतें महत्वपूर्ण हो सकती हैं। हालाँकि, लंबे समय में लाभ अक्सर इन प्रारंभिक निवेशों से अधिक होते हैं:

जल की बचत: कम जल लागत समग्र उत्पादन खर्चों में कमी में योगदान करती है।

उच्च उपज: उच्च फसल उपज किसानों के लिए बढ़ती आय में परिवर्तित होती है।

सततता: जल संसाधनों की दीर्घकालिक स्थिरता कृषि की व्यवहार्यता का समर्थन करती है।

सरकारी समर्थन और नीतियाँ: कई सरकारें सूक्ष्म सिंचाई के महत्व को पहचानती हैं और इसके अपनाने को प्रोत्साहित करने के लिए *सब्सिडी* और प्रोत्साहन प्रदान करती हैं। सिंचाई अवसंरचना में सुधार के लिए कार्यक्रम कृषि उत्पादकता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकते हैं।

सूक्ष्म सिंचाई की चुनौतियाँ और सीमाएँ

प्रारंभिक निवेश: सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों की प्रारंभिक लागत कई छोटे किसानों के लिए एक बाधा हो सकती है। जबकि *सब्सिडी* उपलब्ध हैं, सभी किसान उन्हें प्राप्त नहीं कर पाते हैं।

तकनीकी ज्ञान और प्रशिक्षण: किसानों को सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों को स्थापित और बनाए रखने के लिए आवश्यक तकनीकी ज्ञान की कमी हो सकती है। सफल कार्यान्वयन के लिए प्रशिक्षण और समर्थन प्रदान करना आवश्यक है।

रखरखाव और दीर्घकालिकता: सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों को प्रभावी ढंग से काम करने के लिए नियमित रखरखाव की आवश्यकता होती है। अवरुद्ध *इमिटर* और क्षतिग्रस्त पाइपों के कारण प्रभावशीलता में कमी आ सकती है, जिससे लगातार निवेश की आवश्यकता होती है।

अनुसंधान और विकास

सूक्ष्म सिंचाई प्रौद्योगिकियों में निरंतर अनुसंधान दक्षता में सुधार और लागत को कम करने के लिए आवश्यक है। वास्तविक समय के *डेटा* को एकीकृत करने वाले *स्मार्ट* सिंचाई सिस्टम जैसी नवाचार जल प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ा सकते हैं। सरकारों को सूक्ष्म सिंचाई के अपनाने का समर्थन करने वाली व्यापक नीतियों का विकास करना चाहिए, जिसमें वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण कार्यक्रम और अनुसंधान *फंडिंग* शामिल हैं। स्थानीय समुदायों को सूक्ष्म सिंचाई परियोजनाओं की योजना और कार्यान्वयन में शामिल करना यह सुनिश्चित कर सकता है कि प्रणालियाँ स्थानीय परिस्थितियों और जरूरतों के अनुरूप हों।

निष्कर्ष

सूक्ष्म सिंचाई भूजल की कमी और जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न चुनौतियों के लिए एक आशाजनक समाधान प्रस्तुत करती है। कुशल सिंचाई प्रथाओं को अपनाकर, किसान उत्पादकता बढ़ा सकते हैं जबकि कीमती जल संसाधनों का संरक्षण भी कर सकते हैं। जैसे–जैसे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव अधिक स्पष्ट होते हैं, सतत कृषि प्रथाओं की आवश्यकता केवल बढ़ेगी, जिससे सूक्ष्म सिंचाई भविष्य की कृषि रणनीतियों का एक महत्वपूर्ण घटक बन जाएगा।

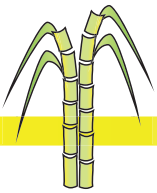

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गन्ना उत्पादन एवं उपयोगिता

राहुल कुमार एवं राधा जैन
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

गन्ना नकदी फसल के रूप में एक मुख्य फसल है, जिसका चीनी उद्योग में महत्वपूर्ण योगदान होता है और रोजगार के अवसर प्रदान करता है। गन्ने की खेती के लिए उष्णकटिबंधीय या उपोष्णकटिबंधीय जलवायु की आवश्यकता होती है, जिसमें न्यूनतम 60 सेंमी (24 इंच) वार्षिक वर्षा होती हो। यह वनस्पति जगत में सबसे कुशल प्रकाश संश्लेषकों में से एक है। यह एक सी$_4$ पौधा है, जो सौर ऊर्जा के 1% तक को जैवभार में परिवर्तित करने में सक्षम है। गन्ना उन पौधों में से एक है जिसकी जैव रूपांतरण क्षमता सबसे अधिक है। गन्ने की फसल सौर ऊर्जा को कुशलतापूर्वक स्थिर करने में सक्षम है, जो प्रति हेक्टेयर भूमि पर प्रति वर्ष लगभग 55 टन शुष्क पदार्थ उत्पन्न करती है। कटाई के बाद, फसल चीनी का रस और खोई, रेशेदार शुष्क पदार्थ पैदा करती है। गन्ना सामान्य वंश *सैकरम ऑफ़िसिनैरम* की एक लम्बी, एकबीजपत्री फसल है। गन्ना एक लम्बी बारहमासी उष्णकटिबंधीय घास है, जो आधार पर टहनियाँ बनाती है, जिससे 2–8 मीटर तक ऊँचा तथा लगभग 5 सेंमी व्यास का सख्त तना उत्पन्न होता है। "को 0238 (करन 4) एक उच्च उपज (80 टन/हे) देने वाली और उच्च शर्करा सामग्री (18 प्रतिशत) वाली किस्म है, जो कोलख 8102 तथा को 775 के क्रॉस से उत्पन्न हुई है।

क्षेत्र और उत्पादन

- गन्ना एक उष्णकटिबंधीय पौधा है और दुनिया भर में नकदी फसल के रूप में उगाया जाता है। भारत में इसे 49.18 लाख हेक्टेयर में उगाया जाता है।

- वर्ष 2024 में, पूरे भारत में उत्पादित गन्ने की उपज लगभग 79 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर होने का अनुमान है।
- जबकि 2023 में भारत में 84 मीट्रिक टन प्रति हेक्टेयर गन्ना उपज का अनुमान लगाया गया था।

भारत में महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक तथा तमिलनाडु प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य हैं :

विश्व स्तर पर भारत गन्ना उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। गन्ना सौर ऊर्जा को जैवभार और चीनी में परिवर्तित करने वाले सबसे अच्छे साधनों में से एक माना जाता है।

प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य

(क) उपोष्ण

उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हरियाणा, पंजाब, बिहार जैसे राज्यों में जहाँ वार्षिक वर्षा 180 से 2000 मिमी होती है। जलवायु आर्द्र, नम उप–आर्द्र और शुष्क उप–आर्द्र से लेकर ठंडी शुष्क, अर्ध–शुष्क और शुष्क होती है। उपोष्ण क्षेत्र में 55 प्रतिशत क्षेत्र है जिससे केवल 45 प्रतिशत गन्ना ही पैदा होता है। उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने की उपज विभिन्न कारणों से कम होती है, जैसे कि कम फसलावधि उच्च तापमान असमानता, नमी की कमी, कीट और रोग की समस्या, बाढ़ और जल भराव तथा बहुत खराब पेड़ी जैसे अन्य कारक। चार प्रमुख राज्यों (उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और हरियाणा) की औसत उपज लगभग 60 टन प्रति हेक्टेयर है।

(ख) उष्णकटिबंधीय क्षेत्र

उष्णकटिबंधीय गन्ना क्षेत्र में महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, गुजरात, मध्य प्रदेश, गोवा, पांडिचेरी और केरल राज्य शामिल हैं। कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश जहाँ वार्षिक वर्षा 602 से 3640 मिमी होती है, नम से शुष्क उप–आर्द्र और अर्ध–शुष्क से शुष्क अर्ध–शुष्क जलवायु होती है। देश के कुल गन्ना उत्पादन में उष्णकटिबंधीय क्षेत्र का योगदान लगभग 45 प्रतिशत है। महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और गुजरात सहित क्षेत्र के प्रमुख राज्यों की औसत गन्ना पैदावार लगभग 80 टन

प्रति हेक्टेयर है। महाराष्ट्र और कर्नाटक, गुजरात और आंध्र प्रदेश के आसपास के इलाकों में चीनी परता में बढ़ोतरी दर्ज की गई।

वर्ष 2022 में, गन्ने का वैश्विक उत्पादन 1.92 बिलियन टन था, जिसमें ब्राज़ील दुनिया के कुल उत्पादन का 38 प्रतिशत, भारत 23 प्रतिशत और चीन 5 प्रतिशत का अंशदान करता था। 2022 में दुनिया भर में गन्ने की औसत उपज 74 टन प्रति हेक्टेयर थी, जिसमें पेरू 121 टन प्रति हेक्टेयर के साथ सबसे आगे था। गन्ने की सैद्धांतिक संभावित उपज लगभग 280 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष है, और ब्राजील में छोटे प्रायोगिक भूखंडों ने प्रति हेक्टेयर 236–280 टन गन्ने की उपज का प्रदर्शन किया है। 2008 से 2016 तक, मानक–किस्मों वाले गन्ने के उत्पादन में लगभग 52 प्रतिशत की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर का अनुभव हुआ, जबकि पारंपरिक गन्ने में 1 प्रतिशत से भी कम की वृद्धि हुई।

मुख्य गन्ना उत्पादक देश (वर्ष–2022)		
	देश	**उत्पादन (मिलियन टन में)**
1.	ब्राज़ील	724.4 (37.69 प्रतिशत)
2.	भारत	439.4 (22.86 प्रतिशत)
3.	चीन	103.4 (5.38 प्रतिशत)
4.	थायलैंड	92.1 (4.79 प्रतिशत)
5.	पाकिस्तान	88.0 (4.58 प्रतिशत)
6.	मेक्सिको	55.3 (2.88 प्रतिशत)
7.	कोलंबिया	35.0 (1.82 प्रतिशत)
8.	इंडोनेशिया	32.4 (1.69 प्रतिशत)
9.	संयुक्त राज्य अमेरिका	31.5 (1.64 प्रतिशत)
10.	ऑस्ट्रेलिया	28.7 (1.49 प्रतिशत)
कुल उपज – 1630.2 टन		

गन्ने का उपयोग

गन्ने का पोषण मूल्य

एक पूर्णतः परिपक्व गन्ने में सामान्यतः लगभग 11–16 प्रतिशत फाइबर, 12–16 प्रतिशत घुलनशील शर्करा, 2–3 प्रतिशत गैर–शर्करा कार्बोहाइड्रेट तथा 63–73 प्रतिशत जल तत्व होते हैं।

गन्ना उत्पादन क्षेत्र : 1 हे. (हरा गन्ना)	
काटा हुआ गन्ने	कुल 70.0 टन वजन
पानी (73 प्रतिशत)	51.1 टन
चीनी	9.08 टन
सेल्यूलोज	3.74 टन
हेमीसेल्यूलोज	2.23 टन
लिग्निन	2.24 टन
अन्य	1.61 टन

गन्ना उत्पादन क्षेत्र : 1 हे. (गन्ना रस)	
गन्ना रस उत्पादन	59.11 टन
पानी (84 प्रतिशत)	49.62 टन
चीनी	8.35 टन
अन्य	1.14 टन

गन्ना उत्पादन क्षेत्र : 1 हे. (खोई उत्पादन)	
खोई उत्पादन	17.90 टन
पानी (52 प्रतिशत)	8.49 टन
सुक्रोज	0.73 टन
सेल्युलोज	3.67 टन
हेमीसेल्युलोज	2.18 टन
लिग्निन	2.19 टन
अन्य	0.64 टन

चीनी उत्पादन

गन्ना मुख्य रूप से अपनी उच्च चीनी सामग्री के लिए उगाया जाता है। गन्ने से चीनी निकालने में गन्ने को कृशर से उसका रस निकालना शामिल है, जिसे फिर विभिन्न प्रकार की चीनी, जैसे दानेदार चीनी, ब्राउन शुगर और गुड़ बनाने के लिए संसाधित और परिष्कृत किया जाता है। गन्ना विश्व स्तर पर चीनी का मुख्य स्रोत (80 प्रतिशत) है। लगभग एक टन गन्ने से लगभग 115 किलो ग्राम चीनी प्राप्त की जाती है। जिसकी मात्रा विभिन्न प्रजातियों में अलग–अलग पाई जाती है।

गन्ना प्रसंस्करण के अन्य उत्पादों में खोई, गुड़ और फिल्टर केक शामिल हैं। खोई, गन्ने का रस निकालने के बाद गन्ने का बचा हुआ सूखा रेशा, कई उद्देश्यों के लिए उपयोग किया जाता है।

- बॉयलर और भट्टी के लिए ईंधन
- कागज, पेपरबोर्ड उत्पादों और पुनर्गठित पैनलबोर्ड का उत्पादन
- कृषि मल्च
- रसायनों के उत्पादन के लिए कच्चे माल के रूप में।

खोई और खोई अवशेष का प्राथमिक उपयोग चीनी संयंत्रों में प्रक्रिया भाप के उत्पादन में बॉयलर के लिए ईंधन स्रोत के रूप में होता है। सूखे फ़िल्टरकेक का उपयोग पशु आहार पूरक, उर्वरक और गन्ने के मोम के स्रोत के रूप में किया जाता है।

जैव ईंधन उत्पादन

गन्ने का उपयोग जैव ईंधन उत्पादन, विशेष रूप से इथेनॉल के लिए *फीडस्टॉक* के रूप में किया जा सकता है। गन्ने से उत्पादित इथेनॉल, जिसे गन्ना इथेनॉल या बायोइथेनॉल के रूप में जाना जाता है, एक नवीकरणीय और स्वच्छ–जलने वाला ईंधन है जिसका उपयोग वाहनों में गैसोलीन के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। यदि चीनी मिल में एक टन गन्ना पेराई की जाती है तो लगभग 110–135 किलोग्राम चीनी प्राप्त होती है। इसी 135 किलोग्राम चीनी से 76 लिटर इथेनॉल प्राप्त होता है इस प्रकार शुगर–इथनॉल परिवर्तन क्षमता 76 प्रतिशत होती है साथ ही 1 हेक्टेयर गन्ने से लगभग 4,000 लीटर इथेनॉल प्रति वर्ष प्राप्त होता है।

गुड़ और *सिरप*

चीनी उत्पादन के अलावा, गन्ने के रस को गुड़ में संसाधित किया जा सकता है, जो चीनी शोधन का एक उप–उत्पाद है और इसका उपयोग विभिन्न खाद्य उत्पादों में *स्वीटनर* और स्वाद बढ़ाने वाले *एजेंट* के रूप में किया जाता है। गन्ने का *सिरप,* जिसे अक्सर *केन सिरप* के रूप में जाना जाता है, का उपयोग भोजन और पेय पदार्थों में *टॉपिंग, स्वीटनर* या घटक के रूप में किया जाता है। गन्ने से गुड़ दो रूपों में उत्पादित किया जाता है: *ब्लैकस्ट्रैप,* जिसमें एक विशिष्ट मजबूत स्वाद होता है, और एक शुद्ध गुड़ *सिरप। ब्लैकस्ट्रैप* गुड़ को भोजन और आहार पूरक के रूप में बेचा जाता है। यह पशु आहार में भी एक आम घटक है, और इसे गुड़ के रूप में बेचा जाता है, और इसे *मेपल सिरप, इनवर्ट शुगर या कॉर्न सिरप* के साथ भी मिलाया जा सकता है। गुड़ के दोनों रूपों का उपयोग *बेकिंग* में किया जाता है।

प्रति 100 ग्राम गुड़ में पोषक तत्वों की मात्रा निम्न है–

गुड़ में कार्बोहाइड्रटेस की मात्रा (ग्राम)		
सुक्रोज	72.78	
फ्रुक्टोज	1.5–7.0	
ग्लूकोज	1.5–7.0	
पानी	1.5–7.0	
प्रोटीन	280	
गुड़ में खनिज लवण (मिली ग्राम)		
कैल्शियम	40–100	
मैग्नीशियम	70–90	
फास्फोरस	20–90	
सोडियम	19–30	
लौह तत्व	10–13	
मैगनीज	0.2–0.5	
जस्ता	0.2–0.4	
क्लोराइड	5.3–0	
तांबा	0.1–0.9	
गुड़ में विटामिन (मिली ग्राम)		
प्रोविटामिन		2.0
विटामिन ए		3.8
विटामिन बी$_1$		0.01
विटामिन बी$_2$		0.06
विटामिन बी$_5$		0.01
विटामिन बी$_6$		0.01
विटामिन सी		7.00
विटामिन डी$_2$		6.50
विटामिन ई		111.30
विटामिन पीपी		7.00

गुड़ की उपज दर लगभग 10 प्रतिशत है, 100 किलोग्राम गन्ने से केवल 10 किलोग्राम गुड़ प्राप्त होता है।

गन्ने की खोई से ग्लूटेन रहित आटा

गन्ना से रस निकालने के बाद बचे हुए शेष *बगास* का प्रयोग आटा बनाने में किया जाता है जो ग्लूटेन रहित

होता है। गन्ने से प्राप्त किए गए ऐसे आटे में उच्च फाइबर, आयरन, विटामिन बी, कैल्शियम तथा खाद्य रेशे अधिक होते हैं। गन्ना से प्राप्त ग्लूटेन मुक्त आटा को मोटे अनाज के आटा का प्रमुख वैकल्पिक तत्व माना जा सकता है। कुछ देशों में गन्ने का आटा व्यावसायिक रूप से उपलब्ध है। वहाँ बढ़ती हुई ग्लूटेन एलर्जी वाले व्यक्तियों के लिए गन्ना के आटे की मांग अधिक है। इस महत्वपूर्ण उत्पाद को उपलब्ध कराकर प्रचुर मात्रा में विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकती है।

पशु आहार

गन्ने के रस को निकालने के बाद बचा हुआ रेशेदार अवशेष, जिसे अगोला के नाम से जाना जाता है, पशु आहार के रूप में उपयोग किया जाता है। खोई में फाइबर भरपूर मात्रा में होता है और इसे आम तौर पर पशुओं, खास तौर पर मवेशियों को खिलाया जाता है, क्योंकि यह उनके आहार में ऊर्जा और मोटा चारा प्रदान करता है।

पारंपरिक और पाक उपयोग

कई देशों में गन्ने का सेवन सीधे मीठे और रसीले नाश्ते के रूप में किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में, गन्ने का उपयोग पारंपरिक पेय पदार्थ बनाने के लिए किया जाता है, जैसे कि गन्ने का रस या गन्ने का रस, जो अपनी प्राकृतिक मिठास के लिए ताज़ा पेय है।

फाइबर और कागज उत्पादन

गन्ने के रेशों को निकाला जा सकता है और उन्हें कागज और पैकेजिंग सामग्री में संसाधित किया जा सकता है। इन रेशों का उपयोग अक्सर *प्लेट, कप* और *डिस्पोजेबल* बर्तनों सहित खोई–आधारित कागज उत्पादों के उत्पादन में किया जाता है।

औद्योगिक अनुप्रयोग

गन्ने के उप–उत्पाद, जैसे कि खोई, का उपयोग विभिन्न औद्योगिक अनुप्रयोगों में किया जाता है। खोई का उपयोग सह–उत्पादन या जैव–आधारित रसायनों के उत्पादन के लिए ऊर्जा के नवीकरणीय स्रोत के रूप में किया जा सकता है।

गन्ने के रस में पोषक तत्व

गन्ने के रस का पोषण मूल्य गन्ने की किस्म और इस्तेमाल की जाने वाली निष्कर्षण विधि जैसे कारकों के आधार पर थोड़ा भिन्न हो सकता है। हालाँकि, औसतन गन्ने के रस में निम्नलिखित पोषक तत्व होते हैं:

गन्ने का रस मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट से बना होता है, विशेष रूप से सुक्रोज, जो इसे इसका मीठा स्वाद देता है। इसमें थोड़ी मात्रा में ग्लूकोज और फ्रक्टोज भी होता है। फाइबर गन्ने के रस में थोड़ी मात्रा में आहार फाइबर होता है, जो पाचन और समग्र आंत स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में मदद करता है। गन्ने का रस कुछ विटामिनों का एक अच्छा स्रोत है, जिसमें विटामिन सी शामिल है, जो एक एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है और प्रतिरक्षा कार्य का समर्थन करता है, और कुछ बी विटामिन जैसे थायमिन (विटामिन बी 1) और राइबोफ्लेविन (विटामिन बी 2)। गन्ने के रस में कैल्शियम, आयरन, मैग्नीशियम और पोटेशियम सहित विभिन्न खनिज होते हैं। ये खनिज हड्डियों को स्वस्थ बनाए रखने, उचित मांसपेशियों के कार्य को बढ़ावा देने और समग्र *इलेक्ट्रोलाइट* संतुलन का समर्थन करने के लिए आवश्यक हैं। गन्ने का रस एक *हाइड्रेटिंग* पेय है क्योंकि इसमें पानी की मात्रा अधिक होती है, जो प्यास बुझाने और उचित जलयोजन बनाए रखने में मदद करता है।

रोजगार का सृजन

गन्ना की खेती रोजगार में महत्वपूर्ण योगदान देती है, खास तौर पर कृषि और ग्रामीण क्षेत्रों में। इसमें शामिल श्रम–गहन गतिविधियों की विविधता, जिसमें रोपण, कटाई, परिवहन और प्रसंस्करण शामिल है, विभिन्न श्रमिकों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करती है।

रोजगार सृजन को प्रभावित करने वाले कारक

गन्ने की खेती की रोजगार क्षमता उत्पादन पैमाने, खेती के तरीकों, तकनीकी प्रगति और क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक संदर्भ जैसे कारकों पर निर्भर करती है। ब्राज़ील, भारत, थाईलैंड और ऑस्ट्रेलिया जैसे प्रमुख गन्ना उत्पादक देशों में पर्याप्त प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार के अवसर हैं।

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रोजगार

प्रत्यक्ष रोजगार में भूमि की तैयारी, रोपण, सिंचाई, कीट

प्रबंधन और कटाई जैसी गतिविधियाँ शामिल हैं। अप्रत्यक्ष रोजगार चीनी मिलों या *डिस्टिलरी* में मशीनरी रखरखाव, परिवहन, भंडारण और प्रसंस्करण जैसी संबंधित गतिविधियों के माध्यम से उत्पन्न होता है। इनपुट आपूर्तिकर्ताओं, उपकरण निर्माताओं और लॉजिस्टिक्स प्रदाताओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सहायक सेवाएँ भी रोजगार में योगदान करती हैं।

परिवर्तनशील रोजगार गतिशीलता

मशीनीकरण, खेती के तरीकों में बदलाव और बाजार की गतिशीलता जैसे कारकों के कारण विभिन्न क्षेत्रों और समय के साथ गन्ने की खेती से रोजगार का स्तर। इन विविधताओं के बावजूद, गन्ना रोजगार के लिए एक महत्वपूर्ण फसल बनी हुई है, खासकर उन क्षेत्रों में जहां यह कृषि पर हावी है।

ग्रामीण रोजगार में योगदान

अध्ययन लगातार दिखाते हैं कि गन्ने की खेती रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण योगदान देती है, जिसका किसानों और ग्रामीण समुदायों की आजीविका पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ये अंर्तदृष्टि ग्रामीण रोजगार को बढ़ावा देने में गन्ने की खेती की महत्वपूर्ण भूमिका पर जोर देती है।

अतः उपरोक्त सभी विषयों को जानने के बाद हम ऐसा कह सकते है कि गन्ने की खेती विश्वव्यापी है, साथ ही साथ बहुत महत्वपूर्ण और लाभकारी भी है।

बारह मास की उपज हूँ मैं, गन्ना मेरा नाम।

गुड़, चीनी, ईंधन, चारा, सबमें आऊँ काम।।

समिति यह संस्तुति करती है कि निरीक्षण कार्य के लिए एक प्रोफार्मा तैयार किया जाए और जब भी कोई अधिकारी (वरिष्ठतम अधिकारी सहित) अपने किसी अधीनस्थ कार्यालय में निरीक्षण या दौरे पर जाए तो उसस उक्त प्रोफार्मा को अनिवार्य रूप से भरवाया जाए कि प्रत्येक कार्यालय का वर्ष में कम से कम एक राजभाषा संबंधी निरीक्षण अवश्य हो चाहे किसी भी स्तर पर हो। यह निरीक्षण मंत्रालय, मुख्यालय या राजभाषा विभाग द्वारा किया जा सकता है।

संस्तुति संख्या : 16
राष्ट्रपति आदेश दिनांक 31 मार्च, 2017

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

गेहूँ उत्पादन में संतुलित उर्वरक का योगदान

राज कुमार सरोज[1], राम रतन वर्मा[1], तपेन्द्र कुमार श्रीवास्तव[1], पुष्पा सिंह[1], स्वाति सिंह[2], पूजा सरोज[2], उपेंद्र कुमार[1] एवं पंकज पटेल[1]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

गेहूँ का वैज्ञानिक नाम *(ट्रिटिकम एस्टिवम)*, जो *पोएसी* फैमिली में आता है तथा उत्पत्ति केन्द्र–दक्षिण पश्चिम एशिया है। यह भारत की प्रमुख खाद्यान्न फसल है। भारत में धान के बाद गेहूँ की फसल ही सबसे प्रमुख फसल है जिसकी सबसे अधिक खपत उत्तर और उत्तर–पश्चिम भारत में होती है, जिसकी खेती लगभग भारत के सभी राज्यों में की जाती है। वहीं भारत में सबसे अधिक गेहूँ उत्पादन करने वाले राज्यों की बात करें, तो इसमें अग्रणी राज्य उत्तर प्रदेश है यह भारत के कुल गेहूँ उत्पादन में 32.42 प्रतिशत का योगदान देता है, मध्य प्रदेश लगभग 20.98 प्रतिशत, पंजाब 13.87 प्रतिशत, हरियाणा 11.63 प्रतिशत, राजस्थान 9.36 प्रतिशत, बिहार 8.00 प्रतिशत, गुजरात 7.12 प्रतिशत, महाराष्ट्र 6.15 प्रतिशत, उत्तराखंड 5.22 प्रतिशत, तथा पश्चिम बंगाल लगभग 4.89 प्रतिशत, गेहूँ उत्पादन में अपना योगदान देते है। गेहूँ का भरपूर उत्पादन पाने के लिए संतुलित खाद का उपयोग अति आवश्यक होता है। इसके उपयोग से खेत की उपजाऊ शक्ति बनी रहती है तथा पौधों में वृद्वि, स्वस्थ एवं संतुलित होती है। संतुलित खाद का अर्थ है कि किसी स्थान विशेष की मिट्टी, फसल और वातावरण के आधार पर मुख्य उर्वरक तत्व जैसे– नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की उचित मात्रा, सही अनुपात में सही समय पर दी जाए, जिससे गेहूँ की फसल से अधिक से अधिक उत्पादन लिया जा सके। गेहूँ की फसल के लिये संतुलित खाद में नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश का अनुपात क्रमशः 4 : 2 : 1 होता है अर्थात नत्रजन चार भाग, फास्फोरस दो भाग एवं एक भाग पोटाश का अनुपात होता है।

संतुलित खाद उपयोग की आवश्यकता

गेहूँ की फसल के लिए उर्वरक की मात्रा और उपलब्ध सिंचाई का तालमेल होना आवश्यक होता है। ऊँचे कद वाली गेहूँ की प्रजातियाँ अधिक खाद एवं सिंचाई सहन नहीं कर सकती हैं और ऐसी स्थिति में फसल गिर जाती है। इसके विपरीत बौनी किस्में अधिक खाद और सिंचाई मिलने पर अधिक उपज देती हैं। बौनी किस्मों में नत्रजन की मात्रा 120 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर तक दी जा सकती है तथा किस्म की उपज क्षमता के अनुरूप अत्यधिक पैदावार ली जा सकती है। खेतों की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिए उर्वरकों की आवश्यक मात्रा का उपयोग हर फसल के साथ लगातार करना होता है। खाद्यान्न फसलें जैसे– गेहूँ, मक्का, ज्वार और धान अधिक संवेदनशील होती हैं अर्थात पर्याप्त खाद न मिलने पर इनकी पैदावार पर बुरा असर पड़ता है। बाजारों में कई प्रकार के उर्वरक उपलब्ध हैं, जिनसे नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश विभिन्न मात्राओं में प्राप्त होते हैं। गेहूँ की फसल में मुख्य पोषक तत्वों का संतुलन बनाये रखते हुए, उपलब्ध सिंचाई व्यवस्था के आधार पर उर्वरक विशेष की कितनी मात्रा गेहूँ की फसल में दी जाए, तालिका–1 में दी गई है।

सही समय एवं विधि के अनुसार उर्वरक का उपयोग

गेहूँ की फसल में फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय एवं बची हुई आधी मात्रा को दो हिस्सों में बांटकर पहली और दूसरी सिंचाई के साथ यूरिया का छिड़काव कर देना चाहिए। अगर सिंचाई की व्यवस्था कम है तो नत्रजन की शेष आधी मात्रा पहली सिंचाई के समय दे देनी चाहिए। असिंचित

चित्र 1: गेहूँ की फसल में नत्रजन का छिड़काव

तालिका–1 गेहूँ की फसल के लिये उर्वरक की आवश्यक मात्रा

सिंचाई के आधार पर असिंचित अवस्था, सिंचित अवस्था, समय से बुवाई और सिंचित अवस्था देरी से बुवाई के लिए उर्वरक तत्वों का प्रयोग लाभप्रद होता है।

क्र.सं.	परिस्थिति	उर्वरक	उर्वरकों की मात्रा (किलोग्राम)		
			प्रति बीघा	प्रति एकड़	प्रति हेक्टेयर
1.	असिंचित अवस्था	यूरिया (46%) नत्रजन	15	25	60
		(12 : 32 : 16)	20	30	75
		डी.ए.पी. (18 : 46 : 0)	15	20	50
		यूरिया (46%) नत्रजन	20	30	75
		म्यूरेट पोटाश (60%)	5	10	20
		सुपर फास्फेट (16%)	30	50	125
		यूरिया (46%) नत्रजन	25	40	100
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	5	10	20
2.	सिंचित अवस्था	यूरिया (46%) नत्रजन	25	40	100
		(12 : 32 : 16)	25	40	100
		डी.ए.पी. (18 : 46 : 0)	20	30	70
		यूरिया (46%) नत्रजन	25	40	100
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	5	10	25
		सुपर फास्फेट (16%)	50	75	200
		यूरिया (46%) नत्रजन	35	50	125
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	5	10	25
3.	समय से बुवाई	यूरिया (46%) नत्रजन	50	80	200
		(12 : 32 : 16)	50	80	200
		डी.ए.पी. (18 : 46 : 0)	35	50	125
		यूरिया (46%) नत्रजन	50	80	200
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	15	20	50
		सुपर फास्फेट (16%)	100	150	375
		यूरिया (46%) नत्रजन	70	100	250
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	15	20	50
4.	सिंचित अवस्था देरी से बुवाई	यूरिया (46%) नत्रजन	30	50	125
		(12 : 32 : 16)	40	60	150
		डी.ए.पी. (18 : 46 : 0)	25	40	100
		यूरिया (46%) नत्रजन	40	60	150
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	10	15	40
		सुपर फास्फेट (16%)	70	100	250
		यूरिया (46%) नत्रजन	50	70	175
		म्यूरेट ऑफ पोटाश (60%)	10	15	40

खेती में उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा का उपयोग बुवाई के समय कर देना चाहिये। जस्ते की कमी को जिंक सल्फेट द्वारा 10 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से 2–3 साल में एक बार देकर पूरा किया जा सकता है। खासकर उन खेतों में जहाँ पर कई सालों से अत्यधिक उत्पादन वाली फसलें ली जा रही हैं जिंक सल्फेट का उपयोग आवश्यक होता है।

अधिकतम उपज लेने के लिए खेतों में कार्बनिक तत्वों की कमी न होने देना

एक आदर्श खेती के लिए मृदा में कम से कम पांच प्रतिशत (5%) कार्बनिक तत्व मौजूद होना आवश्यक होता है। लगातार खेती करने एवं बार–बार अधिक उत्पादन वाली

फसल लेने से मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी आ जाती है। कार्बनिक तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए एवं मृदा की उर्वरा शक्ति व मृदा स्वास्थ्य को बनाये रखने हेतु जीवांश खादें जैसे– गोबर की खाद, मुर्गी की खाद या हरी खाद का उपयोग आवश्यक होता है। जीवांश खादों की उपयोग की मात्रा तालिका–2 में दी गई है।

तालिका 2: गेहूँ की फसल के लिए आवश्यक विभिन्न कार्बनिक जीवांश खादों की मात्रा

क्र.	कार्बनिक खाद	मात्रा
1.	गोबर की खाद	10 टन प्रति हेक्टेयर
2.	मुर्गी की खाद	2.5 टन प्रति हेक्टेयर
3.	हरी खाद	पहली वर्षा के साथ खेत में ढ़ैचा या सनई की बुवाई करें। ढ़ैचा या सनई की फसल को 45 से 50 दिन के बाद जुताई कर खेत में मिला दें।

चित्रः 2 गोबर की खाद

चित्रः 3 मुर्गी की खाद

चित्रः 4 सनई

चित्रः 5 हरी खाद (ढ़ैचा)

गेहूँ की अधिकतम उपज नवम्बर में समय से बुवाई, पर्याप्त सिंचाई की सुविधा और निम्न खाद की मात्रा का उपयोग कर प्राप्त किया जा सकता है।

अधिक खेती के लिए

क्र.	खाद	मात्रा
1.	गोबर या कम्पोस्ट खाद या मुर्गी की खाद	10 टन प्रति हेक्टेयर 2.5 टन प्रति हेक्टेयर
2.	नत्रजन	120 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
3.	फास्फोरस	60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
4.	पोटाश	30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
5.	जिंक सल्फेट	25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर

कम खेती के लिए

क्र.	खाद	मात्रा
1.	मुर्गी की खाद	2.5 टन प्रति हेक्टेयर
2.	नत्रजन	60 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
3.	फास्फोरस	30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
4.	पोटाश	25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर
5.	जिंक सल्फेट	25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर

सूक्ष्म तत्व तथा उनका महत्व

सभी प्रकार के पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए मुख्यतः 17 प्रकार के तत्वों की आवश्यकता होती है। जिनमें नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश अति आवश्यक तथा प्रमुख पोषक तत्व हैं। फास्फेट (स्फुर) पौधे का जीवन है, पोटाश उसे शक्ति देता है और अन्य तत्व अलग–अलग पदार्थों को बनाने में मदद देते हैं। गंधक और नत्रजन प्रोटीन के मुख्य भाग हैं, लोहा (आयरन) पौधे के हरे रंग का प्रमुख भाग है। जस्ता तथा मैंगनीज से हार्मोन आदि बनाने में मदद मिलती है। अन्य तत्व जैसे–तांबा, मॉलिब्डेनम, चूना, मैग्नीशियम, बोरॉन, क्लोरीन आदि बहुत कम मात्रा में उपयोग में आते हैं। गेहूँ की फसल में आमतौर पर जिंक, मैंगनीज, आयरन तथा गंधक की कमी देखी गई है। उर्वरक द्वारा इन तत्वों का मृदा में संतुलन बनाये रखना अति आवश्यक होता है।

गेहूँ की फसल में तत्वों की कमी के लक्षण तथा उनकी पहचान

1. नत्रजन की कमी के कारण पत्तियों के किनारे पीले पड़ जाते है और फसल पीली दिखती है। दाने शर्बती न होकर सफेद झांई लिए होते है।

चित्र 6: नत्रजन की कमी के लक्षण

2. फास्फोरस की कमी के कारण पत्तियों के किनारे बैंगनी भूरे रंग के होने लगते है।

चित्र 7: फास्फोरस की कमी के लक्षण

3. पोटाश की कमी से डंडिया कमजोर और कोमल हो जाती है तथा दानों की चमक कम हो जाती है।

चित्र 8: पोटाश की कमी के लक्षण

4. जस्ता की कमी के कारण तीसरी–चौथी पत्ती सफेदी लिए होती है तथा पौधों की बढ़वार कम हो जाती है।

चित्र 9: जस्ता की कमी के लक्षण

5. मैंगनीज की कमी के कारण पत्तों पर बैंगनी धब्बे दिखाई देते हैं।

चित्र 10: मैंगनीज की कमी के लक्षण

6. गंधक की कमी होने से पत्ते हल्के हरे रंग के और आयरन (लोहे) की कमी से पत्ते सफेद दिखाई देते हैं।

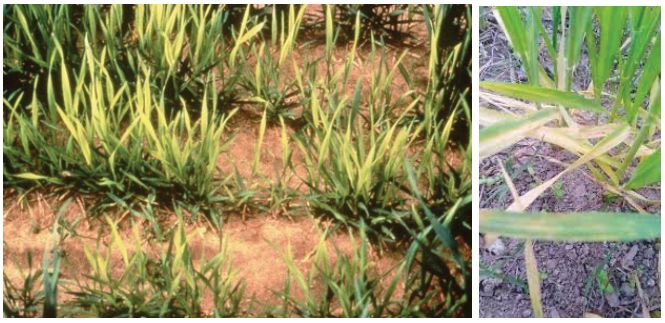

चित्र 11: गंधक एवं आयरन की कमी के लक्षण

संतुलित उर्वरक के लाभ

1. संतुलित उर्वरक के उपयोग से फसल का भरपूर उत्पादन लिया जा सकता है।
2. संतुलित उर्वरक फसल के लिये आवश्यक सभी प्रकार के पोषक तत्वों की उपलबधता को सुनिश्चित करता है। एक भी तत्व की कमी दूसरे तत्व की उपलब्धता को प्रभावित कर सकती है।
3. संतुलित उर्वरक उत्पादित फसलों की गुणवत्ता बनाए रखता है और बाजार में उत्पादों का उचित भाव मिलता है।
4. संतुलित उर्वरक भूमि को स्वस्थ, उर्वरा शक्ति एवं उत्पादन क्षमता को बनाए रखता है।
5. फसल की पैदावार संतुलित व स्वस्थ होती है।

मृदा की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये उपयोगी एवं महत्वपूर्ण सुझाव निम्न प्रकार हैं:

- प्रत्येक वर्ष या दो वर्ष में एक बार अपने खेत में कार्बनिक तत्व या कम्पोस्ट खाद (गोबर की खाद) आवश्यक रूप से डालें।
- खेत में फसल–चक्र में बदलाव लाकर, हरी खाद (ढ़ैचा, सनई) जैसी फसलों को आवश्यक रूप से लगाएं।
- क्षारीय भूमि के सुधार के लिये जिप्सम का उपयोग अवश्य करना चाहिये।
- गंधक की कमी वाले खेतों में सिंगल सुपर फास्फेट उर्वरक का उपयोग करना चाहिए, क्योंकि सिंगल सुपर फास्फेट में गंधक की मात्रा 12% होती है।
- खेत में हर तीसरे वर्ष 10 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से जिंक सल्फेट का छिड़काव, बुवाई से पहले, खेत की अंतिम जुताई के साथ करें।
- अम्लीय भूमि जिसका (पी.एच. मान 7 से कम हो) की अम्लता को चूना डालकर दूर किया जा सकता है। गेहूँ की फसल की अच्छी पैदावार लेने के लिये मृदा का पी. एच. मान 7 से 8 के बीच होना चाहिए।

गेहूँ की खेती से अधिक पैदावार लेने के लिए आवश्यक बिन्दु निम्न प्रकार हैं:

- ❖ गेहूँ की फसल से उपज, किस्म के चयन, संतुलित खाद और उर्वरक के उचित प्रयोग और फसल की देखभाल पर निर्भर करती है। लेकिन सामान्यतः उपरोक्त वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर 40 से 70 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक गेहूँ की उपज प्राप्त की जा सकती है।
- ❖ गेहूँ की खेती के लिए शुद्ध एवं प्रमाणित बीज की बुवाई बीज शोधन के बाद की जाए।
- ❖ किस्मों का चयन क्षेत्रीय अनुकूलता एवं समय विशेष के अनुसार किया जाना चाहिए।
- ❖ गेहूँ की बुवाई से पहले खेत की तैयारी के लिए *कल्टीवेटर, रोटावेटर* एवं *हैरो* आदि उपकरणों का प्रयोग कर खेत की जुताई की जानी चाहिए।
- ❖ संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग, मृदा परीक्षण के आधार पर सही समय पर उचित विधि से किया जाए।
- ❖ गेहूँ की खेती के लिए यथा सम्भव आधी उर्वरकों की मात्रा जीवांश खादों से पूरी की जानी चाहिए।
- ❖ गेहूँ की खेती के लिए दो वर्ष के बाद बीज अवश्य बदल देना चाहिए।
- ❖ गेहूँ की बुवाई हेतु *जीरो टिलेज सीड ड्रिल* विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- ❖ क्रान्तिक अवस्थाओं (ताजमूल अवस्था एवं पुष्पावस्था) पर सिंचाई समय से उचित विधि एवं मात्रा में की जानी चाहिए।
- ❖ गेहूँ की खेती में अधिक से अधिक जीवांश खादों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
- ❖ किसी भी प्रकार की खाद एवं उर्वरकों का अंधाधुंध प्रयोग न करें क्योंकि उर्वरकों की संतुलित मात्रा फसल के लिए अच्छी रहती है।
- ❖ गेहूँ की खेती हेतु जिंक और गंधक की कमी वाले खेतों में बुवाई से पहले इनकी संतुलित मात्रा अवश्य डालनी चाहिए।
- ❖ गेहूँ की फसल में कीट एवं रोगों का प्रकोप होने पर उसका नियंत्रण समय से किया जाना चाहिए।

अन्य आवश्यक सावधानियां

- खेत की मृदा की प्रयोगशाला में जांच के आधार पर उर्वरकों की संतुलित मात्रा का उपयोग करना चाहिए।
- उर्वरक तथा बीज एक साथ मिलाकर खेत में न बोएं। उर्वरक, बीज से लगभग 5 सें.मी. नीचे डालना चाहिए। जहां तक हो सके, बुवाई के समय मिश्रित उर्वरक जैसे– इफ्को यूरिया नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश (12:32:16) का उपयोग करें।
- खेत के उतने ही हिस्से में यूरिया का छिड़काव करना चाहिए, जितने हिस्से में उसी दिन सिंचाई करना सम्भव हो सके।
- यूरिया के छिड़काव के बाद सिंचाई के पानी पर नियंत्रण रखना चाहिये क्योंकि अधिक पानी खेत में भरने से यूरिया या तो खेत से बहकर बाहर निकल जाती है, या जमीन के अन्दर अधिक गहराई में स्थिर हो जाती है जिसकी वजह से नत्रजन की मात्रा पौधों की जड़ों को उपलब्ध नहीं हो पाती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

धान की फसल में कृषि यंत्रों का महत्व

राहुल कुमार यादव[1] एवं दिलीप कुमार[2]
[1]गोबिन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर
[2]भाकृआनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत को एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है और यहाँ की अधिकांश जनसंख्या खेती पर आश्रित है। भारत में प्रतिवर्ष विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है। कभी–कभी वातावरण अनुकूल न होने तथा अन्य कारणों से फसलों के उत्पादन में भारी कमी हो जाती है। हालांकि कृषक अपनी फसल के बेहतर उत्पादन के लिए विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं जिसमें से धान की फसल की बुवाई से लेकर कटाई तक शामिल हैं। कृषि यंत्रों से कृषकों को कम लागत लगानी पड़ती है और उत्पादन भी बढ़ता है। यह सभी कृषकों ने स्वीकार किया है कि लागत को कम करने के तरीकों में से एक तरीका मशीनीकरण भी है। धान की फसल में चार कृषि यंत्रों का उपयोग जैसे– *ड्रम सीडर, कोनो वीडर, ब्रश कटर* और *पैडी पेडल* संचालित यंत्र द्वारा श्रम को भी बचाया जा सकता है और आय को भी दोगुनी किया जा सकता है। इस यंत्रों का उपयोग बुवाई से लेकर कटाई तक किया जा सकता है और दो कृषक इस काम को आसानी से कर सकते है।

ड्रम सीडर कृषि यंत्र का उपयोग

इस यंत्र से धान की सीधी बुवाई की जा सकती है। यह काफी सस्ता और आसान तकनीक वाला यंत्र है, इसको काफी आसान तरीके से बनाया गया है। इसका वजन 8–10 किलोग्राम होता है जिसे कृषक खेत में आसानी से उठाकर या चलाकर ले जा सकते हैं। इसमें दोनों किनारों पर प्लास्टिक पहिये बेलनकार लगे होते हैं, और चार प्लास्टिक के खोखले ड्रम लगे होते हैं जिनका व्यास लगभग 60 सेंटीमीटर का होता है। प्लास्टिक के खोखले ड्रम बीज रखने के लिए बने होते हैं। प्रत्येक प्लास्टिक ड्रम में 2–3 किलोग्राम बीज रखा जा सकता है। *ड्रम सीडर* से बुवाई के लिए सबसे पहले बीज को 12 घंटों के लिए पानी में छोड़ें, उसके बाद उपचार के लिए कार्बेन्डजीम 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से मिलाकर जूट के बोरे से 20 घंटे के लिए छोड़ देते हैं। बीज में हल्का अंकुरण होने के बाद ही बुवाई के लिए खोखले ड्रम में रखें। प्लास्टिक के खोखले ड्रम में छिद्र बने होते हैं, जिससे बीज गुरुत्वाकर्षण के द्वारा गिरा करते हैं। बुवाई वाले खेत में पानी की मात्रा नहीं रहनी चाहिए, लेकिन खेत में कीचड़ होना जरुरी है। *ड्रम सीडर* कृषि यंत्र को खींचने के लिए एक हत्था भी लगा होता है जिससे कृषक सरल तरीके से इसे आसानी से खीच सके।

ड्रम सीडर से लाभ

- इस यंत्र को एक आदमी आसानी से चला सकता है।
- धान की फसल की अवधि 7–10 दिन कम होती है।
- इस यंत्र को महिला कृषक भी चला सकती है।
- खरपतवार नियन्त्रण आसानी से होता है।
- इसके लिए टैक्टर की आवश्यकता भी नहीं पड़ती।
- बीज शोधन करने के बाद छाया में सुखाकर गीले बोरों से ढक दें।
- बीजों की बुवाई 5–6 घंटे के अन्दर कर देनी चाहिए, क्योंकि खेत की मिट्टी कड़ी होने लगती है।
- बीज अंकुरित होने पर बुवाई करना चाहिए। ध्यान दें कि खेत में 2 से 5 इंच के बीच पानी रहने पर बुवाई करें।
- अगर ड्रम सीडर से धान की सीधी बुवाई कर रहे हैं, तो सबसे पहले खेत की मिट्टी को समतल बना लें।

विशिष्ट वर्णन

1	*व्हील* की संख्या	2
2	*व्हील* का व्यास (सेंटीमीटर)	60
3	पंक्ति से पंक्ति की दूरी (सेंटीमीटर)	20
4	*प्लास्टिक ड्रम* (संख्या)	4

5	*ऑपरेशन* की औसत गहराई	1-2 सें.मी.
6	संचालन की गति (किलोमीटर प्रति घंटा)	1.2
7	वजन (कि.ग्रा.)	8-10
8	दक्षता (%)	70.79
9	लागत (₹)	5700

धान की फसल में खरपतवार से परेशान कृषक को *कोनो वीडर* कृषि यंत्र का उपाय

धान की खेती काफी मेहनत वाली मानी जाती है। निराई गुड़ाई की प्रक्रिया में काफी मानव श्रम लगता है और कई दिन तक चलने वाली एक प्रक्रिया बन जाती है। लेकिन अब धान की निराई गुड़ाई के लिए *कोनो वीडर* यंत्र का इस्तेमाल हो रहा है। इससे काम तेजी से और आसानी से पूरा करने में मदद मिल रही है। *कोनो वीडर मैन्युअल* रूप से संचालित यंत्र है, जो एक मानव आसानी से चला सकता है। यह यंत्र धान के रोपण के 20 से 25 दिनों के बाद निराई गुड़ाई करने के लिए उपयोग किया जाता है। धान की फसल की खड़ी पंक्तियों और स्तम्भों के बीच में खरपतवारों को उखाड़कर मिट्टी में मिला देता है जो किसानों के खेत में हरी खाद का काम करता है, किसानों को खेत में रसायनिक खाद न के बराबर देनी पड़ती है। जिससे उनकी लागत धान के खेत में कम लगती है और उत्पादन अधिक होता है। धान की निराई गुड़ाई 7 से 10 दिनों के अन्तराल पर करते रहना चाहिए। *कोनो वीडर* में दो कटे हुए *रोलर्स* एक के पीछे एक लम्बे *हैंडल* के नीचे फिट किये गए है। शंक्वाकार *रोलर्स* की परिधि पर दांतेदार *ब्लेड* होते हैं, सामने के हिस्से में दिया गया एक *फ्लोट यूनिट* को मिट्टी में डूबने से रोकता है। *कोनो वीडर* का उपयोग निराई के अलावा हरी खाद की फसल को रौंदने के लिए भी किया जा सकता है। यह ऊपरी मिट्टी को परेशान करता है, और वातन को भी बढ़ाता है। कृषि यंत्र *कोनो वीडर* को खींचने के लिए एक हत्था भी लगा होता है। जिसे कृषक सरल तरीके से इसे आसानी से खींच सके। उपकरण खड़े मुद्रा में संचालित होता है। इस यंत्र की कार्य क्षमता लगभग 0.18 हेक्टेयर प्रतिदिन है।

कोनो वीडर के गुण

- धान में निराई–गुड़ाई आसानी से कर सकते हैं।
- इस यंत्र को महिला भी आसानी से चला सकती है।
- यह यंत्र खरपतवार को मिट्टी में अच्छी तरह मथ देता है।
- इस यंत्र की लागत कम है जिसे किसान आसानी से खरीद सकते हैं।
- किसानों के खेत में खरपतवार को दबा कर जैविक खाद का काम करता है।

विशिष्ट वर्णन

विशिष्ट वर्णन

शंक्वाकार रोलर्स (संख्या)	*व्हील* का व्यास (मि.मी.)	गहराई (मि.मी.)	भार (कि.ग्रा.)	लागत (₹)
2	400	55	8-10	1500

ब्रश कटर कृषि यंत्र

हाथ से कटाई करने में श्रम और समय बहुत लगता है। इसमें कृषक का समय व पैसा बहुत बर्बाद होता है। धान की फसल की समय पर कटाई होनी बहुत जरुरी होती है। यदि समय पर धान की पसल की कटाई नहीं की गई तो बहुत नुकसान होता है। आज के समय में खेतों में काम करने वाले मजदूर न मिलने के कारण कृषकों के समक्ष बहुत बड़ी समस्या उत्पन्न हो गयी है। ऐसे में समय पर कटाई करना कृषकों के लिए टेढ़ी खीर बन गयी है। इस समस्या को आधुनिक यंत्रों व मशीनों के द्वारा हल किया जा सकता है। पहले व्यापारियों ने धान की फसल कटाई के लिए बड़ी–बड़ी मशीनें बाजार में उतारी जिन्हें छोटे मध्यम कृषक खरीद नहीं सकते क्योंकि उतनी उनकी आय नहीं होती है लेकिन इस मशीन को छोटे मध्यम कृषक आसानी से ले सकते हैं। इस यंत्र से केवल धान फसल की कटाई ही नहीं कर सकते हैं बल्कि इससे अनेक प्रकार की फसलों की कटाई भी आसानी से कर सकते हैं। यह यंत्र पेट्रोल और मोबिल आयल से चलने वाली चार *स्ट्रोक* वाली मोटर से *लैस* है। इसमें एक *हैंडल* लगा होता है। *हैंडल* के आगे *कटर* लगाने के लिए एक स्थान दिया होता है। इसमें

आप अपने जरुरत के ब्लेड लगाकर अपनी मनचाही फसल काट सकते हैं। इसका भार 7 से 10 किलोग्राम तक होता है।

ब्रश कटर कृषि यंत्र का उपयोग

ब्रश कटर कृषि यंत्र का खेती–बड़ी में निम्नलिखित उपयोग हैं:

- इस कृषि यंत्र की मदद से हम गेहूँ/धान की कटाई कर सकते हैं।
- *ब्रश कटर* कृषि यंत्र घास/हरा चारे की भी कटाई कर सकता है।
- *ब्रश कटर* कृषि यंत्र उपयोग करके हम खेतों में जमे पानी को भी निकाल सकते हैं।
- इस कृषि यंत्र के उपयोग से हम पानी का *स्प्रे* करके अपनी गाड़ी/अपनी मवेशियों को साफ कर सकते हैं।
- इस कृषि यंत्र की मदद से हम खेतों की मेड़ों पर आसानी से मिट्टी डाल सकते हैं।
- इस कृषि यंत्र को उपयोग करके खेतों की मिट्टी की जुताई कर सकते हैं।

विशिष्ट वर्णन

1	शक्ति का स्रोत	पेट्रोल
2	इंजन के प्रकार	दो *स्ट्रोक*
3	विस्थापन (सीसी)	25.4
4	ईंधन टैंक की क्षमता (मि.ली.)	700
5	इंजन की शक्ति (किलोवाट)	0.75
6	इंजन का आरपीएम/मिनट	6500-7000
7	निष्क्रिय गति	2800-3200
8	ब्लेड व्यास	415
9	उपमार्ग की चौड़ाई	255
10	कुल भार (किलोग्राम)	7-9
11	कार्य श्रमिक (हे./घंटा)	0.029
12	लागत (₹)	13629

ब्रश कटर कृषि यंत्र के लाभ

ब्रश कटर कृषि यंत्र से कृषक को निम्नलिखित प्रकार के लाभ मिलते हैं:

- इस कृषि यंत्र को कृषक आसानी से खेत में ले जा सकते हैं।
- इससे हम एक से अधिक फसलों की कटाई कर सकते हैं।
- इसकी कीमत अन्य फसल काटने वाले कृषि यंत्रों की तुलना में काफी कम होती है।
- इस कृषि यंत्र से खेत में जमा हुआ पानी आसानी से निकाल सकते हैं।

निष्कर्ष

ब्रश कटर कृषि यंत्र छोटे और माध्यम वर्गों के कृषकों के लिए बहुत ही उपयोगी कृषि यंत्र है जो कृषकों को खेती करने में बहुत मदद करता है और हमारी मजदूरी के खर्चे को भी बचाता है और इसकी कीमत भी काफी कम है जिससे कि कोई भी कृषक आसानी से इसे खरीद सकता है और अपनी मजदूर के खर्चे को कम कर सकता है। इस कृषि यंत्र की मदद से हम अनेक प्रकार के काम कर सकते है जैसे– गेहूँ की कटाई, धान की कटाई, घास की कटाई, हरा चारा की कटाई, खेतों में से पानी निकालना, पानी को *स्प्रे* करना, लकड़ी काटने का काम, खेतों की निराई गुड़ाई का काम कर सकते हैं।

थ्रेशर, पैडी पेडल संचालित यंत्र का उपयोग

इस *थ्रेशर* यंत्र को दो कृषक आसानी से चला सकते हैं। अपने पैरों के द्वारा इस यंत्र से एक कृषक धान के बंडल को उठाता है और दूसरा कृषक यंत्र को पैरों के द्वारा चलाता रहता है। जब पहला कृषक यंत्रों के पास खड़ा होता है। धान के बंडल को लेकर तब तक दूसरा कृषक धान के बंडल को उठाता है। पहला कृषक धान के बंडल को इस यंत्र में लगी लकड़ी के एक सिलेंडर पर रखता है, और बंडल को सिलेंडर पर घुमाता रहता है। यंत्र का सिलेंडर घूमता रहता है। इस कारण बीज अलग हो जाता है और डंठल अलग हो जाता है। उन सिलेंडर पर छोरों पर *लूप एम्बेडेड/वेल्डेड* होते हैं। लूप का उपयोग पौधों के डंठल से बीज निकालने के लिए किया जाता है। लूप एल्यूनियम का होता है, सिलेंडर पर लगी लूप की ऊँचाई लगभग 40 मि.मी. और 60 मि.मी. होती है। सिलेंडर की चाल लगभग 250 से 300 चक्कर पर मिनट *(आरपीएम)* होती है। सिलेंडर को *पावर ट्रांसमिशन सिस्टम* के माध्यम से

पैर पेडल से एक रोटरी गति दी जाती है जिसमें एक बड़ा गेयर और एक छोटा गेयर लगा होता है। बड़े गेयर में दाँतों की संख्या 120 होती है और छोटे गेयर में दातों की संख्या 20 होती है। *पैडी पेडल* संचालित *थ्रेशर* यंत्र में *फैन* भी लगा रहता है। सिलेंडर के नीचे जो धान को साफ करता है *फैन* की चाल 200 से 220 होता है। *फैन थ्रेशर सिलेंडर* से *चैन* के माध्यम से चलता है जो धान में छोटे–छोटे डंठल से अलग भी करता रहता है, कृषकों की समय की बचत करता है। जिससे कृषक को धान को साफ करने के लिए अलग से *फैन* की जरूरत नहीं होती है, उससे कृषक का समय और लागत बचती है।

यंत्र का संरक्षण

उपयोग से पहले मशीन के सभी *नट* और *बोल्ट* को जांचना चाहिए और यदि आवश्यकता हो तो कड़ा कर दिया जाना चाहिए और असर बिंदुओं को बढ़ाना या तेल लगाना चाहिए।

लाभ

थ्रेशर, पैडी पेडल संचालित कृषि यंत्र से कृषक को निम्नलिखित प्रकार के लाभ मिलती हैं:

- कम शारीरिक श्रम और अधिक दक्षता
- अनाज को कूटने या पीटने के विपरीत *थ्रेशर* का उपयोग करने से कम टूटता है।
- धान को साफ करने की जरुरत नहीं पड़ती है।
- यह यंत्र हल्का होता है जिसे कृषक खेत खलिहान में ले जा सकते है।
- इसकी लागत कम आती है जिससे कृषक इसको आसानी से खरीद सकते है।
- इस यंत्र को महिला कृषक भी आसानी से चला सकती है।
- इस यंत्र को चलाने के लिए दो कृषकों की जरुरत पड़ती है।

विशिष्ट वर्णन

1	गियर (संख्या)	2
2	समग्र माप, (मि.मी.)	782×643×1.255
3	सिलेंडर की चाल	250-300
4	*आरपीएम*	200-220
5	फैन की चाल	98-99
6	*आरपीएम*	8-10
7	सफाई दक्षता (%)	1-1.25
8	भार (कि.ग्रा.)	14500

आज़ादी के अमृत महोत्सव वर्ष में हम सब हिंदी प्रेमियों को यह संकल्प लेना चाहिए कि जब आज़ादी के 100 वर्ष पूरे हों, तब तक राजभाषा और स्थानीय भाषाओं का दबदबा इतना बुलंद हो कि किसी भी विदेशी भाषा का सहयोग न लेना पड़े।

अमित शाह

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

मक्का तथा लोबिया की अंतर्सस्य से कमाएँ अधिक लाभ

हिमांशु सिंह[1], अजीत सिंह[1], मनीष कुमार सिंह[1], जयश्री सिंह[1] एवं बृजेश कुमार मौर्या[2]

[1]बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा

[2]चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

परिचय

भारत की जलवायु में प्रति वर्ष दो या दो से अधिक फसलें आसानी से उगाई जा सकती हैं। वर्षा आधारित क्षेत्रों में फसल जोखिम को कम करने के लिए अंतःफसल एक उत्तम विकल्प है। एक ही खेत में दो या दो से अधिक फसलें एक साथ उगाने को अंतःफसल कहा जाता है। दोनों फसलों की बुआई या तो एक साथ या अलग–अलग चरणों में की जाती है। अंतःफसल खेती भारत में मुख्य रूप से भारत के अर्ध–शुष्क और शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में की जाती है। अंतःफसल से प्राप्त लाभ के मूल्यांकन हेतु भूमि समतुल्य अनुपात का प्रयोग किया जाता है। यह दोनों फसलों की संयुक्त पैदावार पर अंतःफसली प्रणालियों के उपयोग के लाभों को मापता है।

अनाज तथा दलहनी वर्ग की फसलों को अंतःफसल के लिए अधिक उपयुक्त माना जाता है। मक्का उर्वरता क्षरण के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील है, जिसमें सबसे अधिक मात्रा में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश की हानि होती है जिससे किसानों को काफी नुकसान होता है। इस समस्या के निदान के लिए मक्का के साथ लोबिया की खेती की जा सकती है क्योंकि लोबिया अपनी नाइट्रोजन आवश्यकताओं के अलावा, वायुमंडलीय नाइट्रोजन को भी स्थिर करता है। यह अंततः अनाज की नाइट्रोजन की आवश्यकताओं को आंशिक रूप से पूरा करने में मदद करता है, जो कि फसल विविधीकरण के द्वारा सब्जियों की उपलब्धता बढ़ाने के साथ–साथ खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोबिया एक गहरी जड़ वाली, प्रारंभिक विकास के दौरान धीमी गति से बढ़ने वाली फसल है, इसके विपरीत मक्का उथली जड़ वाली तथा अधिक तेजी से बढ़ने वाली फसल है। जब मक्का को लोबिया के साथ मिश्रण में उगाया जाता है तब प्रति पौधा अधिकतम उपज, शुष्क पदार्थ प्रतिशत और प्रोटीन प्रतिशत का उत्पादन होता है।

खेती की तैयारी

ऐसी भूमि जहाँ सिंचाई की उपयुक्त सुविधा हो तथा जल जमाव एवं ऊसर से मुक्त हो, मक्का और लोबिया के अंतःफसल के लिए उपयुक्त होती है। खेत की तैयारी करते समय मिट्टी पलटने वाले हल से 10–12 सें.मी. गहरी एक जुताई तथा उसके बाद *कल्टीवेटर* या देशी हल से दो–तीन जुताइयाँ करके पाटा लगा देना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद होंगा तथा खर–पतवार निकालने की व्यवस्था की जाती है। ऐसा करने से खेत की नमी बनी रहेगी तथा खेत खर–पतवार से मुक्त हो जाएगा।

किस्मों का चुनाव

अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उन्नत किस्मों का चुनाव अति आवश्यक है। किस्मों का चुनाव करते समय ध्यान रखना चाहिए कि किस्म रोग प्रतिरोधी हो तथा क्षेत्र विशेष के लिए अनुकूल हो। मक्का की उन्नत किस्में जैसे कंचन तथा नवजोत आदि का चयन करें तथा लोबिया की उन्नत किस्मों में पूसा कोमल व पंत लोबिया–3 आदि प्रमुख है।

बीजोपचार

बीज सदैव प्रमाणित व फंफूदीनाशक से उपचारित करके बोना चाहिए। लोबिया एक दलहनी फसल है। अतः इसे *राइजोबियम* कल्चर से भी उपचारित करके बोना चाहिए। *राइजोबियम* कल्चर से उपचारित करने से पौधों की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाली ग्रंथिया अधिक बनती हैं। इससे फसल की अच्छी पैदावार मिलती है।

बुवाई का समय

मक्का तथा लोबिया के अंतरसस्य खेती करने के लिए फसल की बुवाई अगेती करना लाभदायक रहता है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहाँ पर 1 जून से 15 जून तक फसल की बुवाई कर देनी चाहिए। वर्षा पर निर्भर करने वाले क्षेत्रों में बुवाई जुलाई के प्रथम सप्ताह में ही करनी चाहिए। बुवाई के समय का प्रभाव उपज पर सीधा पड़ता है। देर से बुवाई करने पर उपज में कमी की संभवना रहती है।

बुवाई की विधि

बुवाई सदैव पंक्तियों में करना उत्तम होता है। बुवाई के समय सबसे पहले मक्का के बीजों की बुवाई पारम्परिक विधि से ही कर देनी चाहिए। मक्का की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 90 सेंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 सेंटीमीटर रखते हुए मक्का की दो पंक्तियों के बीच एक पंक्ति में लोबिया की बुवाई करनी चाहिएतथा 15–20 दिन के बाद निराई के समय अतिरिक्त पौधे निकाल देने चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

अधिक उपज के लिए उर्वरक का उपयोग आवश्यक होता है। उर्वरक डालने से पहले मिट्टी की जाँच जरूर कर लेना चाहिए। लोबिया एक दलहनी वर्ग की फसल है अतः इसे नाइट्रोजन की आवश्यकता कम होती है। प्रारम्भ में राइजोबियम जीवाणु की कार्य–क्षमता बढ़ने तक पौधों को नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। बुवाई से पहले संस्तुत की गई नाइट्रोजन की आधी मात्रा 50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर व फॉस्फोरस 60 कि. ग्रा. प्रति हेक्टेयर और पोटाश 40 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की पूरी मात्रा मृदा में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। शेष 50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन बुवाई के 30–35 दिन बाद पंक्तियों के बीच छिड़कें।

सिंचाई

पौधों की उचित बढ़वार के लिए समय पर सिंचाई अति आवश्यक है। वर्षा ऋतु में प्रायः सिंचाई की आवश्यकता कम होती है किन्तु वर्षा न होने पर सिंचाई करना आवश्यक होता है। पहली सिंचाई बुवाई के 20–25 दिन बाद मृदा की नमी को ध्यान में रखते हुए हल्की करनी चाहिए। दूसरी तथा तीसरी सिंचाई 15 दिन के अंतराल पर कर देनी चाहिए। वर्षा के अधिक जल को खेत से बाहर निकालने के लिए उचित जल निकास की व्यवस्था भी अत्यधिक आवश्यक है क्योंकि जल जमाव के कारण पौधों का विकास नहीं होता है तथा उपज में कमी आ जाती है।

निष्कर्ष

इंटरक्रॉपिंग अनिवार्य रूप से एक बहुफसलीय प्रथा है जिसमें एक ही खेत में दो से अधिक फसलें उगाना शामिल हैं। आज किसानों के लिए प्राथमिक चुनौतियों में से एक स्थायी तरीके से प्रति हेक्टेयर उत्पादन बढ़ाना है, जिसे *इंटरक्रॉपिंग मॉडल* अपनाकर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में किसान *इंटरक्रॉपिंग* अपनाकर सीमित संसाधनों के साथ भी कम लागत से अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, एक ही समय में दो फसलें उगाकर पूरे वर्ष दो फसलें प्राप्त कर सकता है।

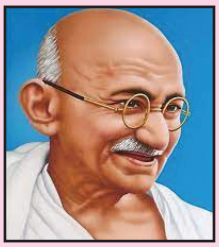

जिस भाषा में तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की हो, वह अवश्य ही पवित्र है, और उसके सामने कोई भाषा नहीं ठहर सकती।

– महात्मा गाँधी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बेल की किस्मों का प्रजननः वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की संभावनाएं

संजय कुमार सिंह[1], देवेन्द्र पाण्डेय[1], अंजू बाजपेयी[1], जय प्रकाश वर्मा[2], शिवपूजन[1] एवं अजय कुमार त्रिवेदी[1]

[1]भाकृअनुप–केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ

[2]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बेल *एगल मार्मेलोस (एल.) कोरिया एक्स रॉक्सब रुटेसी* परिवार से संबंधित है तथा सबसे पुराने ज्ञात स्वदेशी फलों में से एक है। इसका व्यापक वितरण विभिन्न प्रकार की मृदा–जलवायु स्थितियों के प्रति इसके अनुकूलन को दर्शाता है। बेल में कठोर जलवायु और गर्मी, सूखा और नमी की कमी की स्थितियों को सहन करने की क्षमता है। इस लेख में भारत में बेल की खेती की वर्तमान स्थिति, अपनाई गई नवीनतम प्रौद्योगिकियों यानी बेल की उन्नत किस्मों पर चर्चा करने के प्रयास किए गए हैं। बेल को देश के अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग नामों से जाना जाता है। कहीं इसे बेलगिरी तो कहीं बेलघाट या कैथा नाम से भी जाना जाता है। बेल का फल औषधीय गुणों से भरा हुआ है। इस फल का सेवन मात्र ही दर्जन भर से ज्यादा गंभीर बीमारियों की रोकथाम में सफल साबित हुआ है।

क्षेत्रफल एवं उत्पादन

भारत में अभी भी बेल की खेती व्यवस्थित रूप में एवं व्यावसायिक स्तर पर नहीं की जा रही है जिस कारण से बेल के अन्तर्गत क्षेत्रफल और कुल फलोत्पादन के सटीक आँकड़ें उपलब्ध नहीं हैं। विगत कुछ वर्षों में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों एवं राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा बेल के आनुवांशिक सुधार हेतु कई अनुसंधान योजनाएं चलाई गई हैं जिनसे उन्नत प्रजातियों का विकास सम्भव हुआ है। अधिक उत्पादक प्रजातियों के पौधों की सुगम उपलब्धता भी सुनिश्चित हुई है। इस कारण से कुछ प्रगतिशील किसानों ने बेल की व्यावसायिक खेती में रूचि लेना प्रारम्भ किया है और वो बेल की व्यावसायिक खेती कर भी रहे हैं। छोटे स्तर पर व्यावसायिक खेती के अतिरिक्त भारत के कुछ भागों में जंगलों एवं सड़कों के किनारे बेल के बीज से प्रवर्धित वृक्ष भी पाए जाते हैं। वर्तमान में भारत में बेल का कुल फलोत्पादन लगभग 1,000 टन है।

बेल की प्रजातियाँ और किस्में

हाल ही में, इस वंश में दो प्रजातियां भी शामिल हुई हैं, वे हैं *एगल डेकेंड्रा फर्नविल* और *एगल ग्लूटिनोसा (ब्लैंको)*

सारणी 1. बेल उत्पादन करने वाले राज्य एवं उनकी साझेदारी

क्रम संख्या	राज्यों के नाम	2021–22	
		उत्पादन (000 टन में)	साझेदारी (%)
1.	ओडिशा	45.29	55.31
2.	झारखण्ड	33.38	40.76
3.	मध्य प्रदेश	2.01	2.45
4.	हरियाणा	0.78	0.95
5.	छतीसगढ़	0.43	0.53
6.	हिमांचल प्रदेश	0.01	0.01
		कुल उत्पादन 81.90	

मेर. रुटेसी के अन्य सदस्य *साइट्रस, कासिमिरोआ, क्लॉसेना, एरेमोसिट्रस, लिमोनिया, फेरोनिएला, फॉर्च्यूनेला, पोन्सिरस, ट्राइफेसिया* आदि हैं। आनुवंशिक नाम एगल ग्रीक मूल का है और *मार्मेलोस प्रजाति* पुर्तगाली मूल की है।

बेल के औषधीय गुण

बेल *(एगल मार्मेलोस),* जिसे *बंगाल क्विंस* के नाम से भी जाना जाता है, भारत और अन्य दक्षिण पूर्व एशियाई देशों का मूल निवासी के रूप में फल देने वाला पेड़ है। पोषक तत्वों से भरपूर और अपने औषधीय गुणों के लिए मूल्यवान, बेल का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है जैसे ताजे फल, सूखे, पाउडर, शर्बत और कैंडी जैसे उत्पादों में संसाधित किया जाता है। बेल के फल को आमतौर पर ताजा, सुखाकर या जूस के रूप में उपयोग में लाया जाता है।

फल के गूदे (प्रति 100 ग्राम) में नमीः 61–64.20% प्रोटीनः 1.60–1.80, वसाः 0.2–0.43, अम्लताः 0.30, रेशाः 2.90–4.80, राखः 2.63–2.83, अपचायी शर्कराः 4.42, अनपचायी शर्कराः 9.93, खनिजः 1–70, गोंद *(म्यूसिलेज)*: 12–70–19–00 प्रतिशत, बीटा–कैरोटिनः 55–56 मिग्रा, *थायमिनः* 0.9–0.13 मिग्रा, *राइबोफ्लेविनः* 1–19 मिग्रा, नियासिनः 1–10 मिग्रा, विटामिनः 186 आई–विटामिन सीः 8–18 मिग्रा, आदि भी प्रचुर मात्रा में होता है।

खनिज पोषक तत्वा के रूप में बेल के फल में (प्रति 100 ग्राम गुदा में) तांबाः 0.19–0.20 मिलीग्राम, जस्ताः 0.28 मिलीग्राम, कैल्शियमः 80–85 मिलीग्राम, फास्फोरसः 50–51.60 मिलीग्राम, पोटैशियमः 585–603 मिलीग्राम, मैग्नीशियमः 4.0 मिलीग्राम, आयरनः 0.5–0.8 मिलीग्राम होता है।

बेल फल में मौजूद कार्बोहाइड्रेट (31.8–34.5%) के अलावा कई विभिन्न सक्रिय घटक जिनमें *स्किमियानाइन, एगेलिन, ल्यूपॉल, सिनेओल, सिट्रल, सिट्रोनेलल क्यूमिनलडिहाइड (4–आइसोप्रोपाइल बेंजाल्डिहाइड), यूजेनॉल, मार्मेसिनिन, मार्मेलोसिन, लुवैन्गोटिन, ऑराप्टेन, सोरालेन, मार्मेलाइड, फागेरिन, मार्मिन* और *टैनिन* आदि शामिल हैं। ये घटक कई बीमारियों के खिलाफ जैविक रूप से सक्रिय होते हैं जैसे *गैस्ट्रोडोडोडेनल* विकार, मलेरिया और कैंसर आदि।

बेल के किस्मों के विकास का इतिहास

पिछले कुछ वर्षों में, बढ़ती खेती और मांग के साथ, भारत में कृषि अनुसंधान संस्थानों ने उपज बढ़ाने, फलों की गुणवत्ता में सुधार और विशिष्ट जलवायु परिस्थितियों में गुणवत्तायुक्त उत्पादन हेतु विभिन्न बेल किस्मों का विकास किया है। आइए अपनी अनूठी विशेषताओं के साथ अनुसंधान के माध्यम से विकसित बेल की विविध किस्मों का पता लगाएं।

वृक्ष आकार व आकृति के अतिरिक्त, फूल और फल संबंधी लक्षणों में भी प्रचुर विविधता देखी गई है। बेल के विभिन्न प्रारूपों में फलों के आकार व आकृति, औसत फल भार, गूदे का गठन, मात्रा व रंग, रेशे की मात्रा, शर्करा की मात्रा आदि लक्षणों में प्रचुर विभिन्नता पायी जाती है। इसी प्रकार फलों में बीजों की संख्या, कोष्ठकों की संख्या और फलभित्ति की मोटाई जैसे लक्षणों में भी प्रारूप एक दूसरे से बहुत भिन्न होते है।

भारत में बेल की आनुवांशिक विविधता को मुख्यतः दो समूहों में विभक्त किया जा सकता है। पहले समूह में छोटे फल आकार वाली प्रजातियाँ व प्रारूप आते हैं जिनमें गूदे की मात्रा कम, बीजों की संख्या अधिक व *म्यूसिलेज* तथा रेशे की मात्रा अधिक होती है।

दूसरे समूह में बड़े फल आकार वाली प्रजातियाँ व प्रारूप आते हैं जिनमें गूदे की मात्रा अधिक, फलभित्ति की मोटाई कम, बीजों की संख्या कम व रेशे तथा *म्यूसिलेज* की मात्रा कम होती है। पहले समूह में आने वाले फलों को मुख्यतः औषधीय प्रयोग के लिए अच्छा माना जाता है क्योंकि उनके गूदे में *मार्मेलोसिन* व *सोरालेन* की मात्रा अधिक होती है। इसी प्रकार दूसरे समूह में आने वाले प्रारूप व प्रजातियाँ ताजा खाने व प्रसंस्कृत उत्पाद जैसे शरबत बनाने हेतु अधिक उपयुक्त होते हैं।

पहले बेल की अधिकांश किस्मों का नाम आम तौर पर उस इलाके के नाम पर रखा जाता था जहां वे प्राकृतिक रूप से उगते रहे हैं। जैसे उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों से उत्पादित किस्में हैं जैसे बस्ती नं. 1, गोण्डा नं. 1, 2 व 3, कागजी इटावा, सीवान बड़ा, देवरिया, बड़े, चकैया, लाम्बा, खमरिया, और बघेल आदि। केवल उत्तर प्रदेश में ही बेल की स्थानीय छह किस्मों का वर्णन किया गया है जैसे मिर्ज़ापुरी, दरोगाजी, ओझा, रामपुरी, आजमती और खमरिया। जिनमें से 'कागजी गोंदा' को सर्वोत्तम पाया गया।

पुराने समय में उत्तर प्रदेश में बहुत पहले व्यावसायिक रोपण हेतु 'मिर्जापुरी', 'दरोगाजी', 'ओझा', 'रामपुरी', 'आज़मती', 'खमरिया' किस्में लगायी जाती थीं। सबसे अच्छा 'मिर्जापुरी' था, जिसका छिलका बहुत पतला होता था, जो अंगूठे, गूदे के हल्के दबाव से टूट जाता था। अभी भी पतले छिलके और कुछ ही बीजों वाली एक प्रतिष्ठित बड़ी किस्म को 'कागज़ी' के नाम से जाना जाता है।

बेल के आनुवंशिक संसाधन का संरक्षण

भाकृअनुप संस्थानों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों के विभिन्न क्षेत्रीय जीन बैंकों में बेल के जननद्रव्य को संरक्षित किया जाता है। उदाहरण के तौर पर चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय का क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, बावल (हरियाणा) में 10 *जर्मप्लाज्म* को संरक्षित किया जा रहा है। आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी कृषि विश्वविद्यालय, अयोध्या (उत्तर प्रदेश) में 22 *जर्मप्लाज्म;* केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में 16 *जर्मप्लाज्म;* केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ में 180 *जर्मप्लाज्म;* गोविन्द बल्लभ पंत कृषि विश्वविद्यालय, पंतनगर (उत्तराखंड) में 10 *जर्मप्लाज्म;* केंद्रीय रुक्ष अनुसन्धान संस्थान, जोधपुर में 5 *जर्मप्लाज्म* तथा केंद्रीय बागवानी प्रायोगिक केंद्र, गोधरा (गुजरात) में 167 *जर्मप्लाज्म* को संरक्षित किया जा रहा है।

बेल की किस्मों के प्रजनन हेतु

बेल की फल की गुणवत्ता तीन कारकों पर निर्भर करती हैः गोंद *(म्युसिलेज),* चीनी और कुल *फिनोलिक्स* की मात्रा। फल में उच्च चीनी की मात्रा, विशेष रूप से गैर–अपघटित होने वाली शर्करा, कम *फिनोलिक्स* और *म्यूसिलेज* (गोंद) बेल फल को अधिक स्वादिष्ट बनाती है। यह देखा गया है कि छोटे

फलों की तुलना में बड़े आकार के फलों में अधिक गूदा, अक्सर मोटा छिलका, कम बीज, कम चीनी, कम *फिनोलिक्स* और कम *म्यूसिलेज* (श्लेष्मा) इत्यादि होता है। बेल को लोकप्रिय बनाने में, प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक उपज और फलों में अधिक खाद्य भाग का होना, रंग हल्का पीला होना, आकार गोल लिए बेलनाकार होना, स्वाद और स्वाद के प्रतिशत के संदर्भ में फलों की गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु बेल का प्रजनन महत्वपूर्ण है। बेल की किस्म के प्रजनन हेतु विशेषताओं वाले बेल के पेड़ एकत्र किए जाते हैं, वानस्पतिक विकास विशेषताओं, फूल आने, फल लगने के व्यवहार का मूल्यांकन किया जाता हैं और गुणवत्ता संबंधी विशेषताएं जो कई उन्नत किस्मों के विकास का नेतृत्व करती हैं, के अनुसार बेल की किस्मों का विकास किया जाता है।

अनियमित कृषि–जलवायु परिस्थितियों के कारण अधिकांश व्यावसायिक किस्में अधिक फल गिरने, फल के फटने, पाले का प्रभाव, धूप की चपेट में आने और कुछ शाखाओं के टूटने से पीड़ित होती हैं। बेल की सबसे प्रचलित किस्म नरेन्द्र बेल–5 में तो फलों की सिकुरण की समस्या बढ़ गयी है। इस प्रकार एक आदर्श किस्म में *कॉम्पैक्ट कैनोपी* होनी चाहिए और उच्च फल गुणवत्ता के साथ परिपक्वता तक अधिक संख्या में पेड़ पर फल बरकरार रहने चाहिए। बेल की किस्मों के विकास हेतु कुछ अन्य प्रजनन उद्देश्य नीचे सूचीबद्ध हैं:

1) पेड़ों का बौना कद, जल्दी पकने वाली, अधिक और नियमित उपज देने वाली, कम फल गिरने वाली, शाखा न टूटने वाली और धूप में न जलने वाली किस्म होनी चाहिए।
2) एक आदर्श किस्म में मध्यम आकार के फल (1–1.5 कि. ग्रा.) होने चाहिए, जिनका आकार एक समान एवं गोल, छिलका पतला, कम *फाइबर,* कम बीज और श्लेष्मा सामग्री और परिपक्वता के समय गूदे का रंग सुनहरा पीला भी होना चाहिए।
3) धूप की झुलसन से बचने के लिए *कॉम्पैक्ट कैनोपी* के साथ कांटा रहित किस्म या कम काँटों की संख्या वाली प्रजाति विकसित करना भी एक उद्देश्य है।
4) विविधता में समृद्ध जैसे अधिक कुल घुलनशील पदार्थ, *न्यूट्रास्यूटिकल्स वैल्यू* और *बायोएक्टिव* यौगिकों के साथ कम स्तर के *टैनिन, म्यूसिलेज* और उच्च स्तर की सुगंध होनी चाहिए।
5) प्रसंस्करण के उद्देश्य से किसी किस्म में फल का आकार बड़ा, गूदे की अधिक मात्रा अधिकता के साथ नारंगी पीले रंग की अधिक होनी चाहिए और बीज की मात्रा सुखद सुगंध के साथ कम होनी चाहिए।

वर्तमान में बेल की उन्नत किस्में

पिछले कुछ वर्षों में बेल की कई उन्नत प्रजातियों का विकास हुआ है। जिनमें कई अच्छे गुण जैसे–पेड़ का बौना आकार, फलों का मध्यम वजनः 1.0–1.50 किलोग्राम, कम रेशा, कम बीज, अधिक कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, पतला छिलका, कम *म्यूसिलेज* व उत्कृष्ट स्वाद आदि गुण सम्मिलित हैं। इसी के साथ इन उन्नत प्रजातियों में फल फटने व गिरने की समस्या भी कम होती है और उन्हें विभिन्न कृषि–जलवायुवीय दशाओं में व्यावसायिक खेती के लिए उपयुक्त पाया गया है। ऐसी कुछ उन्नत प्रजातियों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है:

गुजरात के गोधरा स्थित केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र ने बेल की कई किस्में विकसित की हैं, इसमें से गोमा यशी किस्म भी एक है।

गोमा यशी किस्म, किसानों के बीच एक लोकप्रिय किस्म है, जो अपने कांटे रहित, कागजी खोल की मोटाई, उच्च गुणवत्ता वाले फलों और छोटे कद के लिए जानी जाती है, जो इसे उच्च घनत्व वाले रोपण के लिए आदर्श बनाती है। गोमा यशी किस्म विभिन्न भारतीय राज्यों में 600 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में फैली हुई है। गोमा यशी किस्म का विस्तार गुजरात से आगे राजस्थान, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और आंध्र प्रदेश तक हो गया है।

सबसे आधुनिक बेल की नयी किस्म सीएचईएसबी .11 जिसकी अपनी उच्च उपज और अच्छे स्वाद के लिए जाना जाता है, यह मध्यम आकार के फल पैदा करता है, जिसका गूदे में कुल घुलनशील पदार्थ 38°ब्रिक्स और श्लेष्मा 50 प्रतिशत तक होता है। यह *एंटीऑक्सीडेंट* से भरपूर है और शर्बत, मुरब्बा और पाउडर बनाने के लिए उपयुक्त है। एक अन्य किस्म सीएचईएसबी–16 जो देर से पकने वाली किस्म है, जिसकी वृद्धि रुक–रुक कर होती है और यह उच्च एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि वाले फल पैदा करती है। फल आरटीएस *(रेडी–टू–सर्व)* पेय, कैंडी और मुरब्बा बनाने के लिए उत्कृष्ट हैं। इसी तरह बेल की एक अन्य नवीनतम किस्म सीएचईएसबी–21 है जो उच्च उपज और अच्छे स्वाद के साथ, गूदे में कुल घुलनशील पदार्थः 39°ब्रिक्स मान के साथ बड़े फल पैदा करती है। यह शर्बत, कैंडी, जैम और पाउडर बनाने के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

तालिका 1. बेल की कुछ उन्नत किस्मों का विवरण

क्र.सं.	किस्मों के नाम	विवरण
1.	नरेंद्र बेल – 5	• इस किस्म के पौधे कम ऊँचाई (3–5 मी.) एवं अधिक फैलाव वाले होते हैं। • फल चपटे सिरे वाले, मध्यम आकार के (21 × 25 सें.मी.), मीठे स्वाद (35–28 डिग्री ब्रिक्स) तथा कम बीज वाले होते हैं। • गूदा कम रेशे युक्त, मुलायम और अच्छे स्वाद वाला होता है। फलों का औसत वजन 900–1000 ग्राम तक होता है तथा पेड़ों की औसत उपज 50–60 कि.ग्रा. प्रति पेड़ तक पायी जाती है।
2.	नरेंद्र बेल – 7	• इस किस्म के पौधे औसत ऊँचाई (5–7 मी.) तथा अपेक्षाकृत कम फैलाव वाले (3–5 वर्ग मी.) होते हैं। • फल गोल तथा काफी बड़े होते हैं। पेड़ मध्यम छत्र फैलाव वाले लंबे होते हैं। • फल दोनों सिरे पर धंसे हुए, रंग हरा–सफेद तथा वजन 1.5 किलोग्राम से अधिक होते हैं।
3.	नरेंद्र बेल – 9	• पेड़ मध्यम ऊंचाई (4–6 मीटर) के होते हैं और औसतन 1–1.5 किलोग्राम वजन वाले फल देते हैं जिनमें अधिक गूदा और कम गोंद होता है। • कुल घुलनशील पदार्थ : 35–40 डिग्री ब्रिक्स के साथ रेशे और बीजों की मात्रा बहुत कम होती है।
4.	नरेंद्र बेल – 16	• फल अण्डाकार गोल, गूदा पीला, फल का औसत वजन : 1.3 किलोग्राम, कुल घुलनशील पदार्थ : 35 डिग्री ब्रिक्स, मध्यम बीज और कम रेशा वाले होते हैं।
5.	नरेंद्र बेल – 17	• फल आयताकार, बड़े आकार के फल, गुणवत्ता उत्कृष्ट, बीज की मात्रा कम, यह एक बेहतरीन पैदावार वाली किस्म है, जिसके फल में रेशे की मात्रा कम होती है। • फल का औसत वजन : 2.0 किलोग्राम तथा कुल घुलनशील पदार्थ : 36 डिग्री ब्रिक्स तक होता है।
6.	पंत शिवानी	• यह किस्म अगेती मध्य–ऋतु में पायी जाती है। • इसके पेड़ लम्बे, मज़बूत, घने, सीधे ऊपर की ओर बढ़ने वाले, जल्दी और भारी पैदावार वाले होते हैं। • इसके फलों का औसत भार 1.2 से 2.0 किलोग्राम होता है। अंडाकार आयताकार आकार, छिलका मध्यम मोटा, गूदा हल्का पीला, बहुत अच्छा स्वाद और मनभावन सुगंध वाला के साथ कुल घुलनशील पदार्थः 35 डिग्री ब्रिक्स तक होता है।
7.	पंत अपर्णा	• इसके वृक्ष छोटे कद के, लटकते हुए फूलों वाले, काटों रहित, जल्दी और भारी पैदावार वाले होते हैं। इसके पत्ते बड़े गहरे हरे होते हैं। • इसके फल आकार में गोल होते हैं, जिनका औसत भार 600–800 ग्राम होता है। गूदा पीला, मीठा, स्वादिष्ट और अच्छा स्वाद वाला होता है। • गूदे में *म्यूसिलेज,* बीज और *फाइबर* की मात्रा कम होती है। • कुल घुलनशील पदार्थः 35 डिग्री ब्रिक्स तक होता है।
8.	पंत उर्वशी	• मध्य–मौसम किस्म। पेड़ लम्बे, मजबूत, घने, सीधे बढ़ने वाले होते हैं। फल अंडाकार–आयताकार होता है। • 1.6 किलोग्राम औसत वजन के साथ फल एवं गूदे का रंग पीला होता हैं। कुल घुलनशील पदार्थः 33 डिग्री ब्रिक्स, अम्लता : 1.15% पाया जाता है। • उपज और उपज विशेषताओं पर सर्वोत्तम होना इस किस्म का मुख्य गुण हैं।
9.	पंत सुजाता	• इसके वृक्ष फैले हुए पत्तों वाले, घने, जल्दी और भारी पैदावार वाले होते हैं। • प्रारंभिक किस्म, पेड़ मध्य–बौने होते हैं, पत्ते झुके हुए और बिखरे हुए होते हैं, घने, असामयिक और अधिक फल देने वाले होते हैं। • फल गोलाकार आकार के जिनका औसत वजनः 1.0–1.40 किलोग्राम होता है। • फल और गूदा हल्का पीला, स्वाद भरपूर व बहुत अच्छा होता है। कुल घुलनशील पदार्थ : 30 डिग्री ब्रिक्स, अम्लता : 0.75% के साथ *म्यूसिलेज,* बीज और *फाइबर* की मात्रा कम होती है।

10.	सीआईएसएच–बी–1	• मध्य– ऋतु की किस्म है, जो अप्रैल–मई में पकती है। इसके फल लम्बाकार–अंडाकार होते हैं। इसका गूदा स्वादिष्ट और गहरे पीले रंग का होता है। फल अंडाकार–तिरछे, पकने पर फल का रंग नींबू जैसा पीला, फल का औसत वजन 1.0 किलोग्राम, छिलका पतला, गूदा गहरा पीला, सुखद स्वाद और कम गोंद, अच्छा स्वाद और सुगंध, 65.57% गूदा, कुल घुलनशील पदार्थः 38.0 डिग्री ब्रिक्स और 20.54% कुल चीनी पाई जाती है। • स्लाइस की डिब्बाबंदी के लिए उपयुक्त हैं एवं उपज ₹ 50–80 कि.ग्रा./वृक्ष तक पाई गयी है।
11.	सीआईएसएच–बी–2	• यह मध्यम कद वाली किस्म है, इसके फल लम्बाकार–अंडाकार होते हैं। इसका गुद्दा स्वादिष्ट और संतरा पीले रंग का होता है। • इसमें रेशे और बीज की मात्रा कम होती है। पेड़ बौना और मध्यम रूप से फैला हुआ, विरल पत्ते, फल का औसत वजनः 1.80–2.70 कि.ग्रा. पतला छिलका, गूदा नारंगी पीला होता है। • अच्छा स्वाद, सुखद सुगंध, गूदाः 61.32%, कुल घुलनशील पदार्थः 32.9 डिग्री ब्रिक्स, कुल कैरोटीनॉयडः 0.99 मिलीग्राम/100 ग्राम गूदा, कुल शर्करा : 16.33% और 2.45% टैनिन सामग्री के साथ उपज : 60–90 कि.ग्रा./वृक्ष तक पाई गयी है।
12.	थार दिव्या	• शुष्क इलाकों के किसानों के स्वास्थ्य, पोषण और आर्थिक सुरक्षा के लिए जल्दी पकने वाली (फरवरी में) किस्म है। • फल का वजन : 1.3–2.3 किलोग्राम तक होता है तथा कुल घुलनशील पदार्थ 38.0 डिग्री ब्रिक्स तक होता है एवं उपज : 70–80 किग्रा प्रति वृक्ष तक पाई गयी है। • इस किस्म के पेड़ में कांटे बहुत कम होते हैं. इस पर सूखे और सूर्य के तेज प्रकाश का कम प्रभाव पड़ता है। • फलों में बीज कम गूदा अधिक होता हैं। • इस किस्म के फल पाउडर और शर्बत बनाने हेतु बहुत उपयुक्त होते हैं। • इस किस्म को गीली, बंजर, कंकरीली मिट्टी में लगाया जा सकता है।
13.	गोमा यशी	• जल्दी से तैयार होने वाली किस्म है, इसका औसत वजन : 1.0–1.6 किलोग्राम के साथ यह बहुत अच्छी गुणवत्ता वाले फल पैदा करता है, फल आकार में अंडाकार, हरे पीले रंग के होते हैं। गूदा का रंग भूरा होता है। फल के छिलके का वजन 180 ग्राम होता है। • कुल घुलनशील पदार्थः 38 डिग्री ब्रिक्स होता है। छिलके की मोटाईः <2 मि.मी., कम श्लेष्मा तथा बीज की कुल संख्याः <125 (या उससे कम) होती है। • परिपक्वताः फल लगने के 280 दिन बाद तक होता है। • पेड़ अपेक्षाकृत बौने और कम फैलाव वाले होते हैं। • यह किस्म सघन बागवानी के लिए बहुत उपयुक्त है। इसे 5×5 मीटर की दूरी पर लगाया जा सकता है। इस तरह एक हेक्टेयर में 400 पेड़ स्थापित हो सकते है। • पूर्ण विकसित वृक्षों से लगभग 65 कि.ग्रा. फल प्राप्त होते हैं।
14.	थार नीलकंठ	• यह सूखा सहिष्णु किस्म, घनी छत्रक के साथ जोरदार और चमकदार विकास वाला वृक्ष है, मूल्यांकन के दौरान यह पाया गया कि शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिए इस प्रजाति विकास एवं फलन अति उत्तम है – • यह विविध गुणों से भरपूर है और रोपण के तीसरे वर्ष ही फल देने लगती है। • फलों का औसत वजन लगभग 1.5 कि.ग्रा. और गूदे की मात्रा लगभग 71 प्रतिशत होती है। • यह देर से पकने वाली और अधिक उपज देने वाली किस्म है। • दस साल पुराना पेड़ एक क्विंटल से अधिक उपज दे सकता है और यह अब तक विकसित सभी किस्मों में से सबसे मीठी है, इसमें *फाइबर* की मात्रा भी कम है। • इसके किस्म के *स्क्वैश,* पाउडर तथा उच्च कोटि का शरबत बनाने के योग्य पाया गया है। • उच्च गूदा सामग्री (71.30%), कम अम्लता (41.20%) के साथ, बीजों और श्लेष्मा, कुल घुलनशील पदार्थ एवं अम्लता अनुपात (142.07) भी कम होती है। • यह नाजुक कृषि जलवायु परिस्थितियों में उगाने के लिए अत्यधिक उपयुक्त है।

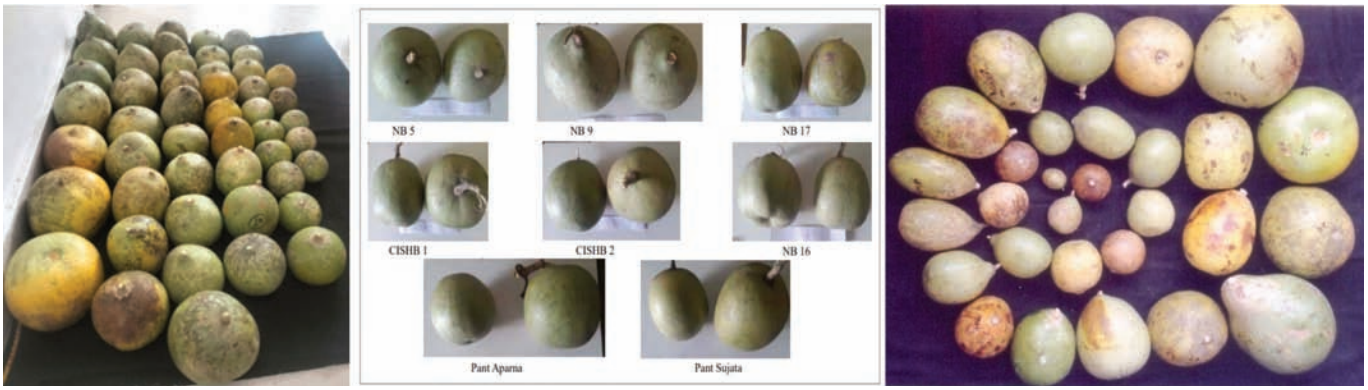

चित्र 1. बेल में उपलब्ध जैव विविधता

उत्पादन क्षमता

बेल से प्रति पेड़ फलों की संख्या वृक्ष के आकार के साथ बढ़ती रहती है। 10–15 वर्ष के पूर्ण विकसित वृक्ष से 200–300 फल प्राप्त किये जा सकते हैं। बेल में कई औषधीय गुण होते हैं, इसके फल, फूल, तना, पत्ती, छाल सब किसी न किसी काम आता है। बेल फल आम तौर पर ₹ 15–20 प्रति फल के बीच बिकता है। 5वें और 6वें साल में किसान प्रति हेक्टेयर ₹ 75,000 से 100,000 तक कमा सकते हैं। फल लगना दूसरे साल से शुरू हो जाता है, लेकिन आर्थिक उपज वर्षा आधारित अद्ध ंशुष्क परिस्थितियों में अंकुर फूटने के 5वें वर्ष के बाद मिलती है। अध्ययन के नतीजों से पता चला कि जैसे–जैसे पेड़ की उम्र बढ़ती गई, फल लगने और फल धारण करने की क्षमता भी बढ़ती जाती है। 9वें और 10वें साल में पेड़ों की छंटाई कर देनी चाहिए।

निष्कर्ष

बेल की नई किस्मों के विकास हेतु देश के विभिन्न भागों में सर्वेक्षण और श्रेष्ठ गुणों वाली जननद्रव्य का चयन, अनुकूल गुणवत्ता वाले लक्षणों वाले *जीनोटाइप* की सख्या बढ़ाने की आवश्यकता है। शुष्क भूमि/जलवायु की स्थितियों में उत्पादन बढ़ाना, विशिष्ट लक्षणों के आधार पर *जीनोटाइप* की जांच करना भी आवश्यक है। सुधरित किस्मों के विकास से बंजर भूमि पर बेल वृक्षारोपण को बढ़ावा देने में काफी मदद मिलेगी एवं व्यावसायीकरण भी होगा। देश में उपलब्ध जैव–विविधता के चयन के माध्यम से किस्मों की संख्या बढ़ाई जा सकती है। हालाँकि, अभी भी वांछनीय गुणों वाली विकसित किस्मों का अभाव है जिनमें सुधार किया जा सकता है। जैव प्रौद्योगिकी तकनीको का उपयोग कर विशिष्ट लक्षण वाले जननद्रव्यों के सुधार के लिए बेल के इन क्षेत्रों में ध्यान देने की अत्यधिक आवश्यकता है।

समिति यह संस्तुति करती है कि निरीक्षण कार्य के लिए एक प्रोफार्मा तैयार किया जाए और जब भी कोई अधिकारी (वरिष्ठतम अधिकारी सहित) अपने किसी अधीनस्थ कार्यालय में निरीक्षण या दौरे पर जाए तो उसस उक्त प्रोफार्मा को अनिवार्य रूप से भरवाया जाए कि प्रत्येक कार्यालय का वर्ष में कम से कम एक राजभाषा संबंधी निरीक्षण अवश्य हो चाहे किसी भी स्तर पर हो। यह निरीक्षण मंत्रालय, मुख्यालय या राजभाषा विभाग द्वारा किया जा सकता है।

संस्तुति संख्या : 16
राष्ट्रपति आदेश दिनांक 31 मार्च, 2017

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

आलू में फसल प्रबन्धन

अजय कुमार यादव एवं आर.के. पाल
चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

आलू की फसल लगभग 30 से 45 दिन हो जाने पर कृषक भाई अपनी फसल का उचित प्रबन्धन करके अपने उत्पादन को बढ़ा सकते हैं।

फसल सुरक्षा एवं प्रबंधन

आलू में लगने वाले प्रमुख रोग व कीट उसकी उत्पादकता एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं, अधिक संक्रमण की स्थिति में आलू की फसल को 40–45 प्रतिशत तक का नुकसान हो जाता है। अतः आलू की अच्छी पैदावार हेतु समय–समय पर फसलों की देखभाल और साथ ही उसका प्रबंधन करते रहना चाहिये।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

मॉहू: मॉहू आलू की फसल का प्रमुख एवं सर्वव्यापी कीट है। *माइजस परसिकी* व *एफिस गौसपी* नामक मॉहू आलू की फसल को अप्रत्यक्ष रूप से ज्यादा हानि पहुँचाते हैं। ये पत्ती के रस को चूसकर मुख्य वाहक के रूप में कार्य करते हैं तथा इस वायरस रोग से फसल को काफी नुकसान होता है। यदि इनकी संख्या 20 मॉहू/100 पत्ती हो जाए तो इनका प्रबंधन काफी जरूरी हो जाता है।

प्रबंधन

- नीम का अर्क 4 प्रतिशत का छिड़काव करें।
- आलू में *यैलो स्ट्रीकी ट्रेप* 10–12/हे. का प्रयोग करें।
- *लेडी बर्ड बीटल* परभक्षी कीट का संवर्धन करना चाहिए।
- अधिक संक्रमण के समय उपयुक्त कीटनाशक जैसे– *इमिडाक्लोप्रिड* (17.8 एस.एल.) 5 मिली. प्रति 10 लीटर पानी या *एसीटामाप्रिड* (1.5 मिली प्रति 3 लीटर पानी) को स्टीकर के साथ पानी में घोलकर फसल पर छिड़काव करना चाहिये।

सफेद मक्खी: यह कीट पत्तियों की निचली सतह पर अण्डे देता है और यह कीट मुख्य रूप से आलू में *जेमिनी वायरस* तथा *एपिकल लीफ कर्ल वायरस* के वाहक का काम करता है। जिसके निम्फ बाहर निकलने पर पत्तियों तथा तने का रस चूसकर पौधो को कमजोर, चिपचिपा एवं बीमार कर देते है। *वायरस* के कारण पत्तियाँ मुड़ जाती है और पौधे पीले पड़ जाते है।

प्रबंधन

- 10–12 *यैलो स्ट्रिकी ट्रैप*/हे. की दर से प्रयोग करें।
- खेत से समय–समय पर खरपतवार निकालते रहना चाहिए।
- रासायनिक प्रबंधन के लिए 10 दिनों के अन्तराल पर *इमिडाक्लोप्रिड* 3 मिली/10 लीटर पानी या *थायोंमेथॉक्जाम* 1 ग्रा/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

3. **कर्तन कीट *(कट वर्म)*:** यह एक सर्वव्यापी व बहुभक्षीय कीट है। आलू फसल को इस कीट की इल्लिया ज्यादा हानि पहुँचाती हैं। ये इल्लियां रात में आलू की नई शाखाओं या जमीन के नीचे दबे हुये कन्दों को खाती हैं। जब पौधों के तने नये एवं कोमल होते हैं तब इसका प्रकोप बहुत तेजी से फैलता है। बाद में यह कन्दों को छेदकर खाते हुये नुकसान करते हैं। जिससे कुल उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है, साथ ही बाजार में इनका दाम कम प्राप्त होता है।

प्रबंधन:

- गर्मियों में गहरी जुताई तथा भूमि सौर्यकरण की विधियाँ अपनानी चाहिए।
- इस कीट का प्रकोप दिखते ही *डाइक्लोरावास* 76 ई.सी. कीटनाशक को 1–1.5 मिली प्रति लीटर पानी में *स्टीकर* मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।
- अण्ड परजीवी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* 50,000 अण्डे प्रति हेक्टेयर तथा अण्ड सुण्डी परजीवी *किलोनस ब्लैकवर्नी* 15,000 व्यस्क प्रति हेक्टेयर की दर से 2 से 3 बार छोड़ें।
- खेतों में प्रकाश प्रपंच का प्रयोग अवश्य करना चाहिये।

4. **आलू का पतंगा:** यह कीट आलू के कन्दों, खड़ी फसल और भण्डारण दोनों स्थानों पर क्षति पहुँचाता है। इसका वयस्क कीट आलू की आँखों में अण्डा देता है। जिनसे 15 से 20 दिन बाद सूड़ियाँ निकलती हैं। ये सूड़ियाँ कन्दों में घुसकर क्षति पहुँचाती हैं।

प्रबंधन

- जुताई करते समय पतंगा कीट की जो सुण्डियां दिखाई दें, उन्हें एकत्रित करके नष्ट कर दें।
- पतंगा की रोकथाम के लिए केवल प्रमाणित व स्वस्थ बीज ही बोएं साथ में आलू की गहरी बुवाई करनी चाहिए।

- आलू खुदाई के बाद खेत में उन पर तिरपाल या चादर से ढक दें, ताकि पतंगे उन पर अंडे न दे सकें।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन

अगेती झुलसा रोगः प्रमुख लक्षण फसल बोने के 3–4 सप्ताह बाद पौधों की निचली पत्तियों पर छोटे–छोटे, दूर–दूर बिखरे हुये कोणीय आकार के चकत्तों या धब्बों के रूप में दिखाई पड़ते हैं आकार में बढ़ने के साथ धब्बों का रंग भी बदल जाता है और बाद में ये भूरे व काले रंग के हो जाते हैं। रोग का प्रकोप ज्यादा होने पर पत्तियां सिकुड़कर जमीन पर गिर जाती हैं जिससे बीमारी के बीजाणु जमीन में एकत्र हो जाते हैं एवं बीमारी को अधिक तेजी से फैलाते है।

प्रबंधन

- फसल में बीमारी का संक्रमण दिखाई देने पर यूरिया (1 प्रतिशत) व मैंकोजेब (75 प्रतिशत) 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिये।
- रोग प्रतिरोधी प्रजातियों जैसे– कुफरी बादशाह, कुफरी चिप्सोना, कुफरी लालिमा आदि को लगाना चाहिये।
- फसल में पहला छिड़काव *मैन्कोजेब* 2.5 ग्रा/लीटर पानी तथा 15 दिन बाद *साईमाक्सोनिल* एवं *मैन्कोजेब* 2.5 ग्रा/लीटर पानी के मिश्रण का छिड़काव करें, यदि रोग नियन्त्रण में न हो तो इसी प्रक्रिया को पुनः 15 दिन के अन्तराल पर दोहराएं।
- *ब्लाइटास्क*–50 का 0.3 प्रतिशत 12–15 दिनों के अन्तराल पर 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए, बीमारी की तीव्रता होने पर *मेटालेक्सिल* युक्त *मेंकोजेब* का छिड़काव अवश्य करना चाहिये।

पिछेती झुलसा रोगः प्रमुख लक्षण–पत्तियों की निचली सतहों पर हरे रंग के गोले बन जाते हैं जो बाद में भूरे व काले हो जाते हैं। पत्तियों में संक्रमण होने से आलू के कन्दों का आकार भी छोटा हो जाता है साथ ही उत्पादन में भी कमी आ जाती है।

प्रबंधन

- रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का चयन करना चाहिये जैसे– कुफरी अलंकार, कुफरी ज्योति आदि।
- संक्रमण होने पर *क्लोरोथैलोनिल* 0.2 प्रतिशत या *मेटालेक्सिल* 0.25 प्रतिशत या *मेंकोजेब* 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर 3 से 4 बार 10 से 12 दिन के अन्तराल पर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।
- फसल में पहला छिड़काव *मैन्कोजेब* 2.5 ग्रा/लीटर पानी तथा 15 दिन बाद *साईमाक्सोनिल* एवं *मैन्कोजेब* 2.5 ग्रा/लीटर पानी के मिश्रण का छिड़काव करें, यदि रोग नियन्त्रण में न हो तो इसी प्रक्रिया को पुनः दोहराये।

***स्कैब* रोगः** यह जीवाणुजनित रोग है। काले धब्बे कन्दों पर दिखाई पड़ते हैं। कन्दों में हल्के भूरे रंग के फोड़े के सामने *स्कैब* पड़ते हैं जो कुछ उभरे व गहरे होते है एवं गुणवत्ता खराब हो जाती है, जिसके कारण कन्द खाने योग्य नहीं रह जाते हैं।

प्रबंधन

- प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिये। खेत की तैयारी के समय भूमि में *ट्राइकोडर्मा हरजिनियम* जैवफॅफूदनाशी (5–8 किग्रा प्रति हेक्टैयर) का प्रयोग करना चाहिये।
- आलू के कन्दों को *कार्बेन्डाजिम* या बोरिक एसिड से उपचारित करने के पश्चात ही बोना चाहिये। आलू की फसल बुवाई के लगभग 20–25 दिन पूर्व सरसों की फसल बो देना चाहिये और आलू की खेत के तैयारी के समय पलटकर मिट्टी में अच्छे से मिला देना चाहिये। खेत की तैयारी के समय भूमि में *ट्राइकोडर्मा हरजिनियम* या *विरडी* जैवफॅफूदनाशी (5–8 किग्रा प्रति हेक्टैयर) का प्रयोग करना चाहिए। *ट्राईकोडर्मा हरजिनियम* या *विरडी* को 50 किलो सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर अच्छी तरह से 15 दिन के लिए रख देना चाहिए तथा पानी का छिड़काव दिन में एक बार अवश्य करें उसके बाद खेत की अंतिम जुताई से पहले सायं काल को ही संपूर्ण खेत में फैलाकर अगली सुबह खेत की जुताई कर देना चाहिए इस प्रकार से प्रयोग करने पर खेत में लगभग 60 प्रतिशत रोग कम हो जाता है। 2 वर्ष तक लगातार इसका प्रयोग करने पर *कॉमन स्कैब* रोग लगभग समाप्त हो जाता है। ध्यान रहे कि *ट्राइकोडर्मा* किसी अच्छे एवं प्रमाणित संस्थान से ही लें।
- फास्फोरस की अधिकता से स्कैब या चेचक रोग के बढ़ने की संभावना अधिक होती है अतः फास्फोरस की उचित मात्रा (डी.ए.पी. 2.0 से 2.5 क्वि./हेक्टेयर के दर से) प्रयोग करना चाहिए।

भूरा विगलन रोगः यह जीवाणुजनित रोग है। इसमें रोग ग्रसित पौधे समान्य पौधों से बौने होते हैं जो कुछ ही समय में हरे के हरे ही मुरझा जाते हैं यदि इन पौधों में कन्द बनते हैं तो काटने पर भूरा घेरा देखा जा सकता है।

प्रबंधन

प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। गर्मियों में गहरी जुताई तथा भूमि सौरीकरण की विधियाँ अपनानी चाहिये। बुवाई से पूर्व खोद कर निकाले गये रोगी कन्दों को नष्ट कर देना चाहिए।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

शिमला मिर्च की उन्नतशील खेती

निमित सिंह[1], विनायक प्रताप शाही[2], आशीष कुमार सिंह[1] एवं अभिनव कुमार[1]
[1]आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या
[2]कृषि विज्ञान केन्द्र, मसौधा, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या

भारत में शिमला मिर्च की व्यावसायिक खेती हिमांचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, कर्नाटक तथा तमिलनाडु में की जाती है। इसे ग्रीन पेपर या बेल पेपर या मीठी मिर्च के नाम से भी जाना जाता है। इसमें तीखापन नहीं होता है अथवा बहुत कम होता है। शिमला मिर्च में विटामिन सी तथा खनिज पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

जलवायु

शिमला मिर्च ठंडी जलवायु की फसल है, पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी रोपाई फरवरी से मई–जून तक की जाती है। यदि रात्रि का तापमान 12 डिग्री सेन्टीग्रेड से नीचे चला जाए तो पौधों की वृद्धि एवं फलत पर बुरा असर पड़ता है। दिन का तापमान 26–28 डिग्री सेन्टीग्रेड तथा रात्रि का 16–18 डिग्री सेन्टीग्रेड शिमला मिर्च में फूल तथा फल आने के लिए बहुत ही अनुकूल होता है।

उन्नत किस्में

सामान्य किस्में

केलिफोर्निया वान्डर, बुलनोल यलोवन्डर, निशान्त–1, अर्का गौरव, अर्का बसन्त, अर्का मोहिनी।

संकर किस्में

भारत, इन्दिरा, पूसा दीप्ती अनुपन, अर्का अतुल्या, हीरा, सुप्रिया ओरोविले, तन्वी, तन्वी प्लस, नताशा, स्वर्णा।

भूमि एवं उसकी तैयारी

बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच.मान 5.5–6.8 के बीच हो, सर्वोत्तम माना जाता है। खेत की 2–3 जुताई करके पाटा लगा देते हैं जिससे मिट्टी भुरभुरी हो जाए।

बीज की मात्रा, बुआई तथा रोपाई का समय

एक हेक्टेयर खेत की रोपाई के लिए सामान्य किस्मों के 800–1,000 ग्राम तथा संकर किस्मों के 250–500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। शिमला मिर्च के बीज की बुवाई मिर्च की ही भांति की जाती है। नर्सरी में पौधे जब 30 दिन के हो जायें और उसमें 4–5 पत्तियां आ जाएँ तो रोपाई कर देनी चाहिए।

रोपाई का ढंग

शिमला मिर्च की रोपाई किस्मों के आधार पर 45–60× 30–45 सें.मी. की दूरी पर करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

200 कुन्तल गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में अच्छी प्रकार मिला लें। इसके अलावा 100–200 कि.ग्रा. नत्रजन, 50–60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 50–60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिए।

संकर किस्मों के लिए 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 75 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 75 कि.ग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर देना आवश्यक होता है। नत्रजन की आधी तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के समय तथा शेष नत्रजन को दो बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 30 व 45 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए।

सिंचाई

भूमि में पर्याप्त नमी अच्छी फसल के लिए आवश्यक है। अतः 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

अगस्त में बोयी गयी फसल में 3–4 बार तथा नवम्बर में बोई गई फसल में दो बार 30–30 दिन पर निराई–गुड़ाई करनी चाहिए।

फसल की तुड़ाई एवं उपज

पूरी तरह से विकसित स्वस्थ फल बिक्री के लिए उपयुक्त रहते हैं। रोपाई के लगभग तीन माह बाद फलों की तुड़ाई शुरू हो जाती है। 4–5 तुड़ाई 10–15 दिन के अन्तर पर की जा सकती है। इसकी औसत पैदावार लगभग 100–300 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

शिमला मिर्च के प्रमुख रोग एवं कीट

डाईबैक एवं एन्थ्रेक्नोज

1. मिर्च की रोपाई अगस्त के दूसरे पखवाड़े में करने से *एन्थ्रेक्नोज* का संक्रमण बहुत कम हो जाता हैं।
2. बुवाई के पूर्व 2.5 ग्राम *कार्बेन्डाजिम*/किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।
3. पौधशाला के पौधों पर रोपाई के पूर्व 1 ग्राम *कार्बेन्डाजिम*/लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।
4. फूल आने के समय 1 ग्राम *कार्बेन्डाजिम*/लीटर पानी, फिर 9 दिन बाद *कॉपर आक्सीक्लोराइड* की 3 ग्राम/लीटर पानी के घोल का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए।
5. प्रथम फलत के मिर्चों को बीज के लिए कभी भी न रखें।

जीवाणु पर्ण धब्बा

1. *स्ट्रेप्टोसाइक्लीन* दवा की 1 ग्राम मात्रा लगभग 6 लीटर पानी में घोलकर या *कासुगामाइसीन* 2 ग्राम/1 लीटर पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

स्क्लेरोटिनिया झुलसा (सफेद गलन)

1. कीचड़ की गई (पडलिंग) धान के साथ फसल चक्र प्रारम्भिक रोगाणु की संख्या में कमी करने में सहायक है।
2. खेतों में हरी खाद को पलटने के बाद मिट्टी में ट्राइकोडर्मा पाउडर 5 कि.ग्रा./हे. की दर से बुरकाव करें।
3. पौधे की रोपाई सघन नहीं करना चाहिए जिससे पौधों के चारों तरफ नमी ज्यादा न बनी रहे और संक्रमण कम हो।
4. फूल आने की अवस्था में 1 ग्राम *कार्बेन्डाजिम*/लीटर पानी की दर से तथा बाद में *मैंकोजेब* की 2.5 ग्राम/लीटर पानी की दर से पर्णीय छिड़काव फूल आने के बाद करना चाहिए।

पर्ण झुलसा

1. पहला छिड़काव *क्लोरोथेनिल* 2 ग्राम/लीटर पानी एवं पुनः 8–10 दिन के बाद दूसरा *थायोफनेट मिथाइल* की 1 ग्राम/लीटर पानी की दर से करें।
2. पौधों की प्रतिरोधिता एवं बढ़वार अच्छी बनाए रखने हेतु ट्रिसेल 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से 10–12 दिन के अन्तराल पर पर्णीय छिड़काव करें।

पर्णकुंचन विषाणु (गुरचा रोग)

1. बीज को 2.5 मिली. *इमिडाक्लोप्रिड*/कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें।
2. सफेद मक्खी से बचाव हेतु पौधशाला को नाइलान जाली के अन्दर उगाना चाहिए।
3. पुष्पन अवस्था तक *मेटासिस्टाक्स* 1 मिली./लीटर पानी के घोल की दर से 10 दिन के अन्तराल पर नियमित छिड़काव करें।
4. रोग सहनशील प्रजातियों जैसे पन्त सी 1, चन्चल एवं के.ए. 2 को उगाना चाहिए।

थ्रिप्स और माइटजनित गुरचा

1. बीज का शोधन *इमिडाक्लोप्रिड* दवा का 2.5 मिली./किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।
2. वर्टीमैक 0.8 मिली./लीटर पानी की दर से घोल कर 20 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।
3. *डाईकोफाल* 2.5 मिली. दवा एवं घुलनशील गंधक 2.0 ग्राम/लीटर की दर से घोल बनाकर 10 से 15 दिन के अन्तराल पर एकान्तरित छिड़काव करते रहें।

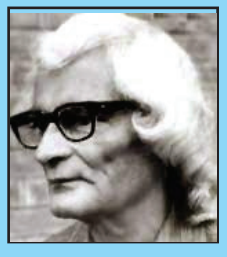

भविष्य में हिन्दी आने वाली नवीन चेतना की सांस्कृतिक भाषा होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

– सुमित्रा नंदन पंत

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

सतावर की वैज्ञानिक खेती एवं लाभ

रितेश सिंह, अंकुर त्रिपाठी एवं स्मिता सिंह
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

परिचय

सतावर का वैज्ञानिक नाम *(ऐस्पेरेगस रेसीमोसस)* है। लिलिएसी परिवार का यह पौधा हमारे देश में विभिन्न भाषाओं में अलग–अलग नामों से जाना जाता है। सतावर की खेती भारत के अलावा चीन, नेपाल, अफ्रीका, बांग्लादेश और ऑस्ट्रेलिया एवं अन्य देशों में भी की जाती है, वही भारत में राजस्थान, उत्तराखंड, गुजरात, मध्य प्रदेश और यूपी के बाराबंकी, बरेली, प्रतापगढ़, रायबरेली, इलाहाबाद, सीतापुर, शाहजहांपुर, बदायूं, लखनऊ जैसे जिलों में इसकी खेती को मुख्य रूप से किया जाता है।

आयुर्वेद में औषधियों की रानी मानी जाने वाली सतावर का पौधा अनगिनत शाखाओं से युक्त काँटेदार लता के रूप में होता है। सतावर की पूर्ण विकसित लता 30 से 35 फीट तक ऊंची हो सकती है। प्रायः मूल से इसकी कई लताएं अथवा शाखाएं एक साथ निकलती हैं। यद्यपि यह लता की तरह बढ़ती है परन्तु इसकी शाखाएं काफी कठोर (लकड़ी के जैसी) होती हैं। इसके पत्ते काफी पतले तथा सुइयों जैसे नुकीले होते हैं। ग्रीष्म ऋतु में पुनः नवीन शाखाएं निकलती हैं। सितम्बर–अक्टूबर माह में इसमें गुच्छों में पुष्प आते हैं। फूल सफेद रंग के और अच्छी सुगंध वाले होते हैं। फल जामुनी लाल रंग का होता है। पौधे के मूलस्तम्भ से सफेद ट्यूबर्स (मूलों) का गुच्छा निकलता है जिसमें प्रायः प्रतिवर्ष वृद्धि होती जाती है। औषधीय उपयोग में मुख्यतः यही मूल अथवा इन्हीं ट्यूबर्स का उपयोग किया जाता है। बिहार राज्य के भोजपुर, कैमूर, मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, मधुबनी, बेगूसराय, पूर्वी चम्पारण, वैशाली के कई किसान सफलतापूर्वक खेती कर रहे हैं। सतावर की एक प्रजाति ऐसी भी है जो कि काँटे रहित होती है। इस सतावर का वैज्ञानिक नाम *एस्पेरेगस फिलिसिनस* है। यह प्रजाति हिमालय में 4 से 9 हजार फीट की ऊँचाई पर पायी जाती है।

सतावर के प्रमुख औषधीय उपयोग

शक्तिवर्धक के रूप में

विभिन्न शक्तिवर्धक दवाइयों के निर्माण में सतावर का उपयोग किया जाता है। यह न केवल सामान्य कमजोरी, बल्कि शुक्रवर्धन तथा यौनशक्ति बढ़ाने से संबंधित बनाई जाने वाली कई दवाइयों जिनमें यूनानी पद्धति से बनाई जाने वाली माजून जंजीबेल, माजून शीर बरगदवली तथा माजून पाक आदि प्रसिद्ध हैं, में भी प्रयुक्त किया जाता है।

दुग्ध बढ़ाने हेतु

माताओं का दुग्ध बढ़ाने में भी सतावर काफी प्रभावी सिद्ध हुआ है तथा वर्तमान में इससे संबंधित कई दवाइयाँ बनाई जा रही हैं। न केवल महिलाओं बल्कि पशुओं–भैसों तथा गायों में दूध बढ़ाने में भी सतावर काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है।

चर्मरोगों के उपचार हेतु, शारीरिक दर्दो के उपचार हेतु आंतरिक *हैमरेज,* गठिया, पेट के दर्दो, पेशाब एवं मूत्र संस्थान से संबंधित रोगों, गर्दन के अकड़ जाने *(स्टिफनेस),* पक्षाघात, अर्धपक्षाघात, पैरों के तलवों में जलन, *साइटिका,* हाथों तथा घुटने आदि के दर्द तथा सरदर्द आदि के निवारण हेतु बनाई जाने वाली विभिन्न औषधियों में भी इसे उपयोग में लाया जाता है।

जलवायु एवं तापमान

सतावर की खेती के लिए मध्यम तापमान सबसे उपयुक्त माना जाता है। इसकी खेती के लिए उचित तापमान 10 से 50 डिग्री सेल्सियस उपयुक्त माना जाता है। बुवाई के लिए 30–35 डिग्री सेल्सियस व कटाई के लिए 20–25 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। वहीं 600–100 मिलीमीटर वर्षा पर्याप्त होती है। समुद्र तल से 800–1500 मीटर तक सतावर की खेती सफलतापूर्वक उगायी जाती है। इस प्रकार ज्यादा ठंडे प्रदेशों को छोड़ कर सम्पूर्ण भारत की जलवायु इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। विशेष रूप से मध्य भारत के विभिन्न क्षेत्रों में यह काफी अच्छी प्रकार पनपता है।

उपयुक्त मिट्टी

इसकी खेती में रेतीली भूमि की आवश्यकता होती है। रेतीली भूमि में इसकी जड़ों को फैलने के लिए सुविधा प्राप्त हो जाती है। मिट्टी कार्बनिक जीवांश युक्त जिसमें जल निकास की पर्याप्त व्यवस्था हो, इसकी खेती के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। लाल दोमट से चिकनी मिट्टी व काली मिट्टी से लैटेराइट मिट्टी में सतावर उगाई जाती है। पौधे की वृद्धि के लिए मिट्टी का पीएच मान 6–8 उपयुक्त माना जाता है। सतावर की फसल एक उथली जड़ वाली होती है। अतः इस प्रकार की उथली तथा पठारी मृदा के तहत जिसमें मृदा की गहराई 20–30 सें. मी. की है, उसमें आसानी से उगाया जा सकता है।

सतावर की खेती हेतु नर्सरी

एक एकड़ भूमि में सतावर के खेती के लिए 100 वर्ग फीट की नर्सरी पर्याप्त होती है। पौधशाला की भूमि की

अच्छी प्रकार जुताई कर ढेले फोड़कर समतल कर लेना चाहिए। फंफूदीजनित रोग से बचाव हेतु भूमि का शोधन *फार्मेल्डीहाइड* से अवश्य कर लेना चाहिए। पौधशाला में जैविक खाद व कम्पोस्ट डालकर मिट्टी में मिला दें। नर्सरी भूमि से काफी ऊँची रखनी चाहिए। एक हेक्टेयर के खेत में 3–4 कि.ग्रा. सतावर के बीज डाले जाते हैं। 15 मई के बाद बीज शैय्या में बीज का छिड़काव कर दें। बीजों की रोपाई के बाद उसके ऊपर गोबर मिश्रित मिट्टी को चढ़ा देना चाहिए। इससे बीज अच्छी तरह से ढक जायेंगे। इसके बाद स्प्रिंकलर्स विधि द्वारा बीजों की हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। इनके बीजों का अंकुरण 10 से 15 दिनों में आरम्भ हो जाता है, तथा 40 से 45 दिनों बाद इसके पौधों को पॉलीथीन की थैलियों में रखकर भी तैयार कर सकते हैं।

खेत की तैयारी

सतावर बहुवर्षीय पौधा है तथा इसकी खेती 2–3 साल की अवधि की होती है। अतः भूमि की तैयारी अच्छी प्रकार से करनी चाहिए। प्रारम्भ में देशी हल या *कल्टीवेटर* से 2–3 बार खेत की गहरी जुताई, वर्षा ऋतु में (जून–अगस्त) कर लेनी चाहिए। तत्पश्चात 2–3 टन केंचुआ खाद या कम्पोस्ट या 20–25 टन गोबर खाद उपलब्धता के अनुसार प्रति एकड़ जुते हुए खेत में बुवाई के पहले डालकर मिला देना चाहिए। इसके पश्चात् नवंबर के शुरुआती दिनों में दूसरी जुताई कर देनी चाहिए।

मुख्य खेत में पौधों की रोपाई

सुविधा अनुसार जुते हुए खेत में 10 मीटर की क्यारियां बनाकर इसमें 4 और 2 के अनुपात में मिट्टी व गोबर की खाद मिलाकर डालनी चाहिए। इसके बाद 60–80 से.मी. की दूरी रखते हुए 9 इंच की मेड़ को तैयार कर लें। जब नर्सरी में पौध 40 दिन के हो जाएं तथा वह 4–5 इंच की ऊँचाई प्राप्त कर ले। नर्सरी से पौधों को सावधानीपूर्वक उखाड़कर माह जुलाई से अगस्त के बीच रोपाई कर देनी चाहिए। पौधों के उचित विकास के लिए 4-5x1-2 मीटर फासले का प्रयोग करें और 20 सें.मी. गहराई में पौध का रोपण करना चाहिए। रोपाई शाम के समय करना बेहद अच्छा रहता है। रोपाई के तुरंत बाद सिंचाई कर देना काफी लाभप्रद होता है।

आरोहण की व्यवस्था

सतावर एक लता है अतः इसके सही विकास के लिए आवश्यक है कि इसके लिए उपयुक्त आरोहण की व्यवस्था की जाए। इस कार्य हेतु यूं तो मचान जैसी व्यवस्था भी की जा सकती है परन्तु यह ज्यादा उपयुक्त रहता है यदि प्रत्येक पौधे के पास लकड़ी के सूखे डंठल अथवा बाँस के डंडे गाड़ दिए जाएं ताकि सतावर की लताएं उन पर चढ़ कर सही विस्तार पा सकें। कई किसानों द्वारा इसे केवल *फैंसिंग* पर भी लगाया जाता है।

खरपतवार नियंत्रण तथा निराई गुड़ाई की व्यवस्था

फसल के शुरुआती दिनों में काफी खरपतवार उग आते हैं जिनको खुरपी से निराई–गुड़ाई कर बाहर निकाल देना चाहिए। इससे एक तरफ जहाँ खरपतवार पर नियंत्रण होता है वहीं हाथ से निराई–गुड़ाई करने से मिट्टी भी नर्म रहती है जिससे पौधों की जड़ों के प्रसार के लिए उपयुक्त वातावरण भी प्राप्त होता है। निराई–गुड़ाई करते समय ध्यान रखें कि पौधे व प्रारोह को कोई नुकसान ना पहुँचे। 6 से 8 बार पूरी फसल में निराई गुड़ाई करना बेहतर होता है।

सिंचाई एवं जल निकास प्रबंधन

सतावर के पौधों को सिंचाई की आवश्यकता कम होती है। फिर भी शुरुआती दिनों में एक माह में 4 से 6 दिन के अंतर पर सिंचाई करते रहें। इसके बाद हर माह में एक सिंचाई से *ट्यूबर्स* (जड़ों) का अच्छा विकास हो जाता है। सिंचाई के साथ साथ निकास की व्यवस्था इसमें अति आवश्यक है जिससे जड़ों के पास जल भराव न हो सके जो कि पौधों की वृद्धि के लिए हनिकारक होता है। वैसे कम पानी अथवा बिना सिंचाई के अर्थात असिंचित फसल के रूप में भी सतावर की खेती की जा सकती है लेकिन इससे उपज में कमी देखी गयी है।

फसल पकने की अवधि

सतावर की जड़ें लगाने के 24–40 माह बाद परिपक्व हो जाती हैं किन्तु बुवाई के 24 माह बाद मृदा एवं मौसमी दशाओं को देखते हुए खुदाई कर लेना चाहिए जिससे अधिक गुणवत्ता वाली जड़ें प्राप्त होती हैं किन्तु कुछ किसान इसकी खुदाई बुवाई के 24 माह बाद भी करते हैं।

कटाई, प्रसंस्करण एवं उपज

सतावर की खुदाई का उपयुक्त समय अप्रैल–मई है। 24 से 40 माह की फसल, जब पौधों पर लगे हुए फल पक जायें, खुदाई योग्य हो जाती है। ऐसी स्थिति में कुदाली की सहायता से सावधानीपूर्वक जड़ों को खोद लिया जाता है। खुदाई से पहले यदि खेत में हल्की सिंचाई देकर मिट्टी को थोड़ा नर्म बना लिया जाए तो फसल को उखाड़ना आसान हो जाता है। जड़ों को उखाड़ने के बाद उसमें चीरा लगाकर ऊपर का छिलका उतार लिया जाता है। सतावर के कंदों को *ट्यूबर्स* से अलग करने के लिए इसे पानी में हल्का उबाला जाता है। थोड़ी देर बार ठंडे पानी में कंदों को रखते हैं। ऐसा करने से छिलका बड़ी आसानी से उतर जाता है। कंदों को छीलने के बाद छाया में सुखा लिया जाता है। कंदों के पूरी तरह सूख जाने के बाद *एयरटाइट प्लास्टिक के बैग* में भरकर बिक्री हेतु भेज देना चाहिये। कंदों की *प्रोसेसिंग* यानी छिलाई व उबालने, के बाद रंग हल्का पीला हो जाता है। यह देखकर चिंता न करें। एक एकड़ खेत से 150–180 कुन्तल गीली सतावर प्राप्त होती है। जो कि छीलने व सुखाने के बाद 15–18 कुन्तल प्राप्त होती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारत में आधुनिक कृषि तकनीकें

रीता, मानसी मिश्रा, अरुणिमा महतो, श्रेयांशु, चंद्रमणि राज, श्वेता सिंह एवं दिनेश सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत में कृषि हमेशा से देश की अर्थव्यवस्था का अहम हिस्सा रही है, जो लाखों लोगों की आजीविका का स्रोत है। हालांकि, जलवायु परिवर्तन, बढ़ती जनसंख्या और सीमित संसाधनों के कारण पारंपरिक खेती को खाद्य सुरक्षा और टिकाऊ कृषि उत्पादन की बढ़ती मांग के कारण कई चुनौतियाँ आ रही हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए आधुनिक कृषि तकनीकों का उपयोग बढ़ रहा है, जो न केवल कृषि की उत्पादकता बढ़ा रही हैं, बल्कि इसके पर्यावरणीय प्रभाव को भी कम कर रही हैं। आइए जानते हैं कुछ प्रमुख आधुनिक कृषि तकनीकों के बारे में जो भारत में कृषि क्षेत्र को सशक्त बना रही हैं।

1. सटीक खेती

सटीक खेती में आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल कर फसलों की प्रबंधन क्षमता को बढ़ाया जाता है। जीपीएस, *सैटेलाइट इमेजिंग, सेंसर* और *डेटा* विश्लेषण का उपयोग करके खेतों की स्थिति, फसल की सेहत और पर्यावरणीय बदलावों पर निगरानी रखी जाती है। इसके प्रमुख लाभों में शामिल हैं:

- संसाधनों का बेहतर उपयोग: जल, उर्वरक और कीटनाशकों का कम इस्तेमाल।
- बेहतर फसल प्रबंधन: फसलों के उन हिस्सों पर विशेष ध्यान जो अधिक देखभाल की मांग करते हैं।
- *डेटा* पर आधारित निर्णय: सिंचाई, उर्वरक और कीटनाशक के उपयोग को अनुकूलित करने में मदद मिलती है।

2. *ड्रिप* सिंचाई

ड्रिप सिंचाई एक जल–बचत तकनीक है, जिसमें पानी को सीधे पौधों की जड़ों तक पहुँचाया जाता है। यह तकनीक विशेष रूप से जल संकट वाले क्षेत्रों के लिए प्रभावी है। इसके लाभ हैं:

- **जल की बचत:** पानी सिर्फ उसी स्थान पर दिया जाता है जहां इसकी आवश्यकता होती है।
- **घासफूस का कम होना:** यह तकनीक मिट्टी की पूरी सतह पर पानी नहीं फैलने देती, जिससे घास की वृद्धि कम होती है।
- **फसल उत्पादन में वृद्धि:** जलवायु परिस्थितियों को नियंत्रित करके फसल की पैदावार में सुधार होता है।

3. *हाइड्रोपोनिक्स*

हाइड्रोपोनिक्स एक ऐसी तकनीक है, जिसमें पौधों को बिना मिट्टी के उगाया जाता है। इसमें खनिज युक्त पोषक तत्वों का पानी में घोलकर पौधों को दिया जाता है। इसके लाभों में शामिल हैं:

- **जगह का अधिकतम उपयोग:** यह तकनीक छोटे स्थानों में जैसे छतों या *ग्रीनहाउस* में भी लागू की जा सकती है।
- **जल की बचत:** पारंपरिक खेती की तुलना में 90% कम पानी का उपयोग होता है।
- **पौधों का तेज़ विकास:** पौधों को आदर्श पोषक तत्व मिलते हैं, जिससे उनका विकास तेज़ी से होता है।

4. *वर्टिकल फार्मिंग* (लंबवत खेती)

वर्टिकल फार्मिंग में पौधों को एक–दूसरे के ऊपर परतों में उगाया जाता है, जिससे भूमि का अधिकतम उपयोग हो सकता है। यह शहरी इलाकों में अत्यधिक लाभकारी है, जहां भूमि की कमी होती है। इसके लाभ हैं:

- **भूमि का अधिकतम उपयोग:** उच्च जनसंख्या वाले क्षेत्रों में जहाँ भूमि सीमित है, यह तकनीक उपयुक्त है।
- **परिवहन लागत में कमी:** फसलें शहरी बाजारों के पास उगाई जा सकती हैं, जिससे परिवहन की लागत कम होती है।
- **मौसम पर कम निर्भरता:** नियंत्रित वातावरण फसलों को कठिन मौसम की स्थितियों से सुरक्षित रखता है।

5. जीन संवर्धित फसलें

जीन संवर्धित फसलें ऐसी होती हैं जो सूखा, कीट या रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोधी होती हैं। भारत में बीटी कपास एक प्रमुख उदाहरण है, और अन्य फसलों के लिए भी इस तकनीक पर चर्चा हो रही है। इसके लाभ निम्नलिखित हैं:

- **प्राकृतिक प्रतिरोध में वृद्धि:** कीटनाशकों की जरूरत कम होती है।

- **उत्पादकता में वृद्धिः** इस तकनीक से फसलें पर्यावरणीय दबावों का सामना करते हुए ज्यादा पैदावार देती हैं।
- **रासायनिक इनपुट्स पर निर्भरता में कमीः** उर्वरक और कीटनाशकों का उपयोग कम होता है।

6. जैविक कृषि

जैविक कृषि में रासायनिक उर्वरकों या जीन संवर्धित बीजों का उपयोग नहीं किया जाता। इसमें प्राकृतिक उर्वरकों और जैविक कीट नियंत्रण विधियों का उपयोग किया जाता है। इसके लाभों में शामिल हैं:

- **पर्यावरणीय रूप से सुरक्षितः** रासायनिक प्रदूषण को कम करता है।
- **स्वस्थ खाद्य उत्पादनः** रासायनिक अवशेषों से मुक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन।
- **मिट्टी की सेहत में सुधारः** यह खेती मिट्टी की उर्वरता और जैव विविधता को बढ़ाती है।

7. *ड्रोन टेक्नोलॉजी*

भारत में ड्रोन का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है, खासकर फसलों की निगरानी और उर्वरक व कीटनाशकों के छिड़काव के लिए। इसके फायदे निम्नलिखित हैं:

- **तत्काल निगरानीः** *ड्रोन* बड़े खेतों की जल्दी से निगरानी कर सकते हैं और समस्याओं का पता लगा सकते हैं।
- **सटीक छिड़कावः** *ड्रोन* के जरिए कीटनाशकों का छिड़काव सटीक रूप से किया जाता है।
- **समय की बचतः** *मैन्युअल* निरीक्षण की तुलना में यह तेज़ और अधिक प्रभावी समाधान प्रदान करता है।

8. जैव प्रौद्योगिकी तथा जैव उर्वरक

जैव प्रौद्योगिकी के जरिए फसलों को बेहतर बनाने के लिए नई किस्मों का विकास किया गया है। जैव उर्वरक जैसे *राइजोबियम* और *एजोटोबैक्टर* मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाते हैं और फसलों के विकास को प्रेरित करते हैं। इसके फायदे निम्नलिखित हैं:

- **रासायनिक उर्वरकों का कम उपयोगः** यह पर्यावरण के लिए एक बेहतर विकल्प है।
- **फसल की सहनशीलता बढ़ानाः** यह फसलें कठिन परिस्थितियों में भी बेहतर उगती हैं।
- **सतत कृषिः** यह लंबे समय तक मिट्टी की सेहत बनाए रखने में मदद करता है।

9. कृषि 4.0 (ए आई, आई ओ टी, और *बिग डेटा*)

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए आई) *इंटरनेट ऑफ थिंग्स* (आई ओ टी) और *बिग डेटा* के समावेश से भारतीय कृषि में *"स्मार्ट फार्मिंग"* की शुरुआत हुई है। यह तकनीकें किसानों को उनके खेतों की वास्तविक समय में निगरानी करने में मदद करती हैं।

- **ए आई–आधारित फसल पूर्वानुमानः** यह किसानों को फसल की पैदावार और बाजार की मांग का अनुमान लगाने में मदद करता है।
- **आई ओ टी उपकरणों द्वारा खेतों की निगरानीः** इन उपकरणों से मिट्टी की नमी, तापमान और कीटों के बारे में *डेटा* इकट्ठा किया जाता है।
- ***बिग डेटा* विश्लेषणः** यह बड़े *डेटा* का विश्लेषण कर किसानों को बेहतर निर्णय लेने में मदद करता है।

10. कृषि वानिकी

कृषि वानिकी एक ऐसी पद्धति है जिसमें फसलों और वृक्षों या झाड़ियों को एक साथ उगाया जाता है। इसके कई लाभ होते हैं:

- **जैव विविधता का संरक्षणः** यह पारिस्थितिकी संतुलन बनाए रखता है।
- **मिट्टी की सेहत को बढ़ावाः** पेड़ों की जड़ें मिट्टी के क्षरण को रोकती हैं और उसकी उर्वरता को बढ़ाती हैं।
- **कार्बन अवशोषणः** यह जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद करता है।

निष्कर्ष

आधुनिक कृषि तकनीकें भारतीय किसानों को उत्पादकता बढ़ाने, संसाधनों का संरक्षण करने और कृषि के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने में मदद कर रही हैं। *प्रेसिजन फार्मिंग, ड्रोन* तकनीक, *हाइड्रोपोनिक्स* और जैविक खेती जैसी नवाचारों से भारतीय कृषि अब 21वीं सदी की चुनौतियों से निपटने के लिए तैयार है। इन तकनीकों को अपनाकर किसान एक स्थिर, सशक्त और लाभकारी भविष्य की ओर अग्रसर हो सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

आधुनिक कृषि में कंप्यूटर की भूमिका

संगीता श्रीवास्तव, अनीता सावनानी एवं अभय श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास ने हर क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है, और कृषि भी इससे अछूती नहीं रही है। कंप्यूटर और डिजिटल तकनीक के उपयोग से कृषि क्षेत्र में कई सुधार हुए हैं, जिससे किसानों को अधिक उत्पादन, कम लागत और बेहतर बाजार मूल्य प्राप्त करने में सहायता मिली है। आज के समय में स्मार्ट कृषि और डिजिटल कृषि का विस्तार हो रहा है, जो कंप्यूटर पर आधारित तकनीकों पर निर्भर है।

कृषि में कंप्यूटर का महत्व

कंप्यूटर कृषि क्षेत्र के हर पहलू में अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुका है, चाहे वह फसल प्रबंधन, सिंचाई प्रणाली, बाजार से जुड़ाव, कृषि अनुसंधान या कृषि यंत्रीकरण हो। आधुनिक कृषि में, कंप्यूटर डेटा संग्रह, विश्लेषण और निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे किसान फसल की पैदावार को अनुकूलित कर सकते हैं, संसाधनों का कुशलतापूर्वक प्रबंधन कर सकते हैं, पशुधन के स्वास्थ्य की निगरानी कर सकते हैं और अंततः सटीक खेती, स्वचालित प्रणाली और वास्तविक समय में डेटा विश्लेषण जैसी तकनीकों के माध्यम से समग्र कृषि उत्पादकता में सुधार कर सकते हैं, जिससे मिट्टी की स्थिति, मौसम के *पैटर्न* और फसल के स्वास्थ्य के बारे में सटीक जानकारी के आधार पर अधिक सूचित निर्णय लेने की सुविधा मिलती है।

कृषि में कंप्यूटर के प्रमुख अनुप्रयोग

- **सटीक खेती:** *जीपीएस* और *सेंसर* का उपयोग करके खेतों का सटीक नक्शा बनाना, जिससे किसान विशिष्ट क्षेत्रों में सही मात्रा में पानी, उर्वरक और कीटनाशकों का उपयोग कर सकें, बर्बादी कम हो और फसल की पैदावार अधिकतम हो।
- **फसल निगरानी:** *सेंसर* और *ड्रोन* फसल के स्वास्थ्य, तनाव के स्तर और बीमारी के प्रकोप पर वास्तविक समय के *डेटा* को *कैप्चर* कर सकते हैं, जिससे शुरुआती हस्तक्षेप और निवारक उपाय संभव हो सकते हैं।
- **मौसम विश्लेषण:** रोपण और कटाई के कार्यक्रम की योजना बनाने और सिंचाई की जरूरतों के बारे में निर्णय लेने के लिए सटीक मौसम पूर्वानुमान तक पहुँच सकते हैं।
- **पशुधन प्रबंधन:** पशुधन से जुड़े *सेंसर* के साथ पशु स्वास्थ्य की निगरानी करना, पशु भोजन के *पैटर्न* पर नज़र रखना और संभावित पशु स्वास्थ्य समस्याओं की पहचान की जा सकती है।
- **स्वचालित प्रणालियाँ:** कंप्यूटर–नियंत्रित सिंचाई प्रणालियाँ, *रोबोट हार्वेस्टर* और स्वचालित *फीडिंग* प्रणालियाँ न्यूनतम मानवीय हस्तक्षेप के साथ काम कर सकती हैं।
- ***डेटा* विश्लेषण और *मॉडलिंग*:** फसल की पैदावार का अनुमान लगाने के लिए, रुझानों की पहचान करने के लिए और खेती के तरीकों को अनुकूलित करने के लिए *सेंसर* और *फ़ील्ड* अवलोकनों से बड़े *डेटासेट* का विश्लेषण करने के लिए *सॉफ़्टवेयर* का उपयोग कर सकते हैं।
- **बाजार की सूचना तक पहुँच:** उत्पादन को कब और

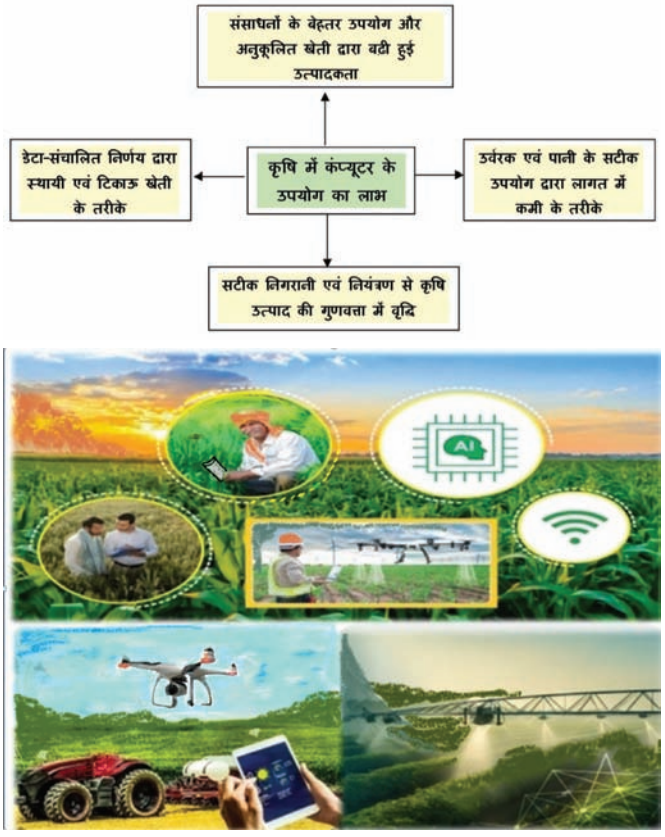

कहाँ बेचना है, इस बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए वास्तविक समय के बाजार डेटा तक पहुँचना संभव है।

डिजिटल परिवर्तन को आगे बढ़ाने में कंप्यूटर की भूमिका

भारतीय कृषि में *डिजिटल* परिवर्तन के केंद्र में *कंप्यूटर* हैं, जो विभिन्न तकनीकों के कार्यान्वयन और संचालन के लिए रीढ़ की हड्डी के रूप में कार्य करते हैं। *डेटा* संग्रह और विश्लेषण से लेकर स्वचालन और निर्णय समर्थन तक, *कंप्यूटर डिजिटल* समाधानों को कृषि पद्धतियों में सहज एकीकरण को सक्षम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो निम्नलिखित हैं:

- ***डेटा प्रोसेसिंग* और *एनालिटिक्स*:** कृषि में *सेंसर, ड्रोन,* उपग्रह और अन्य *डिजिटल* उपकरणों द्वारा उत्पन्न विशाल मात्रा में *डेटा* को *प्रोसेसिंग, स्टोरेज* और विश्लेषण के लिए शक्तिशाली *कंप्यूटिंग* क्षमताओं की आवश्यकता होती है। उच्च–प्रदर्शन वाले कंप्यूटर और *क्लाउड कंप्यूटिंग प्लेटफ़ॉर्म* बड़े *डेटा सेट* को संभालने, जटिल *एल्गोरिदम* चलाने और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को सूचित करने वाली मूल्यवान जानकारी निकालने के लिए आवश्यक हैं।
- **कृत्रिम बुद्धिमत्ता और *मशीन लर्निंग*:** कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए आई) और *मशीन लर्निंग* का अनुप्रयोग मजबूत *कंप्यूटिंग* शक्ति पर बहुत अधिक निर्भर करता है। कंप्यूटर बड़े *डेटासेट* का उपयोग करके *ए आई मॉडल* को प्रशिक्षित करने के लिए जिम्मेदार हैं, जिससे वे *पैटर्न* को पहचानने, पूर्वानुमान लगाने और कृषि कार्यों को अनुकूलित करने के लिए मार्गदर्शिका प्रदान करने में सक्षम होते हैं। फसल की उपज के पूर्वानुमान से लेकर बीमारी का पता लगाने और मिट्टी के विश्लेषण तक, *ए आई*–संचालित समाधान कृषि को बदल रहे हैं, और कंप्यूटर इन प्रगति के पीछे प्रेरक शक्ति हैं।
- **स्वचालन और *रोबोटिक्स*:** कंप्यूटर स्वचालन और *रोबोटिक्स* तकनीकों के पीछे दिमाग हैं जो खेती के तरीकों में क्रांति ला रहे हैं। स्वायत्त ट्रैक्टर, *रोबोट हार्वेस्टर* और सटीक रोपण प्रणाली कंप्यूटर द्वारा नियंत्रित की जाती हैं जो वास्तविक समय के *डेटा* को संसाधित करते हैं, जटिल वातावरण को *नेविगेट* करते हैं, और अत्यधिक सटीकता और दक्षता के साथ कार्यों को निष्पादित करते हैं।
- **सटीक कृषि और आई ओ टी:** कृषि में *इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आई ओ टी)* में जुड़े उपकरणों और *सेंसर* का एक *नेटवर्क* शामिल है जो लगातार *डेटा* एकत्र और संचारित करते हैं। कंप्यूटर इस *डेटा* को प्राप्त करने, संसाधित करने और विश्लेषण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे *साइट*–विशिष्ट *इनपुट एप्लिकेशन,* वास्तविक समय की निगरानी और स्वचालित सिंचाई प्रणाली जैसी सटीक कृषि प्रथाओं को सक्षम किया जा सकता है।
- **आपूर्ति श्रृंखला *ट्रेसेबिलिटी* और *डिजिटल मार्केटप्लेस*:** कृषि में आपूर्ति श्रृंखला *ट्रेसेबिलिटी* और *डिजिटल मार्केटप्लेस* के संचालन को सक्षम करने के लिए कंप्यूटर आवश्यक हैं। *ब्लॉकचेन* तकनीक, जो कई *ट्रेसेबिलिटी सिस्टम* को रेखांकित करती है, लेनदेन को सुरक्षित रूप से रिकॉर्ड करने और सत्यापित करने के लिए कंप्यूटर पर निर्भर करती है। इसके अतिरिक्त, *ई–कॉमर्स प्लेटफ़ॉर्म* और *ऑनलाइन मार्केटप्लेस कंप्यूटर* द्वारा संचालित होते हैं, जो कृषि उत्पादों की निर्बाध खरीद और बिक्री की सुविधा प्रदान करते हैं।
- ***सिमुलेशन* और *मॉडलिंग*:** कंप्यूटर विभिन्न कृषि परिदृश्यों को अनुकरण और *मॉडलिंग* करने के लिए अमूल्य उपकरण हैं। *कम्प्यूटेशनल मॉडल* के माध्यम से, शोधकर्ता और किसान विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में फसल की वृद्धि का अनुकरण कर सकते हैं, नई कृषि पद्धतियों की प्रभावकारिता का परीक्षण कर सकते हैं और क्षेत्र में परिवर्तन लागू करने से पहले संसाधन आवंटन को अनुकूलित कर सकते हैं।
- ***फार्म* प्रबंधन और निर्णय समर्थन प्रणाली:** प्रक्षेत्र प्रबंधन *सॉफ़्टवेयर* और निर्णय समर्थन प्रणाली कंप्यूटर–आधारित अनुप्रयोग हैं जो किसानों को सूचित निर्णय लेने में सहायता करते हैं। ये *सिस्टम* मौसम के पूर्वानुमान, बाज़ार के रुझान और ऐतिहासिक *रिकॉर्ड* सहित कई स्रोतों से *डेटा* को एकीकृत करते हैं, ताकि रोपण कार्यक्रम, *इनपुट एप्लिकेशन* और कटाई के समय पर सिफारिशें प्रदान की जा सकें।

भविष्य की संभावनाएँ

जैसे–जैसे भारतीय कृषि में *डिजिटल* परिवर्तन गति पकड़ता रहेगा, कंप्यूटर की भूमिका और भी महत्वपूर्ण होती जाएगी। अधिक शक्तिशाली और ऊर्जा–कुशल *कंप्यूटिंग* तकनीकों का विकास, *क्वांटम कंप्यूटिंग* और एज *कंप्यूटिंग* जैसे क्षेत्रों में प्रगति के साथ, कृषि में *डिजिटल* समाधानों की क्षमताओं को और बढ़ाएगा। कंप्यूटर की शक्ति का लाभ उठाकर, भारतीय किसान अपने कार्यों में दक्षता, उत्पादकता और स्थिरता के नए स्तरों को *अनलॉक* कर सकते हैं, जिससे देश *डिजिटल* कृषि क्रांति में एक वैश्विक नेता के रूप में स्थापित हो जाएगा।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

जीवन में सृष्टि निर्माण एवं फसल उत्पादन हेतु जल प्रबंधन अत्यंत आवश्यकः एक समीक्षा

राम जी लाल[1], अभिषेक कुमार सिंह[1], अभिनव सिंह[1], शिवम त्रिपाठी[2] एवं राजीव रंजन राय[1]

[1]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

[2]चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

जल का नाम जीवन भी है। चाहे वह समुद्र हो, चाहे ग्लेशियर या नदियाँ हो, संसार के प्रत्येक प्राणी को जल पहुँचाने का प्रायोजन ईश्वर का ही है। जहाँ नदियाँ नहीं जाती हैं वहाँ बादल जल पहुँचाते हैं। ग्लेशियर के रूप में जल को एकत्रित करके रखना, नदियों के द्वारा जन–जन तक उस जल को पहुँचाना ईश्वर की ही सेवा है। आधुनिक युग में सबसे अधिक जल राशि समुद्र के पास ही है, पर वह जल राशि मनुष्य के लिये सीधे किसी काम की नहीं है क्योंकि समुद्र का सम्पूर्ण जल खारा तथा नमकीन है। इसमें भी ईश्वर की महती कृपा ही है। यदि खारा समुद्र न हो तो वर्षा भी संभव नहीं है। समुद्र का खारा जल तब मीठा हो जाता है, जब वह ऊपर उठकर बादल बनकर बरसता है मिठास तो ऊपर उठने में ही है, उसी प्रकार मानव भी जब तक अपने से ऊपर उठकर बादलों की तरह सबके कल्याण की कामना से काम नहीं करेगा, तब तक वह समाज को मीठा पानी नहीं दे सकेगा। संसार का कोई धर्म ऐसा नहीं है, जो जल के प्रयोग के बिना अपना अनुष्ठान पूर्ण कर ले। प्रत्येक धर्म में या तो जल से पूजा होती है या फिर हम जल से पवित्र होकर ही पूजा करने योग्य होते हैं। हम जीवन में जन्म से लेकर विलय तक जल से जुड़े हुए हैं। हमारा उद्भव भी तब होता है, जब माँ के पेट में जल की एक नियमित मात्रा में गर्भ रहता है। जीवन का अंत होने पर भी जल से ही स्नान कराया जाता है।

आज मनुष्य को लगता है कि जल की आवश्यकता केवल हमें है, उसे अन्य किसी प्राणी की परवाह नहीं है। वन्य प्राणी भी तो अपने प्राणों की रक्षा के लिए जल खोजने के कारण ही हमें दिखायी देते हैं, जल तो सबका सहारा है। जहाँ–तहाँ सड़कों, गलियों में गायें पानी ढूंढ़ रही हैं। जब तक हमारे समाज के अंदर सामूहिक रूप से लोकमंगल की सनातन भावना का उदय नहीं होगा, तब तक हमारा निर्माण ही हमारे विध्वंस का कारण बनेगा। बादलों, नदियों के जल को जब तक हम व्यर्थ होने से नहीं रोकेंगे, तब तक जल संरक्षण मात्र एक वैचारिक चिंतन बनकर रह जायेगा।

समुद्र को नदियों और बादलों के जल की कदापि आवश्यकता नहीं है, वह तो पूर्ण है, तभी तो ईश्वर हम अपूर्ण प्राणियों को आपूर्ति के लिए बादलों के माध्यम से पृथ्वी के प्राण रक्षण के लिये जल भेजता है। हमें तो मात्र उसका सदुपयोग ही करना है। पंचतत्वों में जल हमारे जीवन का आधार है। जल के बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है, यदि जल न हो, तो सृष्टि का निर्माण भी सम्भव नहीं होता। जीवन के लिए जल के महत्व को इसी बात से समझा जा सकता है कि बड़ी–बड़ी सभ्यतायें नदियों के तट पर ही बसी हैं। जल की उपयोगिता को ध्यान में रखकर जल का प्रबन्धन एवं संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। ऋग्वेद में जल को अमृत के समतुल्य बताया गया है।

'अप्सु अंतः अमृतं, अप्सु भेषजं, जल का संरक्षण जीवन का संरक्षण है, पृथ्वी पर उपलब्ध होने वाले जल की सीमा तो निर्धारित है, परन्तु, इसके उपयोग की कोई सीमा नहीं है। जल एक चक्रीय संसाधन है, जिसको वैज्ञानिक विधि से साफ कर पुनः प्रयोग में लाया जा सकता है। पृथ्वी पर जल वर्षा तथा बर्फ से प्राप्त होता है। यदि इसका युक्तिसंगत उपयोग किया जाए तो उसकी कमी नहीं हो सकती है। जल प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य जल स्रोतों का अधिकतम उपयोग कर कृषि एवं खाद्यान्न को लक्ष्यानुकूल बढ़ाना है। जल संचय का सिद्धांत यह है कि वर्षा के जल को स्थानीय आवश्यकताओं और भौगोलिक स्थितियों की आवश्यकतानुसार संचित किया जाए। इस क्रम में भूजल का भंडार भी भरता है। देश के लगभग प्रत्येक बड़े शहर में भूमिगत जल का स्तर लगातार कम होता रहा है। इसका मुख्य कारण यह है कि किसी भी शहर में पानी की समुचित आपूर्ति की सुविधा नहीं है। अतः लोग अपनी शेष आवश्यकताओं के लिए भू–जल पर ही निर्भर रहते हैं। इन परिस्थितियों में जल प्रबन्धन हमारा प्राथमिक उद्देश्य बन जाता है।

जल का ग्रामीण और शहरी जीवन दोनों के लिए ही समान रूप में महत्व है, क्योंकि जल जीवन है। जल के बिना

मानव की कल्पना नहीं की जा सकती है। शहरी जीवन में जल की उपादेयता जहाँ पेयजल तथा दैनिक उपभोग तक सीमित है, वहीं ग्रामीण जीवन में इसका महत्व पेयजल के साथ–साथ कृषि तथा बागवानी और पशुधन आदि के लिए भी है। दूसरे शब्दों में कृषि क्षेत्र जल का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता है। यह तथ्य किसी में छिपा नहीं है कि भारतीय अर्थव्यवस्था का मेरुदण्ड कृषि ही है और आज भी लगभग एक तिहाई जलसंख्या कृषि पर निर्भर है। इसलिए कृषि के जल का महत्व सर्वविदित है। घरेलू, कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्रों में प्रति वर्ष कुल 829 घनमीटर पानी का उपयोग किया जाता है। वर्ष 2025 तक इस मात्रा में 40 प्रतिशत बढ़ोत्तरी का अनुमान है। देश में प्रतिवर्ष औसतन 4,000 अरब घन मीटर वर्षा का जल नदियों में पहुँचता है। परन्तु भंडारण और संसाधनों की कमी के करण 18 प्रतिशत जल ही उपयोग हो पाता है।

जल संकट विश्व व्यापक समस्या है। भारत के अनेक भागों में पानी की भीषण कमी, खेती योग्य भूमि की कमी, प्राकृतिक निवास संस्थानों के विनाश, पर्यावरण में असंतुलन तथा बड़े पैमाने पर प्रदूषण से सार्वजनिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा है तथा आर्थिक एवं सामाजिक प्रक्रिया खतरे में पड़ गयी है। देश के 12 प्रमुख शहरों को प्रति 14,000 करोड़ लीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है, जबकि उन्हें केवल 10,000 लीटर पानी ही मिल पाता है अर्थात मांग और आपूर्ति का अंतर 400 करोड़ लीटर है, जो मुंबई की प्रतिदिन की आवश्यकता के बराबर है।

वर्षा तथा नदियों के *ड्रेनेज* प्रणाली द्वारा 432 अरब घन मीटर भूजल का पुनर्भरण होता है जिसमें 395 अरब घन मीटर जल ही उपयोग योग्य होता है। इस उपयोग लायक जल का 82 प्रतिशत सिंचाई और कृषि कार्यों में उपयोग होता है, जबकि 18 प्रतिशत ही घरेलू और औद्योगिक उपयोग के लिए बचता है।

जल प्रबंधन

किसी क्षेत्र के जल प्रबंधन का स्वरूप उस क्षेत्र की प्रकृति, जल वैज्ञानिक विशेषताओं एवं मानवीय उपयोग के परिप्रेक्ष्य में किया जाना चाहिए तथा प्रबंधन कार्यक्रम एक निश्चित अवधि कम से कम 25 वर्षीय योजना को लक्षित कर बनाया जाना चाहिए। बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकता पूर्ति हेतु अतिरिक्त जल की आवश्यकता स्वाभाविक है। नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में जल की मांग के स्वरूप में थोड़े में अंतरों के बावजूद जल उपयोग की प्रकृति एक समान पायी जाती है। ग्रीष्म ऋतु में ग्रामीण एवं शहरी दोनों ही क्षेत्रों में जल का संकट बढ़ जाता है। अतः यह आवश्यक है कि जिले में जल संसाधन की सतत आपूर्ति बनी रहे। किंतु सतही जल–स्रोत नष्ट नहीं होना चाहिए। यह कार्य उचित जल प्रबंधन एवं उपयोग के स्वरूप में नियंत्रण कर भविष्य के लिए संरक्षित करके किया जा सकता है। यह कार्यक्रम निम्नलिखित विधियों द्वारा संभव है:

वर्षा का जल संचयन

वर्षा जल के संचयन द्वारा जल की आपूर्ति को सुनिश्चित किया जा सकता है। इन जल विभाजकों के क्षेत्र में तालाबों के निर्माण द्वारा जल संचयन का कार्य किया जा सकता है। ग्रामीण स्तर पर मिट्टी के छोटे–छोटे बांधों के निर्माण द्वारा व्यापक पैमानें पर जल का संचयन किया जा सकता है। जल विभाजक क्षेत्रों में जल एकत्रित करने की इन विधियों को स्वीकार कर कार्यरूप में परिणित कर किया जाए तो मानसून की अवधि में बाढ़ को रोका जा सकेगा, साथ ही भूमिगत जल के स्तर में वृद्धि होगी तथा मृदा अपरदन की तीव्रता में भी कमी आएगी। धरातलीय प्रवणता अधिक होने तथा वृक्षों के अभाव में जल प्रवाह तीव्र रहता है, जिसके कारण तीव्र कटाव के परिदृश्य विकसित हुए मिलते हैं। सघन वृक्षारोपण यदि समोच्य रेखाओं के अनुरूप किया जाए तो वृक्षों की जड़ों द्वारा बनाये गये रन्ध्रों से अवशोषित जल भूमिगत जल की मात्रा में वृद्धि भी करेगा और इस तरह वन, मृदा अपरदन के नियंत्रण में भी सहायक होंगे।

तालाबों की जलधारण क्षमता में वृद्धि

धरातलीय विषमताओं के कारण छोटे–बड़े तालाबों का निर्माण सरल है। तालाबों की साफ–सफाई एवं गहरीकरण क्रिया द्वारा इस क्षमता को दोगुना कर लघु सिंचाई क्षेत्र पर जल की आपूर्ति को सुरक्षित किया जा सकता है। कुछ तालाब या तो नष्ट हो चुके हैं अथवा नष्ट होने की स्थित में हैं। अतः कुछ तालाबों के जल की निकासी पर कृषि कार्य किया जाने लगा है। परन्तु विलुप्त तालाबों के संरक्षण की अत्यंत आवश्यकता है।

जल उपयोग हेतु जागरुकता

जल संसाधन का आवश्यकतानुसार उपयोग कर संरक्षित किया जाना चाहिए। अनुकूलतम उपयोग के लिए कृषकों को प्रशिक्षित एवं जागरुक बनाना आवश्यक है, जिससे वे निश्चित एवं वांछित मात्रा में अधिक जल का प्रयोग न करें। प्रायः यह देखा गया है कि जिन फसलों में एक बार सिंचाई की

आवश्यकता है, उन्हें तीन बार पानी दिया जाता है। इस प्रक्रिया में जल संसाधन का दुरुपयोग होता है। अतः जल संसाधन संरक्षण के लिए कृषकों को जल के अनुकूलतम उपयोग हेतु जागरुक किया जाना चाहिए। यह कार्य उन स्थानों पर भी वांछित है, जहाँ जल का उपयोग अन्य कार्यों में किया जाता है। कृषि तकनीक में परिवर्तन, *कण्टूर* के अनुरूप जुताई, विशिष्ट फसलों के उत्पादन तथा वर्षा के दिनों में अधिक पानी में उत्पादित की जाने वाली फसलें – धान एवं सिंघाड़ा की खेती और मत्स्य पालन आदि तथा रबी के फसलों में कम पानी की आवश्यकता वाली फसलें जैसे चना, मटर, जौ सदृश फसलों के अत्याधिक प्रचार–प्रसार द्वारा जल संवर्धन किया जाना चाहिए।

जल स्रोतों के पास ट्यूबवेल आदि के निर्माण पर रोक

तालाब या नदी के समीप व्यक्तिगत ट्यूबवेल आदि का निर्माण कर सिंचाई कार्य सम्पादित किया जाता है, जिसके कारण तालाब और नदी सूखने लगती है। अतः सार्वजनिक जल स्रोतों के समीप ऐसे व्यक्तिगत निर्माण पर रोक अत्यन्त आवश्यक है।

जलोपचार अत्यंत आवश्यक

जल के साथ कैल्शियम, अमोनिया, नाइट्रोजन, मैग्नीशियम जैसे कठोर तत्व एवं जैविक तत्व जल को प्रदूषित करते हैं। जल–प्रदूषण का प्रभाव प्रत्येक उन क्षेत्रों पर होता है, जहाँ उसका उपयोग किया जाता है। नगरीय क्षेत्र, जल–प्रदूषण से अधिक प्रभावित होते हैं। अतः उपयोग के पूर्व वांछित जलोपचार अत्यंत आवश्यक है। जलोपचार के उपरान्त जल को एक कार्य से दूसरे कार्य में सुगमता से प्रयोग किया जा सकता है।

सिंचाई क्षमता का सृजन

वर्तमान में उपलब्ध जल–स्रोत के उपयोग करने की क्षमता सम्पूर्ण कृषि के लिए पर्याप्त नहीं है। अतः सिंचाई एवं जल संसाधनों का अधिक सीमा तक प्रयोग करना जल संसाधन प्रबंधन का लक्ष्य होता है। भूगत, भूजल एवं झरना जल सिंचाई के लिये प्रयुक्त हो सकता है। बाढ़ वाली नदियों का जल शुष्क नदियों में नहर को अन्तरण कर उपलब्ध जल का अधिकाधिक उपयोग संभव है। सिंचाई क्षमता का उपयोग न होने की बढ़ती प्रवृत्ति एक बड़ी चिंता का विषय है।

क्षेत्र विकास कार्यक्रम

कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम, बृहद सिंचाई परियोजनाओं में सृजित की जाने वाली सिंचाई क्षमता का प्रयोग न होने की समस्या के लिये क्रियान्वित किए गए हैं। इसके अंतर्गत नवीन क्षमता के सृजन प्रयोग किया जाता है।

सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर शोध

सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण की दिशा में त्वरित एवं उद्देश्यपूर्ण शोध हेतु विभिन्न संस्थाओं के द्वारा प्रयास किए जाते हैं।

भूगत जल सिंचाई

भूगत जल के निरंतर प्रयोग से जल स्तर में गिरावट आ रही है, जिसका समय रहते निराकरण अत्यन्त आवश्यक है। लघु सिंचाई योजनाओं के अंतर्गत अधिकतर भूगत जल क्षमता का उपयोग किया जाता है। इन योजनाओं में जल के भण्डारण एवं लम्बी दूरी तक जल ले जाने के लिए कोई निवेश की आवश्यकता नहीं होती है। किसानों को सिंचाई के लिए जल समय पर उपलब्ध हो जाता है, जबकि बृहद मध्यम परियोजनाओं में ऐसा नहीं होता है। जल जमाव तथा वाष्पीकरण की समस्याएं जो प्रायः भूतल सिंचाई से संबंधित होती हैं, कुछ सिंचाई परियोजनाओं के क्षेत्र में बहुत कम है। जैसे–जैसे विभिन्न जल संसाधनों के उपयोग की वृद्धि हो रही है। उसी प्रकार कृषकों के सम्मुख नवीनतम समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। जल संसाधनों के चरम उपयोग के लिए कृषक वैज्ञानिकों, अभियंताओं और योजनाकारों के समन्वित प्रयास की आवश्यकता होती है।

पेयजल का प्रबंधन

विश्व में पेयजल की व्यवस्था जन–जन तक पहुँचाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। पृथ्वी का लगभग तीन चौथाई भाग पानी से घिरा हुआ है, फिर भी संसार पीने के पानी की समस्या से ग्रस्त है। अतः विभिन्न सरकारों और देशों ने पेय जल की समस्या को हल करने का प्रयास किया है।

जल संरक्षण हेतु उपाय

जल संरक्षण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :

वर्षा जल का संचय

जल संरक्षण हेतु वर्षा के जल का भंडारण अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए खेतों में मेड़ बनायी जायें। खेतों को खुला न छोड़ा जाए तथा जल–चक्र नियंत्रित करने के लिए सधन वन लगाए जाए।

पानी का दुरुपयोग अनावश्यक

जल के महत्व एवं संरक्षण की आवश्यकता को जन–चेतना के रूप में प्रसारित किया जाना चाहिए जिससे वे जल का दुरुपयोग न करें।

जल शोषण का प्रबंध

पृथ्वी के धरातल पर जल को अधिक देर तक रोके रखने के उपाय किए जाने चाहिए जिससे जल भूगर्भ में संचित हो सके। वनों की भूमि अधिक पानी सोखती है, अतः वर्षा के जल का बहाव वनों की ओर मोड़ना अत्यत्त लाभप्रद होता है। चरागाह, दलदली भूमि में जल का शोषण अधिक होता है।

खेतों में पानी का दुरुपयोग रोकना

किस भूमि में एवं किस फसल को कितने पानी की आवश्यकता है, इस संबंध में कृषक को अत्यत जानकारी होना अत्यंत आवश्यक है जिससे पानी का दुरुपयोग न हो सके।

कुओं से आवश्यक मात्रा में जल का उपयोग

कुओं से आवश्यक मात्रा में ही जल सिंचाई के हेतु निकाला जाना चाहिए अन्यथा इनके सूखने का खतरा रहता है।

भूगर्भ जल का सीमित उपयोग

ट्यूबवेलों की संख्या नियंत्रित होनी चाहिए क्योंकि भूगर्भ में जल की मात्रा सीमित होती है।

खेतों की नालियों में सुधार

खेतों की नालियों को सामूहिक सहायता से पक्का करना चाहिए, जिससे अवस्ववण से होने वाली हानियों को रोका जा सके।

तालाबों को पक्का बनाना

तलाबों को गहरा करके उन्हें पक्का अवश्य बनाना चाहिए, जिससे अधिक जल का संचय हो सके।

जल का शुद्धिकरण

जल–प्रदूषण के कारणों का निराकरण अवश्य किया जाना चाहिए तथा पेयजल शुद्धिकरण का विशेष प्रबंध करना चाहिए।

सिंचाई विधियों का नियंत्रण

स्प्रिंकलर प्रभावी सिंचाई का माध्यम है। इससे पानी की बचत की जा सकती है तथा ऊँची–नीची भूमि पर भी सिंचाई की जा सकती है। यद्यपि इसमें पूँजी अधिक लगती है परन्तु वाष्पीकरण तथा निस्तवरण द्वारा होनी वाली पानी की हानि को रोका जा सकता है।

उद्योगों में पानी के उपयोग पर नियंत्रण

उद्योगों में पानी की अधिक आवश्यकता के कारण अधिक मांग होती है। इसे कम करने से निम्नलिखित दो लाभ हो सकते हैं:

(अ) इसमें उद्योग के अन्य खण्डों की पानी की मांग को पूरा किया जा सकता है।

(ब) इन उद्योगें द्वारा नदियों एवं नालों में छोड़े गये दूषित जल की मात्रा कम हो जाएगी।

अधिकांश उद्योगों में जल का उपयोग शीतलन हेतु किया जाता है। अतः इस कार्य के लिये स्वच्छ और शुद्ध जल का उपयोग करना आवश्यक नहीं है। इस कार्य के लिए पुनः शोधित जल का उपयोग किया जा सकता है।

अतः उपरोक्त दी गयी विधियों का नियमित रूप से पालन करने से जल का प्रबंधन किया जा सकता है।

हमें प्रयत्नपूर्वक हिंदुस्तान की सभी बोलियों व भाषाओं में जो उत्तम चीजें हैं, उन्हें हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए उसका हिस्सा बनाना चाहिए और यह प्रक्रिया अविरल चलती रहनी चाहिए।

नरेन्द्र मोदी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों तथा कीटों से बचाव हेतु बीजोपचारः आवश्यकता एवं उपचार विधियाँ

मुकुन्द कुमार, सुधीर कुमार सिंह, सुरेन्द्र प्रताप प्रजापति, सुरेन्द्र प्रताप सिंह, ब्रह्म प्रकाश एवं वेद प्रकाश सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बीज समस्त कृषि का एक आधार है। फसल उत्पादन में बीज एक अत्यंत महत्वपूर्ण अवयव होता है। स्वस्थ फसल उत्पादन की प्रथम आवश्यकता तथा बुनियाद स्वस्थ बीज ही है। तकनीकी हस्तांतरण की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी भी बीज ही है जिसके द्वारा सरकारी, गैर सरकारी तथा विभिन्न कृषक समुदायों की आवश्यकता को सुगमता से पूरा किया जा सकता है। बीज की सुरक्षा द्वारा ही खाद्य एवं पोषक सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सकता है। उत्पादन की कुल लागत का लगभग 20–30 प्रतिशत भाग अकेले बीज पर ही खर्च हो जाता है। गुणवत्तापूर्ण बीज होने की दशा में अन्य आदानों का भी फसल पर बेहतर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। बीज विभिन्न प्रकार की व्याधियों का वाहक भी होता हैं जो भण्डारण के समय अथवा खेत में फसल को क्षति पहुँचाती है। बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों से बीज के अंकुरण तथा पौधों के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने के कारण फसल की उत्पादकता में कमी आ जाती है एवं बीज की भी गुणवत्ता प्रभावित होने से अगली फसल भी प्रभावित होने का खतरा बढ़ जाता है। बहुत से रोगों के कारक बीज की सतह पर अथवा बीज के अन्दर या बीज के साथ रहकर बीमारी फैलाते हैं। अतः किसी भी फसल से अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए बीज का स्वस्थ एवं निरोग होना अत्यंत आवश्यक है। अतः बीजों को विभिन्न प्रकार की व्याधियों तथा कीटों से सुरक्षित रखने के लिए बीज का उपचार करना नितांत जरूरी, अत्यंत सस्ता, बहुत ही सरल एवं प्रभावी तरीका है। बीजोपचार में लागत तथा मेहनत कम लगती है तथा परिणाम अत्यंत अच्छे प्राप्त होते हैं। इस तकनीक से पर्यावरण भी दूषित नहीं होता है। बीजोपचार की प्रक्रिया में बीज को बोने से पहले फफूँदनाशी, जीवाणुनाशी अथवा परजीवी से उपचारित किया जाता हैं।

बीजोपचार से लाभ

बीजोपचार पौधों को स्वस्थ एवं रोगों एवं कीटों से सुरक्षित रखने की एक अत्यंत सुगम तथा प्रभावी तकनीक है। बीजोपचार से प्राथमिक संक्रमण को रोकने में सहायता मिलती है तथा बीज के अंकुर तथा नवीन पौधों का स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। पौधों के स्वस्थ्य एवं रोगमुक्त रहने से फसल का विकास अच्छा होता है तथा उत्पादकता भी अच्छी प्राप्त होती है। बीजोपचार करने से निम्नलिखित लाभ प्राप्त होते हैं :

- पौधों की वृद्धि की आरंभिक स्थिति में बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों एवं कीटों पर सुगमता से नियंत्रण पाए जा सकने के कारण फसल स्वस्थ एवं बेहतर होती है।
- फसल का अंकुरण अच्छा एवं समान होता है।
- बीजों को उपचारित करने से भंडार में बीज अधिक दिनों तक सुरक्षित बना रहता है। उच्च मूल्य के बीज को दीर्घकाल तक सुरक्षित रखने के लिए बीजोपचार अत्यंत आवश्यक होता है।
- पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि होती है।
- मृदा में उपस्थित हानिकारक कीटों एवं कवकों पर आसानी से नियंत्रण किया जा सकता है।
- बीजोपचार में कवकनाशी रसायनों का प्रयोग अत्यंत सूक्ष्म मात्रा में किया जाता है जो पर्यावरण की दृष्टि से कम हानिकारक होता है।
- खड़ी फसल में मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक रसायनों का प्रयोग कम से कम करना पड़ता हैं।
- कृषकों के लिए बीजोपचार करना बहुत सस्ती तकनीक होने के साथ–साथ अत्यंत सुविधाजनक रहता है।
- दलहनी फसलों के बीजों को उनके उपयुक्त राइजोबियम कल्चर से उपचरित करने से उनकी जड़ों में गाँठे अधिक बनती हैं। इन गांठों में सहजीवी राइजोबियम जीवाणु निवास करते हैं जो वायुमंडल से नाइट्रोजन अवशोषित करके जड़ों में उसका स्थिरीकरण करते हैं। इससे इन फसलों की नाइट्रोजन आवश्यकता और भी कम हो जाती है। इतना ही नहीं, अपितु दलहनी फसलों की कटाई के पश्चात बोई गई अगली फसल की नाइट्रोजन आवश्यकता भी कुछ हद तक कम हो जाती है।
- बीजोपचार से अधिक नमी जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी फसल से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

- किसानों को फसल की उत्पादकता में भी 20 प्रतिशत तक मुनाफा मिलता है।

बीजोपचार की विधियाँ

सूर्यताप के द्वारा बीजोपचार

यह विधि मई एवं जून जैसे बहुत अधिक गर्मी वाले महीनों के लिए उपयुक्त होती है। कुछ रोगों के जीवाणु जो बीज के अन्दर निवास करते हैं, ऐसे रोगों के रोगाणुजनकों की उचित रोकथाम के लिए बीजों को मई एवं जून के महीने में जब तापमान 40 से 50 डिग्री सेल्सियस के मध्य होता है, बीजों को 7 घंटे तक पक्के फर्श पर धूप में फैला दिया जाता है। इस प्रकार बीजों को उपचारित करने से गेहूँ, जौ तथा जई में होने वाले अनावृत कंडुवा रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। बीज के आंतरिक भाग में उपस्थित रोगाणुजनकों को नष्ट करने के लिए रोगजनक की सुषुप्तावस्था को तोड़ना अनिवार्य होता है जिसके बाद ही सूर्य की गर्मी द्वारा उनको नष्ट किया जा सकता है।

नमक के घोल से उपचार

नमक के घोल से बीजों को उपचारित करने हेतु सर्वप्रथम पानी में नमक का 2 प्रतिशत का घोल तैयार कर लिया जाता है। इसके लिए 20 ग्राम नमक को 1 लीटर पानी में अच्छी तरह मिला लेना चाहिए। बुवाई से पहले बीज को इसमें डाल कर हिलायें। हल्के एवं रोगी बीज इस घोल में तैरने लगेंगे। इन्हें निथार कर फेंक दें और पेंदी में बैठने वाले बीज को साफ पानी से अच्छी तरह धोकर सूर्य के प्रकाश में सुखा लेना चाहिए। इस प्रकार के नमक के घोल के उपचार से बाजरे का अर्गट जैसे रोग को सुगमता से नियंत्रित किया जा सकता है।

गर्म जल द्वारा बीजोपचार

बीजोपचार करने की इस विधि में बीज या बीज के रूप में प्रयोग होने वाले कंद को 52–54 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 15 मिनट तक रखते हैं। इस विधि से विभिन्न रोगजनक नष्ट हो जाते हैं तथा बीज के अंकुरण पर भी कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। गर्म जल द्वारा बीजोपचार की इस विधि का प्रयोग अधिकांश जीवाणुओं तथा विषाणुओं की रोकथाम के लिए किया जाता है।

गर्म वायु द्वारा उपचार

पौधों में विषाणु द्वारा होने वाले रोगों के उपचार के लिए गर्म वायु द्वारा उपचार किया जाना अत्यंत प्रभावी पाया गया है। गन्ने में मोजेक विषाणु का नियंत्रण करने हेतु गन्ने के बीज टुकड़े को एक आर्द्र *इक्यूबेटर* अथवा गन्ने के बीजोपचार के लिए विशेष रूप से अभिकल्पित *एमएचएटी* मशीन में आठ घंटे तक 54^0 सेल्सियस गर्म वायु से उपचारित करते है। आलू के कंद को विषाणु से मुक्त करने हेतु अधिक आर्द्र दशा 37^0 से 39^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म बक्से में रखना अत्यंत प्रभावी रहता है।

कवकनाशी द्वारा उपचार

कवकजनित रोग से मुक्त करने के लिए कवकनाशी रसायन से निम्नलिखित पद्धति से बीजोपचार किया जाता है :

(अ) *स्लरी* बीजोपचार

इस विधि के अंतर्गत कवकनाशी रसायन की अनुशंसित मात्रा को थोड़े से पानी के साथ मिलाकर पेस्ट की तरह बना कर बीजों में मिला दिया जाता है तथा छाया में सुखाकर यथाशीध्र बुवाई करते हैं। इस विधि से बीज जल्दी बुवाई के लिए तैयार हो जाते हैं। अतः समय की बचत होती है।

(ब) शुष्क बीजोपचार

कवकनाशी रसायन की अनुशंसित मात्रा के साथ बीजों को *सीड ड्रेसिंग ड्रम* में डालकर अच्छी तरह से हिलाते हैं जिससे रसायन के कुछ कण प्रत्येक बीज पर चिपक जाएँ। यदि बीज की मात्रा कम हो तो *सीड ड्रेसिंग ड्रम* के स्थान पर मिट्टी के घड़े का प्रयोग भी किया जा सकता है। *सीड ड्रेसिंग ड्रम* या मिट्टी के घड़े में बीज की मात्रा दो तिहाई भाग से ज्यादा नहीं भरना चाहिए।

(स) भीगा बीजोपचार

कवकनाशी रसायन की अनुशंसित मात्रा को पानी में घोल लेते हैं। तदुपरान्त इस घोल में बीज को कुछ समय के लिए छोड देते हैं। कुछ समय पश्चात इन बीजों को घोल से निकालकर छाएदार स्थान में 6–8 घंटे तक सुखा लिया जाता है। सूखने के पश्चात् यथाशीध्र बुवाई करते हैं। सब्जियों के लिए यह विधि काफी लाभदायक सिद्ध हुई है।

कीटनाशक द्वारा उपचार

मृदा में दीमक तथा अन्य कीट, पौधों को अंकुरण की अवस्था से ही क्षति पहुँचाना आरंभ कर देते हैं। बीज को कीटनाशकों से उपचारित कर बुवाई करने से बीज तथा पौधों को कीटों से मुक्त रखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त उपचारित बीज को भण्डारण के दौरान भी सुरक्षित रखा जा

सकता हैं। दीमक के उपचार के लिए *क्लोरपाईरिफास* 20 ई. सी. का पानी में घोल बनाकर बीज पर छिड़काव किया जा सकता हैं।

जीवाणु कल्चर से उपचार

विभिन्न जीवाणु कल्चर से बीजोपचार करने से पौधों के लिए मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। सामान्यतः उपयोग में आने वाले कुछ प्रमुख जीवाणु निम्नलिखित हैं:

(अ) *राइजोबियम* जीवाणु कल्चर

इस जीवाणु का दलहनी फसल के साथ प्राकृतिक सहजीविता का संबंध होता है। दलहनी फसलों की जड़ों में उपस्थित *राइजोबियम* जीवाणुओं में वायमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन को मृदा में स्थिरीकरण कराने की अद्भुत क्षमता होती है। दलहन सहजीविता से 40–100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष नाइट्रोजन मृदा में स्थिर होती है। विश्व में नाइट्रोजन के कारखानों में उत्पादित होने वाली नाइट्रोजन की मात्रा से भी अधिक *राइजोबियम* जीवाणु मृदा में स्थिर कर देते हैं जो पौधों के उपयोग में कार्य आती है।

(ब) *एजोटोबैक्टर* जीवाणु

ये जीवाणु गैर दलहनी फसल जैसे धान, गेहूं, जौ, ज्वार, मक्का तथा बाजरा आदि के लिए उपयुक्त है। *एजोटोबैक्टर* जीवाणु 20–40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर तक नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करते हैं।

(स) फास्फोरस विलेयकारी जीवाणु

फास्फोरस विलेयकारी जीवाणु मृदा में उपस्थित अविलेय, स्थिर तथा अप्राप्त फास्फोरस की विलेयता बढ़ाकर उसे पौधों को उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। इनका उपयोग लगभग सभी फसलों में किया जा सकता है।

जीवाणु कल्चर से बीजोपचार की विधिः जीवाणु कल्चर से बीजोपचार से अच्छे परिणाम के लिए सही विधि से बीजों को उपचारित करने का अत्यंत महत्व है। जीवाणु कल्चर (200 ग्राम) को गुड़ के 10 प्रतिशत घोल (1 लीटर पानी में 100 ग्राम गुड़ में) मिलाया जाता है। यह मात्रा एक एकड़ जमीन में बोये जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होती है। इस कल्चर वाले घोल को बीजों के साथ इस प्रकार मिलाना चाहिए कि प्रत्येक बीज के ऊपर कल्चर की एक हल्की सी परत बन जाए। उपचारित बीजों को छाया में सुखाकर तुरंत खेत में बुआई कर देना चाहिए।

बीजोपचार करते समय अपनाई जाने वाली कुछ प्रमुख सावधानियाँ

- यदि बीज को कवकनाशी, कीटनाशी तथा जीवाणु कल्चर तीनों से ही उपचारित करना हो तो बुवाई करने वाले बीजों को सबसे पहले फफूँदनाशी अथवा कवकनाशी से उपचार करें। उसके 2 घंटे के बाद कीटनाशी, फिर उसके चार घंटे बाद अंत में जीवाणु कल्चर से उपचार करना चाहिए।
- कवकनाशी अथवा कीटनाशी की निर्धारित मात्रा से ही बीज उपचार करें। मात्रा कम रहने पर उसका लाभ कम प्राप्त होगा तथा अधिक मात्रा होने पर नुकसान होने की भी संभावना बनी रहती है।
- रसायनों के प्रयोग से पहले उनको प्रयोग करने की अंतिम *(एक्सपायरी)* तिथि अवश्य देख लेना चाहिए।
- रसायनों को बच्चों एवं मवेशियों से दूर रखें।
- जिस व्यक्ति के हाथ में घाव या खरोंच हो उससे किसी भी रसायन का उपयोग नहीं करवाना चाहिए।
- बीज को उपचारित करते समय हाथों में दस्ताने तथा चेहरे पर कपड़ा बांध लेना चाहिए।
- बीजोपचार के बाद बीज को छायादार स्थान पर ही सुखाएं। कभी भी उपचारित बीजों को धूप में नहीं सुखाना चाहिए। जीवाणु कल्चर से उपचारित बीज को धूप में सुखाने पर जीवित जीवाणु मर सकते हैं, जिससे इस प्रकार के उपचार का कोई लाभ प्राप्त नहीं हो सकेगा।
- बीजोपचार के बाद हाथ–पाँव तथा चेहरे को साबुन से भली–भांति धो लेना चाहिए।
- उपचारित बीजों को रासायनिक उर्वरकों तथा कृषि रसायनों के सीधे सम्पर्क से बचाना चाहिए।
- रसायनों के घोल, पैकेट या डिब्बे को प्रयोग करने के बाद नष्ट कर देना चाहिए।
- बचे हुए उपचारित बीज को खाने के लिए प्रयोग नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार इस उपचारित बीज को पशुओं को भी नहीं खिलाना चाहिए।

कुछ प्रमुख फसलों में कवकनाशियों/कीटनाशी रसायनों/जीवाणु कल्चर से बीजोपचार के लिए करने के लिए संस्तुत मात्रा

कुछ प्रमुख फसलों में विभिन्न कीटनाशी/कवकनाशी तथा जीवाणु कल्चर से बीजोपचार करने की संस्तुत दर सारणी 1 में दर्शाई गई है।

सारिणी 1: विभिन्न प्रमुख फसलों में विभिन्न कीटनाशी/कवकनाशी तथा जीवाणु कल्चर से बीजोपचार करने की संस्तुत दर

फसल	रोग एवं कीट	कीटनाशी/कवकनाशी	जीवाणु कल्चर
गेहूँ	अनावृत कंड	*बेनोमिल* 50 प्रतिशत डबल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज अथवा *कार्बाक्सीन* 37.5 प्रतिशत अथवा थीरम 37.5 प्रतिशत 2.5 ग्राम अथवा *कार्बाक्सिन* 75 प्रतिशत डबल्यूपी 2–2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	*स्यूडोमोनास फ्लुओरेसेन्स* 1.75 प्रतिशत डबल्यूपी 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज
	दीमक	*थिअमेथोक्साम* 30 प्रतिशत एफएस 3.3 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम बीज	
धान	झुलसा, पत लाद्यान, भूरी	*कार्बांडाजिम/कैप्टान* 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम	
	चिती रोग जड़ सड़न		
	जड़ सड़न		ट्राडकोइर्मा 9–10 जीवाणु प्रति किलोग्राम बीज
	पर्ण अंगमारी		*स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* 0.5 प्रतिशत डब्लू. पी 10.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज
	अल्टेरनेरिया पत्र लांद्यन अंगमारी हेल्मिथोंस्पोरियम	*कार्बांडाजिम* 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
मक्का	हेल्मिंथोस्पोरि यम, शीय ब्लाइड	थीरम/कैप्टान 3.00 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
बाजरा	मृदुरोमिल आसिता	*मेटालेक्सिल एम* 31.8 प्रतिशत ईएस 2.0 मि.ली. अथवा *मेटालेक्सिल* 35 प्रतिशत डबल्यूएस 600 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम बीज	
	कातरा एवं दीमक	*इमिडाक्लोप्रिड* 48 प्रतिशत एफएस 1000 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम बीज	
दलहन			
चना	म्लानि, जड़ गलन		*ट्राइकोडर्मा विरिडी* 1 प्रतिशत डब्लू. पी. 5.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज
	उकठा रोग	*कार्बांडाजिम/थीरम* 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
अरहर	उकठा रोग	*कार्बांडाजिम/थीरम* 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
मसूर, मूँग, उर्द	उकठा एवं झुलसा		*ट्राइकोइर्मा विरिडी* 1 प्रतिशत डब्लू. पी. 9.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज
मूँग, उर्द	जड़ गलन	थीरम 75 प्रतिशत डबल्यूएस 3.0 ग्राम अथवा *कार्बांडाजिम* 50 डबल्यूपी 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	रस चूसक कीट	*इमिडाक्लोप्रिड* 600 एफएस 5 मिली प्रति किलोग्राम बीज	

तिलहन			
मूँगफली	बीज एवं मृदाजनित रोग	*कार्बाडजिम/थीरम* 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	तना गलन	*टेबुकोनाजोल* 2 प्रतिशत 1.0 से 1.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज अथवा *थाओफेनेट मिथाइन* 4,500 ग्राम प्रति लीटर *पायरेक्लोस्ट्रोबिन* 50 एफएस 1.0 से 1.25 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	कॉलर गलन एवं जड़ गलन	*टेबुकोनाजोल* 2 प्रतिशत डीएस 1.0 से 1.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज अथवा थीरम 75 प्रतिशत डबल्यूएस 4–5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	टिक्का, कोलार गलन एवं शुल्क जड़ गलन	*कार्बाडजिम* 12 प्रतिशत *मैंकोजेब* 63 प्रतिशत डबल्यूपी 1.5 से 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज अथवा *कार्बाडजिम* 25 प्रतिशत + *मैंकोजेब* 50 प्रतिशत डबल्यूएस 1.5 से 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
सरसों	श्वेत किट्ट	थीरम 3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	सफेद रतुआ	*मेटालक्साइल* 35 प्रतिशत डबल्यूएस 600 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम बीज + मैंकोजेब 50 प्रतिशत डबल्यूएस 1.5 से 2.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	
	सरसों की आरा मक्खी एवं *पेटेंड बग*	*इमिडाक्लोप्रिड* 70 प्रतिशत *डबल्यूएस* 600 ग्राम प्रति 100 किलोग्राम बीज	
तिल	बीजजनित रोग	थीरम 75 प्रतिशत डब्लू. पी. 3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज	

यदि किसान भाई किसी भी फसल की बुवाई से पूर्व उपरोक्त वर्णित विधि से बीज को उपचरित कर लेंगे तो निश्चित रूप से उनकी फसल रोगमुक्त एवं स्वस्थ रहकर बेहतर उपज देगी। कम समय, कम श्रम तथा मामूली लागत से किया गया बीजोपचार फसल की उत्पादकता में अत्यंत आशाजनक परिणाम देने में बहुत ही सहायक होता है।

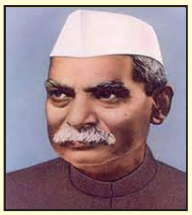

हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिसने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का वहिष्कार नहीं किया।

– डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

मृदा उत्पादकता एवं फसल उत्पादन को बढ़ाने में जैव उर्वरक का योगदान

कौशलेंद्र मणि त्रिपाठी, शैलेंद्र कुमार मिश्र, अंकित कुमार मिश्र एवं ब्रजराज शरण तिवारी
बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा

जैव उर्वरक की आवश्यकता एवं महत्व

कृषि उत्पादन में आत्मनिर्भरता की दृष्टि से बीज, जल प्रबंध, उर्वरक तथा पौध संरक्षण का उल्लेखनीय योगदान रहा है, किंतु आज मृदा स्वास्थ्य, तथा फसल उत्पादन की स्थिति को देखते हुए कृषि के क्षेत्र में नए रूप से सोचने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है, क्योंकि आज के समय में हमारी कृषि रसायनिक उर्वरकों व दवाओं पर निर्भर हो गई है, जिसका दुष्प्रभाव हम मृदा की उर्वरता और उत्पादकता को देखकर बहुत आसानी से समझ सकते हैं।

आज मृदा के स्वास्थ्य को देखते हुए कृषि के क्षेत्र में हमें रसायनिक उर्वरकों और दवाओं की जगह जैव उर्वरक को अपनाने की बेहद आवश्यकता प्रतीत होती है।

जैव उर्वरक का अर्थ एवं परिभाषा

जैव उर्वरक सूक्ष्म जीवाणुओं युक्त टीका है जिसके उपयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि होती है। इसमें जीवित सूक्ष्म जीवाणुओं के शक्तिशाली विभेद होते हैं जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिरीकरण द्वारा तथा मृदा फॉस्फेट को विलेय करके पौधों को नाइट्रोजन व फास्फोरस जैसे पोषक तत्व प्रदान करते हैं।

विभिन्न फसलों के लिए जैव उर्वरक

देश में निम्नलिखित जैव उर्वरकों को किसानों के उपयोग के लिए उपलब्ध कराया जाता है :

- **नाइट्रोजन युक्त जैव उर्वरक**

राइजोबियमः दलहनी फसलों में नाइट्रोजन के लिए।

एजोटोबैक्टरः सभी खाद्यान्नों, तिलहन, कपास, गन्ना, सब्जियों, बागवानी तथा वानिकी पौधों में नाइट्रोजन के लिए।

एसीटोबैक्टरः केवल गन्ने में नाइट्रोजन के लिए।

एजोलाः खड़े पानी वाले धान में नाइट्रोजन के लिए।

कम्पोस्टिंग कल्चरः कम्पोस्ट जल्दी पकने के लिए।

- **फास्फोरस युक्त जैव उर्वरकः** फास्फेटिक जैव उर्वरक फास्फोरस को घुलनशील अवस्था में बदलने का कार्य करता है।

फॉस्फेट विलायक सूक्ष्म जीवः ये सभी प्रकार की फसलों व सब्जी आदि में प्रयोग होता है।

माइकोराईजाः फल, वृक्ष व दलहनी फसल।

जैव उर्वरक पौधों को प्रायः नाइट्रोजन व फास्फोरस की उपलब्धि में सहायक है। इसके साथ–साथ यह पौधों को वृद्धिकारी जटिल पदार्थ भी देते हैं तथा रोगों एवं कीड़ों के संक्रमण में कमी लाते हैं।

जैव उर्वरक के लाभ

- पोषक तत्व के सस्ते स्रोत
- पौधों के अंकुरण व वृद्धि में सहायक
- रोगाणुओं का दमन, तथा फसलों की रक्षा
- आगामी फसलों के लिए लाभदायक अवशेष
- कृषि उत्पादों के उत्तम गुण
- मृदा के स्वास्थ्य में सुधार।

विभिन्न जैव उर्वरकों की नत्रजन स्थिरीकरण या फास्फोरस घुलनशील बनाने की क्षमता

जैवउर्वरक	नत्रजन स्थिरीकरण क्षमता (कि.ग्रा./घंटा/वर्ष)	फसलें	उत्पादन वृद्धि प्रतिशत
राइजोबियम कल्चर	250–300	दलहनी	0.60
एजोटोबैक्टर	10–60	धान्य	5.30
एजोस्पिरिल्म	0.40	ज्वार, धान्य आदि	0.20
नीली–हरी शैवाल	25–30	धान	0.15
एजोला	25–30	धान	0.15

फास्फोरस जैव उर्वरक (अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील में परिवर्तन)

- *पी एस बी कल्चर* 20–25 सभी फसलें 20–30

- माइकोराइजा (वीएएम) 15–20 धान, मक्का, अलसी, प्याज व गेहूँ 20–30

जैव उर्वरकों के उपयोग की विधि

बीज उपचार

200 ग्राम जैव उर्वरक (*एजोटोबैक्टर* या *फास्फेटिक*) का 200–500 मिली पानी में घोल बनाएं तथा इस घोल को किसी छायादार जगह पर 10–12 कि.ग्रा. बीजों पर दोनों हाथों से भली प्रकार तब तक मिलाएं जब तक कि सभी बीजों पर कल्चर की एक समान परत न चढ़ जाए। तत्पश्चात छाया में बीजों को फैलाकर तुरंत बुवाई कर दें।

ऊसर भूमि में *राइजोबियम* से उपचारित बीज के ऊपर जिप्सम का आवरण और अम्लीय मृदा में खड़िया का आवरण चढ़ा देने से मृदा क्षारता और अम्लता का *राइजोबियम* की क्षमता पर बुरा प्रभाव कम पड़ता है, इस प्रक्रिया को बीज को कोट करना या *प्लेरिंग* करना कहते हैं।

मृदा उपचार

2–3 कि.ग्रा. जैव उर्वरक का 10–60 कि.ग्रा. कम्पोस्ट भुरभुरी मिट्टी में मिश्रण तैयार कर एक एकड़ खेत में आखिरी जुताई के समय या फिर पहली सिंचाई के पूर्व समान रूप से खेत में छिड़क दें।

200 ग्राम जैव उर्वरक 10–12 कि.ग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता है। 5–10 कि.ग्रा. जैव उर्वरक प्रति हेक्टेयर भूमि के लिए पर्याप्त है। लगभग 10 कि.ग्रा. नील हरित शैवाल प्रति एकड़ धान के लिए पर्याप्त होता है। 10 क्विंटल एजोला प्रति एकड़ धान के लिए पर्याप्त होता है।

जैव उर्वरकों के उपयोग के दौरान रखी जाने वाली आवश्यक सावधानियां

- जैव उर्वरक को सदैव धूप व गर्मी से बचाएं।
- पैकेट उपयोग के समय ही खोलें।
- बीज उपचार छाया में ही करें।
- कल्चर को रसायन के सीधे संपर्क से बचाएं।
- कल्चर का प्रयोग यथा शीघ्र कर लेना चाहिए।
- यदि किसी कारण वस इसे कुछ समय तक रखना हो तो ठंडे स्थान (30° सेल्सियस से कम ताप पर) में रखा जाए।
- 40° सेल्सियस ताप से अधिक ताप पर कल्चर की शक्ति का ह्रास प्रारंभ हो जाता है।
- कल्चर तैयार करने से 3 माह के अंदर इसका प्रयोग कर लेना चाहिए।
- खेत में नाइट्रोजन की ज्यादा मात्रा डालने से कल्चर का पूरा लाभ नहीं मिल पाता।
- कल्चर को हल्के हाथों से मिलाना चाहिए ताकि बीज के छिलके रगड़ से अलग न हो जाएं।
- जैव उर्वरक के अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए इन्हें हमेशा भरोसेमंद स्थानों से ही खरीदें तथा इनको प्रमाणित तिथि तक ही प्रयोग में लाएं।

यदि हमारे देश के लोग तय कर लें कि हमारे देश का व्यवहार, बोल–चाल, पत्राचार, शासन स्वभाषा में हो जाए तो महर्षि पतंजलि और पाणिनि जैसे महापुरुष हमें जो बौद्धिकता देकर गए वो हैं अपने आप पुनर्जीवित हो जाएगी।

– श्री अमित शाह

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

माइक्रोबियल फाइटोहॉर्मोन और पौधों की वृद्धि और विकास में उनकी भूमिका

प्रियंका गिरी, स्मिता सिंह एवं सुरेन्द्र प्रताप सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

माइक्रोबियल फाइटोहॉर्मोन पौधों के वे हॉर्मोन हैं जो विभिन्न सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं, जिनमें जीवाणु, कवक और शैवाल शामिल हैं। ये *फाइटो हॉर्मोन* पौधों की वृद्धि, विकास और पर्यावरणीय तनावों के प्रति उनकी प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। *फाइटोहॉर्मोन* उत्पन्न करने में सक्षम सूक्ष्मजीव अक्सर *राइजोस्फेयर* में पाए जाते हैं, जो पौधों की जड़ों के चारों ओर की मिट्टी का क्षेत्र होता है या ये सूक्ष्म जीव पौधों के ऊतकों के भीतर सहजीवी रूप में भी रहते हैं। *फाइटोहॉर्मोन* का उत्पादन करके, ये सूक्ष्मजीव पौधों की *फिजियोलॉजी* को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित कर सकते हैं, जिससे बेहतर वृद्धि, तनाव सहनशीलता में वृद्धि, और फसल उत्पादन में वृद्धि होती है। मिट्टी विभिन्न जीवों का स्रोत है, जिनमें कवक, जीवाणु और पौधे शामिल हैं। पौधों की जड़ें सूक्ष्मजीवों द्वारा भारी रूप से उपनिवेशित होती हैं (मिट्टी और अन्य आवासों की तुलना में) क्योंकि जड़ उत्सर्जन का पोषक तत्व घटक समृद्ध होता है। *राइजोस्फेयर* एक अपेक्षाकृत पोषक तत्व समृद्ध वातावरण है जिसमें *अमीनो एसिड, शर्करा, फैटी एसिड* और अन्य जैविक यौगिक होते हैं, जो उन सूक्ष्मजीवों को आकर्षित करते हैं जो जड़ द्वारा छोड़े गए विभिन्न पोषक तत्वों का उपयोग करते हैं। इसके बदले में, सूक्ष्मजीव जैविक रूप से सक्रिय यौगिकों का संश्लेषण करते हैं, जिनमें *फाइटोहॉर्मोन (ऑक्सिन, साइटोकाइनिन, जिबरेलिन, एथिलीन* और *एब्सिसिक एसिड), एंटीफंगल* यौगिक, *एंजाइम,* और संगत घुले हुए पदार्थ शामिल होते हैं। ये *माइक्रोबियल मेटाबोलाइट्स* पौधों की वृद्धि, पोषण और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। *माइक्रोबियल हॉर्मोन* जैसे *इंडोल–3–एसिटिक एसिड, साइटोकाइनिन, एब्सिसिक एसिड, जिबरेलिन* और *एथिलीन,* जो सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं, पौधों की वृद्धि और विकास में विशिष्ट भूमिकाएं निभाते हैं।

ऑक्सिन

माइक्रोबियल ऑक्सिन पौधों के वे *हॉर्मोन*– जैसे यौगिक हैं जो सूक्ष्मजीवों, जैसे कि बैक्टीरिया और कवक, द्वारा उत्पन्न होते हैं। ये *ऑक्सिन* पौधों की वृद्धि और विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं, जिससे कृषि और पौधों के स्वास्थ्य के लिए संभावित लाभ मिलता हैं। सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित ऑक्सिन निम्नलिखित हैं:

इंडोल–3–एसिटिक एसिड: यह माइक्रोब्स द्वारा उत्पन्न सबसे आम ऑक्सिन है। विभिन्न मिट्टी के जीवाणु, जैसे कि *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफेशियन्स* और *स्यूडोमोनास* प्रजातियां, के साथ कुछ कवक भी ऑक्सिन का संश्लेषण कर सकते हैं। ये *माइक्रोब्स* जड़ विकास को उत्तेजित कर के या पर्यावरणीय तनावों के प्रति पौधों की प्रतिक्रियाओं को प्रभावित करके पौधों की वृद्धि को प्रभावित कर सकते हैं।

अन्य ऑक्सिन समकक्ष: कुछ सूक्ष्मजीव ऑक्सिन के अलावा अन्य ऑक्सिन–जैसे यौगिक उत्पन्न करते हैं, जैसे कि *इंडोल–3–ब्यूटिरिक एसिड (आईबीऐ)* या *फिनाइल एसिटिक एसिड (पीएए)*। ये यौगिक भी पौधों की वृद्धि और विकास पर प्रभाव डाल सकते हैं।

माइक्रोबियल ऑक्सिन का उत्पादन

***बैक्टीरियल* उत्पादन:** कई जीवाणु अमीनो एसिड *ट्रिप्टोफैन* के रूपांतरण के माध्यम से ऑक्सिन का उत्पादन करते हैं। इस प्रक्रिया में *ट्रिप्टोफैन मोनो ऑक्सीजिनेज* जैसे *एंजाइम* शामिल होते हैं। उदाहरण: *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफेशियन्स, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस।*

***फंगल* उत्पादन:** कुछ कवक अपने *मेटाबॉलिक* मार्गों के माध्यम से ऑक्सिन और अन्य ऑक्सिन का उत्पादन करते हैं। उदाहरण: *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम, फ्यूजेरियम* प्रजातियां।

माइक्रोबियल ऑक्सिन की भूमिका

जड़ विकास का संवर्धन: कई मिट्टी के जीवाणु और कवक इंडोल एसिटिक एसिड का उत्पादन करते हैं, जो जड़ विकास में शामिल एक प्रमुख ऑक्सिन है। उदाहरण के लिए, *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफेशियन्स* और *स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस इंडोल एसिटिक एसिड* का उत्पादन करने के लिए जाने जाते हैं और पौधों में जड़ विकास को उत्तेजित कर सकते हैं।

पौध विकास: पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले राइजो बैक्टीरिया (पीजीपीआर) जैसे कि *बैसिलस सबटिलिस* और

3-SP Singh

स्यूडोमोनास पुटिडा ऑक्सिन का उत्पादन करते हैं, जो पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं, तनाव प्रतिरोध में सुधार करते हैं और फसल की पैदावार को बढ़ाते हैं।

तनाव शमनः ऑक्सिन उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव पौधों को सूखा या लवणता जैसे पर्यावरणीय तनावों से निपटने में मदद कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, *एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस* ऑक्सिन का उत्पादन करता है जो पौधों की अजैविक तनावों के प्रति सहनशीलता को बढ़ाता है।

पादप–माइक्रोब सहजीवनः *माइक्रोबियल ऑक्सिन* लाभकारी पौधा–माइक्रोब अंतः क्रियाओं में योगदान करते हैं, जहाँ सूक्ष्म जीवन केवल पौधों की वृद्धि का उत्प्रेरित करते हैं, बल्कि पोषक तत्वों के अधिग्रहण और रोग प्रतिरोध में भी मदद करते हैं। उदाहरण के लिए, *माइकोराइज़ल* कवक ऑक्सिन का उत्पादन कर सकते हैं जो पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंधों की स्थापना में सहायक होते हैं।

पौधों के अन्य हॉर्मोन का विनियमनः *माइक्रोबियल ऑक्सिन* पौधों के अन्य हॉर्मोन जैसे *जिबरेलिन* और *साइटोकाइनिन* के आंतरिक स्तरों को भी प्रभावित करते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि और विकास के विभिन्न पहलुओं पर प्रभाव पड़ता है।

कृषि में अनुप्रयोग

जैवउर्वरकः ऑक्सिन उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों का उपयोग जैवउर्वरक के रूप में किया जाता है ताकि मिट्टी की उर्वरता और पौधों की वृद्धि में सुधार हो सके। ये जैवउर्वरक पौधों के स्वास्थ्य और उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं।

जैवनियंत्रण कारकः कुछ ऑक्सिन उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव जैवनियंत्रण कारक के रूप में भी कार्य करते हैं, जो पौधों के स्वास्थ्य को बढ़ावा देकर और पौधों के रोगजनकों से उनकी सुरक्षा करते हैं।

साइटोकाइनिन

माइक्रोबियल साइटोकाइनिन पौधों के वे हॉर्मोन– जैसे यौगिक हैं जो सूक्ष्म जीवों, जैसे कि जीवाणु और कवक, द्वारा उत्पन्न होते हैं, और ये पौधों द्वारा उत्पादित *साइटोकाइनिन* के समान पौधों की वृद्धि और विकास को प्रभावित करते हैं। ये *माइक्रोबियल साइटोकाइनिन* पौधों के स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सकते हैं, उनकी वृद्धि को प्रोत्साहित कर सकते हैं, और तनाव सहनशीलता में सुधार कर सकते हैं। सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न महत्वपूर्ण *साइटोकाइनिन* निम्नलिखित हैंः

प्राकृतिक साइटोकाइनिन

ज़ियाटिनः यह एक सामान्य प्राकृतिक साइटोकाइनिन है जो पौधों में पाया जाता है और कुछ सूक्ष्म जीवों द्वारा भी उत्पादित होता है।

डायहाइड्रोज़ियाटिन* और *हाइड्रॉक्सिलेटेड ज़ियाटिनः ज़ियाटिन के ये संस्करण सूक्ष्म जीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं।

संश्लेषित और समकक्ष साइटोकाइनिन

काइनेटिन और इसके *डेरिवेटिव्सः* ये प्राकृतिक साइटोकाइनिन के समान संश्लेषित साइटोकाइनिन हैं, जिन्हें कुछ सूक्ष्मजीव उत्पन्न करते हैं।

अन्यः विभिन्न संश्लेषित या संशोधित साइटोकाइनिन के रूप, जिनका प्रभाव प्राकृतिक साइटोकाइनिन की तरह होता हैं।

माइक्रोबियल साइटोकाइनिन का उत्पादन

***बैक्टीरियल* उत्पादनः** कुछ जीवाणु विशेष *एंजाइमेटिक* मार्गों के माध्यम से *साइटोकाइनिन* का उत्पादन करते हैं। उदाहरण के लिए, *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमेफेशियन्स, बैसिलस* प्रजाति, और *स्यूडोमोनास* प्रजातियां, जैसे *जीवाणु आइसोपेंटेनिल ट्रांसफेरेज़* जैसे जीन का उपयोग करके साइटोकाइनिन का संश्लेषण करते हैं।

कवक उत्पादनः कवक जैसे *फ्यूज़ेरियम* प्रजाति और ट्राइकोडर्मा प्रजातियां, जटिल जैवसंश्लेषित मार्गों के माध्यम से *साइटोकाइनिन* का उत्पादन करते हैं।

माइक्रोबियल साइटोकाइनिन की भूमिकाएं

कोशिका विभाजन का संवर्धनः *माइक्रोबियल साइटोकाइनिन* पौधों के ऊतकों में कोशिका विभाजन को प्रोत्साहित करते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि और विकास में सुधार होता है।

***शूट* विकास का संवर्धनः** सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित *साइटोकाइनिन* तने की वृद्धि और शाखाओं की वृद्धि को उत्तेजित करते हैं, जिससे पौधों की संरचना में सुधार होता है।

वृद्धावस्था में विलंबः *माइक्रोबियल साइटोकाइनिन* पत्तियों की वृद्धावस्था को विलंबित करते हैं, जिससे पौधों का स्वास्थ्य बेहतर होता है और उनकी उत्पादक अवधि बढ़ती है।

तनाव सहन शीलताः *माइक्रोबियल साइटोकाइनिन* पौधों को सूखा, लवणता और तापमान में अत्यधिक उतार–चढ़ाव जैसे पर्यावरणीय तनावों के प्रति सहनशीलता को बढ़ाते हैं।

कृषि में अनुप्रयोग

जैवउर्वरक: *साइटोकाइनिन* उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों का उपयोग जैवउर्वरक के रूप में किया जाता है ताकि पौधों की वृद्धि को बढ़ावा दिया जा सके, पोषक तत्वों के अधिग्रहण में सुधार हो सके और पैदावार को बढ़ाया जा सके।

जैवनियंत्रण कारक: *साइटोकाइनिन* उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव जैवनियंत्रण कारक के रूप में भी कार्य करते हैं, जो पौधों के स्वास्थ्य को बढ़ावा देकर और रोगजनकों को दबाकर उनकी रक्षा करते हैं।

जिबरेलिन

माइक्रोबियल जिबरेलिन पौधों के एक समूह के हॉर्मोन हैं जो कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न होते हैं, और इनका पौधों की वृद्धि और विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जिबरेलिन एक डाइटरपेनोइड एसिड है जो पौधों में विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं को नियंत्रित करता है।

माइक्रोबियल जिबरेलिन का उत्पादन

जीवाणु: कुछ मिट्टी के बैक्टीरिया, जैसे कि *बेसिलस* और *स्यूडोमोनास* जीनस के जीवाणु, जिबरेलिन का उत्पादन करने के लिए जाने जाते हैं। ये जीवाणु जिबरेलिन का संश्लेषण करके पौधों की वृद्धि को बढ़ाते हैं, और पौधों की *हॉर्मोनल* प्रणाली के साथ *इंटरैक्ट* करते हैं।

कवक: *जिबरेलिक एसिड* के उत्पादन के लिए सबसे सामान्य सूक्ष्मजीव कवक होते हैं, विशेष रूप से जिबरेला और *एस्परजिलस* जीनस की प्रजातियाँ।

माइक्रोबियल जिबरेलिन की भूमिकाएं

पौधों की वृद्धि को प्रोत्साहित करना: जिबरेलिन तने की लंबाई बढ़ाने में अपनी भूमिका के लिए जाने जाते हैं। सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न जिबरेलिन इस प्रक्रिया को बढ़ा सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप लंबी अंतरगाठों के साथ ऊँचे पौधे होते हैं।

बीज अंकुरण: *माइक्रोबियल* जिबरेलिन बीज के अवरोध को तोड़कर बीज अंकुरण को प्रोत्साहित करते हैं, जो फसल की स्थापना में सुधार के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।

फूल और फल विकास को बढ़ावा देना: सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न जिबरेलिन फूलों के खिलने के समय और प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, जिससे जल्दी एवं प्रचुर मात्रा में फूलों के खिलने की संभावना होती है। वे फल की सेट और विकास को भी प्रभावित करते हैं, जिससे फल की पैदावार और गुणवत्ता में सुधार होता है।

तनाव सहनशीलता में सुधार: *माइक्रोबियल* जिबरेलिन पौधों को सूखा और उच्च लवणता जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में वृद्धि और विकास को नियंत्रित करके तनावपूर्ण परिस्थितियों से निपटने में मदद करते हैं।

विकास का माडुलन: *माइक्रोबियल* जिबरेलिन जड़ और तने की वृद्धि के बीच संतुलन को प्रभावित करते हैं, जिससे पौधे की संपूर्ण मजबूती और स्वास्थ्य में सुधार होता है।

कृषि में अनुप्रयोग

जैवउर्वरक: कुछ जिबरेलिन–उत्पादक सूक्ष्मजीवों का उपयोग जैवउर्वरक के रूप में किया जा सकता है। जब इनसे मिट्टी या बीज को उपचारित किया जाता है, तो ये सूक्ष्मजीव प्राकृतिक रूप से जिबरेलिन का उत्पादन कर के पौधों की वृद्धि को बढ़ाते हैं, जिससे संश्लेषित पौध विकास नियामकों की आवश्यकता कम हो जाती है।

ऊतक संवर्धन: जिबरेलिन का उपयोग अक्सर पौधों के ऊतक संवर्धन में *कैलस, शूट* और जड़ों की वृद्धि को उत्तेजित करने के लिए किया जाता है, जिससे विस्थापनों से पौधों की सफल पुनः उत्पत्ति में मदद मिलती है। केले और आलू जैसी फसलों के *माइक्रो प्रोपेगेशन* में, जिबरेलिन तेजी से शूट प्रसार और लंबाई को बढ़ावा देता है, जिससे बड़ी संख्या में पौधों का उत्पादन आसान हो जाता है।

एब्सिसिक एसिड

माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड पौधों की वृद्धि और विकास को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* और पौधों की शारीरिक प्रक्रियाओं के बीच की अंतःक्रिया से विभिन्न परिणाम हो सकते हैं, जिसमें तनाव की स्थितियाँ (जैसे सूखा), बीज की निष्क्रियता, और रंध्र बंद होना शामिल है।

माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड का उत्पादन

जीवाणु: कुछ *राइजोबैक्टीरिया* की प्रजातियाँ, जैसे कि *एज़ोस्पिरिलम* और बेसिलस प्रजातियाँ, एब्सिसिक एसिड का उत्पादन करने के लिए जानी जाती हैं। ये जीवाणु अक्सर पौधों की जड़ों के साथ संपर्क में रहते हैं, जिससे पौधों की वृद्धि और तनाव प्रतिक्रियाओं को प्रभावित करते हैं।

कवक: कुछ कवक प्रजातियाँ, जिनमें *बोट्रीटिस सिनेरिया* और

ट्राइकोडर्मा प्रजातियाँ शामिल हैं, *एब्सिसिक एसिड* का संश्लेषण करने में सक्षम हैं। ये कवक या तो पौधों के रोगजनक हो सकते हैं या सहजीवी, और उनके द्वारा उत्पन्न *एब्सिसिक एसिड* पौधों के तनाव सहनशीलता तंत्र को प्रभावित कर सकता है।

माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड की भूमिकाएं

पर्यावरणीय तनावों के प्रति फसल की सहनशीलता को बढ़ाना

सूखा सहनशीलता: *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* पौधों को सूखा तनाव का प्रबंधन करने में मदद करता है। यह रंध्र बंद कर देता है, जिससे वाष्पोत्सर्जन कम होता है और जल उपयोग दक्षता में सुधार होता है। यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों में मूल्यवान है जहां जल की कमी फसल उत्पादन के लिए एक प्रमुख सीमित कारक है।

लवणता सहनशीलता: *एब्सिसिक एसिड* उत्पन्न करने वाले या पौधों में इसके संश्लेषण को प्रभावित करने वाले सूक्ष्मजीव फसलों को खारे मिट्टी में जीवित रहने में मदद करते हैं। यह आयन परिवहन और ऑसमॉटिक संतुलन को नियंत्रित करके अत्यधिक नमक ग्रहण के विषाक्त प्रभावों को रोकता है।

अधिक तापमान तनाव: *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* कोशिका कार्यों को स्थिर करके और ऑक्सीडेटिव तनाव को कम करके पौधों को अत्यधिक तापमान सहन करने में भी भूमिका निभाता है।

***रूट आर्किटेक्चर* का विनियमन:** *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* जड़ की लंबाई, शाखाओं और कुल जैवभार को प्रभावित करके *रूट आर्किटेक्चर* को प्रभावित कर सकता है। यह विशेष रूप से तनाव की स्थितियों में महत्वपूर्ण है जहां जल और पोषक तत्वों को कुशलता पूर्वक ग्रहण करने के लिए इष्टतम जड़ संरचना की आवश्यकता होती है।

पौधों–सूक्ष्मजीवों के सहजीवन में सुधार: *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड मायकोरिज़ल* कवक जैसे सहजीवी जीवों और पौधों के बीच अंतःक्रिया को नियंत्रित कर सकता है। इससे पोषक तत्वों, विशेष रूप से फास्फोरस के अधिग्रहण में सुधार हो सकता है, जिससे पौधों की समग्र वृद्धि बेहतर होती है।

पौधों के *हार्मोनल* संकेतों का माडुलन: *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* अन्य पौधों के हार्मोन, जैसे *ऑक्सिन* और *साइटोकाइनिन,* के साथ अंतःक्रिया कर सकता है, जिससे समग्र पौधों की वृद्धि और विकास प्रभावित होता है। यह क्रॉस टॉक विकास और तनाव प्रतिक्रियाओं के संतुलन के लिए महत्वपूर्ण है, जिससे पौधों को विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के तहत अपनी वृद्धि को अनुकूलित करने में मदद मिलती है।

बीज अंकुरण और प्रारंभिक वृद्धि चरणों पर प्रभाव: एब्सिसिक एसिड बीज निष्क्रियता और अंकुरण में भूमिका निभाने के लिए जाना जाता है। *माइक्रोबियल एब्सिसिक एसिड* इन प्रक्रियाओं को प्रभावित कर सकता है, जिससे बीज अंकुरण को प्रोत्साहित या बाधित किया जा सकता है, यह इस पर निर्भर करता है कि पर्यावरणीय परिस्थितियाँ अनुकूल हैं या नहीं।

कृषि में अनुप्रयोग

जैवउर्वरक और जैवउत्तेजक

माइक्रोबियल इनोकुलेंट्स: एब्सिसिक एसिड का उत्पादन करने वाले सूक्ष्मजीवों को जैवउर्वरक या जैवउत्तेजक के रूप में तैयार किया जा सकता है। जब इन उत्पादों को फसलों पर प्रयोग करते हैं, तो वे जड़ वृद्धि को बढ़ावा दे सकते हैं, पोषक तत्वों के अधिग्रहण में सुधार कर सकते हैं, और सूखा और लवणता जैसी पर्यावरणीय तनावों के प्रति पौधों की सहनशीलता बढ़ा सकते हैं।

मृदा और बीज उपचार: इन *माइक्रोबियल इनोकुलेंट्स* को सीधे मृदा पर या बीज उपचार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि पौधों को विकास के प्रारंभिक चरणों से ही लाभकारी एब्सिसिक एसिड–उत्पादक सूक्ष्मजीवों की पहुँच प्राप्त हो।

एथिलीन

कुछ सूक्ष्मजीवों द्वारा माइक्रोबियल एथिलीन का उत्पादन, एक सरल गैसीय पौध हार्मोन के जैव संश्लेषण को संदर्भित करता है। एथिलीन का पौधों में विभिन्न प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जिसमें फल का पकना, बीज का अंकुरण, फूलों का उम्र बढ़ना *(सेनेसेंस),* और तनाव के प्रति प्रतिक्रिया शामिल हैं। कृषि में, एथिलीन के *माइक्रोबियल* उत्पादन का संभावित उपयोग फलों के पकने और अन्य पौध विकास प्रक्रियाओं को बढ़ावा देने में किया जाता है।

माइक्रोबियल एथिलीन उत्पादन

बैक्टीरिया: कुछ *बैक्टीरियल* प्रजातियां एथिलीन का उत्पादन करती हैं। *स्यूडोमोनास सिरिंज* सबसे अधिक अध्ययन किए गए एथिलीन–उत्पादक बैक्टीरिया में से एक है।

कवक: कुछ फफूंद, जैसे *पेनिसिलियम* प्रजातियां, भी एथिलीन

का उत्पादन करने की क्षमता रखती हैं।

यीस्ट: कुछ *यीस्ट* प्रजातियां विशेष परिस्थितियों में एथिलीन का उत्पादन कर सकती हैं, हालांकि इन्हें इस उद्देश्य के लिए कम उपयोग किया जाता है।

माइक्रोबियल एथिलीन की भूमिकाएं

फलो का पकना: एथिलीन को 'पकाने वाला हार्मोन' कहा जाता है क्योंकि यह *क्लाइमैक्टेरिक* फलों के पकने की प्रक्रिया को *ट्रिगर* करता है, जो वे फल होते हैं जो कटाई के बाद भी पकते रहते हैं।

फूलों का खिलना और *सेनेसेंस:* एथिलीन फूलों के खिलने के समय का विनियमन करता है और फूलों के *सेनेसेंस* (बुढ़ापा) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पौध प्रजाति के आधार पर फूल खिलने को बढ़ावा दे सकता है या उसे रोक सकता है।

बीज निष्क्रियता को तोड़ना: एथिलीन बीज निष्क्रियता को तोड़ने और अंकुरण को बढ़ावा देने में मदद करता है, विशेष रूप से उन बीजों में जिन्हें अंकुरण के लिए विशिष्ट पर्यावरणीय संकेतों की आवश्यकता होती है।

पत्तियों और फलों का अपघटन *(एबसिशन):* एथिलीन *एबसिशन* प्रक्रिया में शामिल होता है, जहां पत्ते, फल, या फूल पौधे से अलग हो जाते हैं। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जो पकने या तनाव के दौरान होती है।

तनाव प्रतिक्रियाएं: एथिलीन जैविक (जैसे रोग जनक हमला) और अजैविक (जैसे सूखा, बाढ़) तनावों के प्रति पौधों की प्रतिक्रियाओं में एक प्रमुख हार्मोन है। यह पौधों को प्रतिकूल परिस्थितियों के अनुकूल बनाने में मदद करता है।

विकास का विनियमन: एथिलीन पौधों की वृद्धि को कोशिका वृद्धि और विभाजन, साथ ही ऊतकों के विभेदन को प्रभावित करके नियंत्रित करता है।

जड़ निर्माण की प्रेरणा: एथिलीन जड़ों के निर्माण को उत्तेजित करता है, विशेष रूप से अपस्थानिक जड़ों को, जो गैर–जड़ ऊतकों से बनती हैं।

अन्य हार्मोनों के साथ अंतःक्रिया: एथिलीन अन्य पौध हार्मोनों जैसे ऑक्सिन्स, जिबरेलिन, *साइटोकाइनिन्स,* और एब्सिसिक एसिड के साथ अंतःक्रिया करता है, जिससे पौधों की वृद्धि और विकास का नियमन होता है।

कटाई–उपरान्त तकनीक: एथिलीन का उपयोग

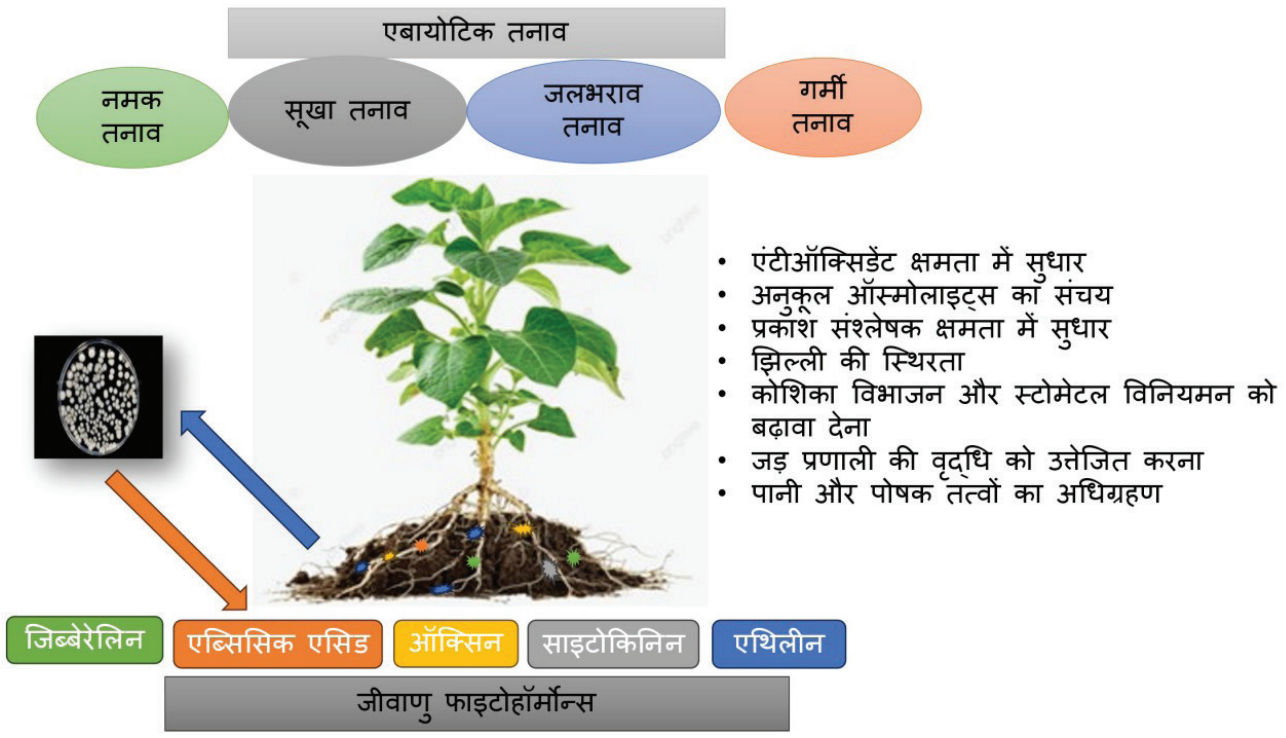

चित्र: सूक्ष्मजीवजनित *फाइटोहॉर्मोन मेडिएटेड* पौधों की तनाव सहनशीलता में तंत्रों का अवलोकन

तालिका 1. फाइटोहार्मोन उत्सर्जक सूक्ष्मजीव और उनकी अजैविक पर्यावरणीय तनाव सहनशीलता में भूमिका

सूक्ष्मजीवों	फाइटोहार्मोन	तनाव
बेसिलस लाइकेनिफॉर्मिस, बैसिलस सबटिलिस, आर्थ्रोबैक्टर प्रजातियां, *मैरिनो बैक्टीरियम* प्रजातियां, *सिनोरिज़ोबियम* प्रजातियां, *सेराटिया प्लायमुथिका, स्टेनोट्रोफोमोनास राइजोफिला, एसिनेटोबैक्टर फेसेलिस, बैसिलस सेरेस, एंटरोबैक्टर हॉर्मेची, पैंटोआ एग्लोमेरान, स्ट्रेप्टोमाइसेस कोएलिकलर, स्ट्रेप्टोमाइसेस ग्रीसिरिएन्सिस, कर्टोबैक्टीरियम फ्लैक्कमफेशियन्स, एन्सिफर गैरेंटिकस, स्यूडोमोनास पुटिडा, ट्राइकोडर्मा एस्परलम*	ऑक्सिन	लवण तनाव
आर्थ्रोबैक्टर प्रजातियां, बैसिलस सबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, राइजोबियम प्रजातियां, पेनिबैसिलस पॉलीमेक्सा	साइटोकिनिन	
एस्परगिलस फ्यूमिगेटस, ट्राइकोडर्मा एस्परलम, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, बैसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास पुटिडा, राइजोबियम प्रजातियां, एसिनेटोबैक्टर प्रजातियां	जिबरेलिन	
बैसिलस एमिलोलिक्विफेशियन्स, ट्राइकोडर्मा एस्परलम, एज़ोस्पिरिलम प्रजातियां, ट्राइकोडर्मा प्रजातियां	एब्सिसिक एसिड	
स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस	एथिलीन	सूखा तनाव
स्यूडोमोनास पुटिडा, बैसिलस मेगाटेरियम, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, बैसिलस सबटिलिस, राइजोबियम प्रजातियां	ऑक्सिन	
माइक्रोकॉक सल्यूटियस, बैसिलससबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, राइजोबियम प्रजातियां, पैनिबैसिलस पॉलीमेक्सा	साइटोकिनिन	
एज़ोस्पिरिलम लिपोफेरम, फोमा ग्लोमेराटा, पेनिसिलियम प्रजातियां,एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, बैसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास पुटिडा, राइजोबियम प्रजातियां, एसिनेटोबैक्टर प्रजातियां	जिबरेलिन	
बेसिलस लाइकेनिफॉर्मिस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, ट्राइकोडर्मा प्रजातियां	एब्सिसिक एसिड	
स्यूडोमोनास पुटिडा, बैसिलस सबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, राइजोबियम प्रजातियां, एंटरोबैक्ट रक्लोएक	एथिलीन	
स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस आर्यभट्टई, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, एंटरोबैक्टर क्लोएक	ऑक्सिन	गर्मी तनाव
बेसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, बैसिलस एमिलोलिक्विफेशियन्स, एंटरोबैक्टर क्लोएक	साइटोकिनिन	
बेसिलस आर्यभट्टी, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, बैसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस एमाइलोलिक्विफेशियन्स, राइजोबियम प्रजातियां	जिबरेलिन	
बेसिलस आर्यभट्टी, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस, ट्राइकोडर्मा प्रजातियां, राइजोबियम प्रजातियां	एब्सिसिक एसिड	
स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, राइजोबियम प्रजातियां, एंटरोबैक्टर क्लोएक	एथिलीन	
एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस सबटिलिस, एंटरोबैक्टर क्लोएक	ऑक्सिन	जलभराव तनाव
एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, ट्राइकोडर्मा हर्ज़ियानम, राइजोबियम लेगुमिनोसारम, बैसिलस एमाइलोलिक्विफेशियन्स, ब्रैडिरिज़ोबियम जपोनिकम, माइकोरिज़ल कवक (ग्लोमस प्रजातियां)	साइटोकिनिन	
बेसिलस मेगाटेरियम, एंटरोबैक्टर क्लोएक, एज़ोस्पिरिलम ब्रासीलेंस, ट्राइकोडर्मा हर्ज़ियानम, राइजोबियम लेगुमिनोसारम, बैसिलस एमाइलोलिक्विफेशियन्स, ब्रैडिरिज़ोबियम जपोनिकम, माइकोरिज़ल कवक (ग्लोमस प्रजातियां)	जिबरेलिन, एब्सिसिक एसिड, एथिलीन	

कटाई–उपरान्त तकनीक में फलों और सब्जियों के पकने और गुणवत्ता को भंडारण और परिवहन के दौरान नियंत्रित करने के लिए किया जाता है।

कृषि में उपयोग

जैव उर्वरकः *माइक्रोबियल एथिलीन* को जैव उर्वरकों के साथ एकीकृत किया जा सकता है, जिससे कई लाभ प्राप्त होते हैं, जैसे पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देना और तनाव प्रबंधन को बेहतर बनाना।

जैविक खेतीः *माइक्रोबियल* एथिलीन उत्पादन, टिकाऊ और जैविक खेती प्रथाओं का समर्थन करता है, यह एथिलीन का एक प्राकृतिक स्रोत है, जो संश्लेषित रसायनों की आवश्यकता को कम करता है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भूमि की बिगड़ती हुई दशा और जैविक खेती की तरफ किसानों के बढ़ते हुए कदम

प्रियान्शी पाठक[1] एवं अनुभव सिंह[2]
[1]कृषि विज्ञान संस्थान, बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी
[2]लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

देश की आजादी के बाद भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए सरकार द्वारा हरित क्रान्ति शुरू हुई जो एम. एस. स्वामीनाथन ने 1965–1968 में शुरू की। इससे उत्पादन बढ़ा लेकिन फसलों में बहुत ज्यादा रसायनिक उर्वरकों का उपयोग किया गया। जिससे भूमि की उत्पादन क्षमता प्रतिदिन कम होती गई और ज्यादा रसायनों के उपयोग से मनुष्य के स्वास्थ पर बुरा प्रभाव पड़ा। इससे पर्यावरण भी बहुत प्रदूषित हुआ जिससे भूमि में पाये जाने वाले सूक्ष्म जीव मर जाते है और पौधों की वृद्धि में कमी आती है। भूमि को अधिक समय तक बचाने के लिए सभी किसानों को जैविक खेती की तरफ कदम बढ़ाने पड़ेंगे।

किसानों का बढ़ता लालच

देश के किसान ज्यादा उत्पादन प्राप्त करनें के लिए रसायनों का बहुत अधिक उपयोग करते हैं जिससे फसलों की अच्छी कीमत मिलती है और जैविक खेती में ऐसा नहीं होता है। उत्पादन धीरे–धीरे बढ़ता है, उसमें समय अधिक लगता है। इसलिए किसान जैविक कृषि की तरफ नहीं बढ़ रहे हैं।

नवयुवक क्यों नहीं करना चाहते कृषि

- कृषि कार्यों में कठिन परिश्रम
- जनसंख्या में वृद्धि के कारण
- कृषि कार्यों में अधिक लागत के कारण
- कृषि में कम उत्पादन के कारण

कृषि कार्यों में कठिन परिश्रम

कृषि कार्यों को करने के लिए कठिन परिश्रम की आवश्यकता होती है जो कि खुले आसमान के नीचे कड़ी धूप में बारिश व कड़ाके की ठड में भी करना पड़ सकता है। इस कारण आज के नवयुवक कृषि कार्यों में रूचि नहीं रखते और वह परिश्रम से बचना चाहते है।

जनसंख्या में वृद्धि के कारण

देश में बढ़ती जनसंख्या के कारण कृषि भूमि में बँटवारा होता जा रहा है। इस कारण प्रति व्यक्ति जमीन का स्वामित्व कम होता जा रहा है। ज्यादातर किसानों के पास इतनी कम जमीन है कि कड़ी मेहनत करने के बाद भी उन्हें इतनी आय नहीं होती कि वे अपने परिवार का अच्छी तरह से पालन–पोषण कर पायें। इसलिए किसान धन कमाने के लिए शहरों में जाते हैं। यही कारण है कि किसान कृषि नहीं कर रहे हैं।

बदलते मौसम के कारण

बदलते मौसम के कारण बाढ़ एवं सूखा जैसी समस्याएँ प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं जिससे खेती करना मुश्किल होता जा रहा है जिससे फसलोत्पादन पर काफी बुरा प्रभाव पड़ता है। जिससे लोग खेती करना छोड़ रहे हैं।

कृषि कार्यों में अधिक लागत के कारण

देश में बढ़ती महँगाई के कारण कृषि कार्यो को करने के लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है, जिसकी वजह से किसान ग्रमीण बैंक से ज्यादा ब्याज पर ऋण लेता है और उपकरणों के अभाव में उत्पादन में कमी आ जाती हैं। जिसकी वजह से वह कर्ज में डूब जाता है और खेती करना छोड़ देता है।

कृषि में कम उत्पादन के कारण

किसान अभी भी पुराने तरीके से खेती करते हैं जिससे बीज और उर्वरकों की अधिक मात्रा उपयोग होती है। जिससे उनकी लागत में वृद्धि होती है और पुराने तरीके उपयोग करने से उत्पादन में कमी आ जाती है जिससे किसानों को हानि होती है। इसलिए लोग धीरे–धीरे खेती करना छोड़ रहे हैं।

सरकार द्वारा जैविक खेती के लिए उठाए गये कदम

देश में भूमि की बिगड़ती दुर्दशा को देखते हुए सरकार ने बहुत सारे कदम उठाये है जो इस प्रकार हैं :

- सरकार की ओर से संबंधित किसान को प्रति एकड़ सालाना ₹ 1800, 3000 और 2000 का अनुदान दिया जा रहा है।
- जैविक बीज किश्तों में ₹ 1,500 में दिये जाऐंगे।
- प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना
- *पी.एम. किसान* के माध्यम से किसानों की आय सहायता
- कृषि के लिए कम ब्याज पर देने के लिए संस्थागत ऋण
- उत्पादन लागत का डेढ़ गुना न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) तय करना।

जैविक खेती

जैविक कृषि एक ऐसी कृषि प्रक्रिया है जिसमें हम पौधों एंव जीव–जन्तुओं के बचे हुए अवशेषों का उपयोग भूमि की उर्वरक क्षमता और फसलोत्पादन बढ़ाने के लिए प्राकृतिक तरीकों से कार्य करते हैं इसमें उर्वरकों का उपयोग नहीं करते हैं जिससे भूमि और मनुष्य का स्वास्थ्य अच्छा रहता है

आज भूमि की बिगड़ती हुई दशा को देखते हुए बहुत से देशों ने अपने किसानों को जैविक खेती की तरफ प्रोत्साहित किया है। जैविक खेती में आस्ट्रेलिया दुनिया में नम्बर – एक है और 35 मिलियान हेक्टेयर क्षेत्र पर जैविक खेती करता है, जो आस्ट्रेलिया की कृषि भूमि का 8.8 प्रतिशत हैं।

भारत जैविक खेती में दुनिया में नौ नम्बर पर है। वर्ष 2021 के सर्वक्षण के अनुसार भारत 23 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर जैविक खेती की जाती है।

जैविक कृषि क्या है?

जैविक कृषि खेती की वह शाखा हैं। जिसमें हम केवल खादों का उपयोग करते हैं और बिना रसायन के खेती करते हैं उसे ही जैविक कृषि कहते हैं।

जैविक कृषि के प्रकार

ये दो प्रकार की होती है।

- शुद्ध जैविक कृषि
- एकीकृत जैविक कृषि

शुद्ध जैविक कृषि

यह एक ऐसी कृषि विधि है जिसमें उर्वरकों और कीट नियंत्रण साधनों का उपयोग जैविक पदार्थों के रूप में उपयोग करते है।

एकीकृत जैविक कृषि

इसमें फसलों में खाद के रूप में पशुओं के अपशिष्ट पदार्थों एवं उनके मृत अवशेषों का उपयोग करते है। जैसे – गोबर की सड़ी खाद, पोल्ट्री खाद, वर्मीकम्पोस्ट व कम्पोस्ट आदि।

मैं सोचता हूं कि अगर मुझे हिंदी भाषा बोलना और समझना न आता तो मैं लोगों तक कैसे पहुंचता ? लोगों की बात कैसे समझता ? इस भाषा की ताक़त का मुझे भली–भांति अंदाज़ है।

– नरेन्द्र मोदी

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

हाइड्रोपोनिक खेती

मोनिका उपाध्याय
महाराजा अग्रसेन यूनिवर्सिटी, सोलन, हिमाचल प्रदेश

विश्व की बढ़ती हुई आबादी के कारण न केवल फसलों में कीटनाशक का प्रयोग बढ़ा है बल्कि उपजाऊ ज़मीन की मात्रा में भी कमी आई है। इसी प्रकार की समस्या को ध्यान में रखते हुए आज हम बात कर रहे हैं एक ऐसी प्रणाली की जहां पौधों अथवा फसलों को मिट्टी से अलग उगाया जाता है। इस प्रणाली का नाम हाइड्रोपोनिक खेती है। ये एक ऐसी प्रणाली है जहां फसलों को पानी मे उगाया जाता है। सभी पोषक तत्व इस पानी मे मिलाकर नियमित रूप से फसल को दिये जाते हैं।

सामान्य तौर पर पौधे व फसल ज़मीन पर ही उगाये जाते हैं। इनके बड़े होने के लिए खाद, मिट्टी अथवा पानी की आवश्यकता होती है। लेकिन सच ये है कि पौधे या फसल के लिए सिर्फ तीन चीजों की आवश्यकता होती है–पानी, पोषक तत्व एवं सूर्य का प्रकाश।

केवल पानी में या बालू अथवा कंकड़ों के बीच नियंत्रित जलवायु की मदद से बिना मिट्टी के ही पौधे उगाने की प्रणाली को हाइड्रोपोनिक खेती कहते हैं। इस प्रणाली की खास बात यह भी है कि पारंपरिक खेती के मुक़ाबले इस खेती में पानी की मात्रा का प्रयोग कम होता है। कभी कभी तो यह देखा गया है कि इस खेती से 90 प्रतिशत तक के पानी की बचत होती है। जिन क्षेत्रों में पानी की कमी होती है, उन क्षेत्रों में यह खेती लाभदायक साबित होती है। इस खेती में जल का कोई तनाव नहीं होता तथा पोषक तत्व हर समय उपलब्ध होते हैं। इस खेती में केवल घुलनशील उर्वरकों का ही प्रयोग किया जाता है। इस खेती की मदद से उन क्षेत्रों में भी फसल उगाई जा सकती हैं जहां ज़मीन की कमी अथवा जहां की मिट्टी उपजाऊ नहीं होती।

सामान्य तौर पर फसलों को आवश्यक पोषक तत्व ज़मीन से प्राप्त होते हैं। लेकिन हाइड्रोपोनिक खेती में आवश्यक पोषक तत्व के लिए पौधों में एक विशेष प्रकार का घोल पानी में डाला जाता है। इसके लिए फास्फोरस, नाइट्रोजन, मैग्निशियम, कैलशियम, पोटाश, जिंक, सल्फर, आयरन जैसे पोषक तत्वों तथा खनिज प्रदार्थों को एक उचित मात्रा में मिलाकर मिश्रित कर लिया जाता है। मिश्रित किये गए इस घोल को निर्धारित समय पर पौधों को दिया जाता है, जिससे पौधों को सभी पोषक तत्व प्राप्त होते रहते है और पौधे आसानी से वृद्धि करते है।

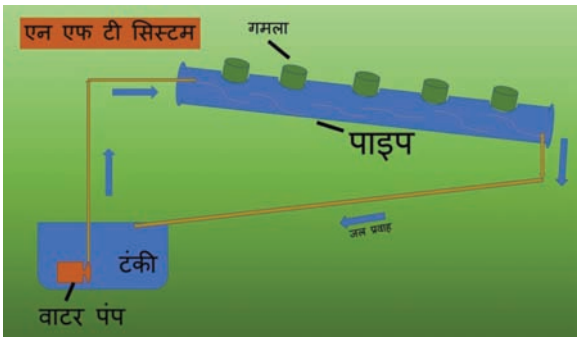

हाइड्रोपोनिक खेती के लाभ

- इस खेती से बेहद कम खर्च में पौधे और फसलें लगाई जा सकती हैं। एक अनुमान के मुताबिक 5 से 8 इंच ऊँचाई वाले पौधें में प्रति वर्ष 1 ₹ से भी कम खर्च आता है।
- इस खेती का मिट्टी व ज़मीन से कोई संबंध नहीं होता। अतः इस प्रणाली से उगने वाली फसलों मे बीमारी की संभावना कम होती है।
- हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली में पौधों में पोषक तत्वों का विशेष घोल डाला जाता है, इसलिए इसमें उर्वरकों एवं अन्य रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता नहीं होती है। जिसका फायदा न केवल हमारे पर्यावरण को होता है बल्कि यह हमारे स्वास्थ्य के लिये भी अच्छा होता है।
- पारंपरिक खेती की तुलना में इस हाइड्रोपोनिक प्रणाली मे पौधों की संख्या प्रति इकाई अधिक होती है जिसके फल स्वरूप उच्च स्तर की पैदावार प्राप्त की जा सकती है।
- हाइड्रोपोनिक्स खेती से उगाई गइ सब्ज़ियाँ और पौधे अधिक पौष्टिक होते हैं। इसमें कीटनाशक का प्रयोग नहीं होता।
- हाइड्रोपोनिक्स विधि से उगाई गई फसलें और पौधे आधे समय में ही तैयार हो जाते हैं। जैसे गेहूं के पौधे 7 से 8 दिन में तैयार हो जाते हैं जो सामान्य विधि से 28 से 30 दिन लेते हैं।

हाइड्रोपोनिक तकनीक से उगाई गई गोभी

हाइड्रोपोनिक प्रणाली की चुनौतियां

- परंपरागत विधि की अपेक्षा हाइड्रोपोनिक खेती करने में अधिक खर्चा आता है। यहाँ यह बात स्पष्ट करने की जरूरत है कि बाद में यह काफी सस्ती पड़ती है।
- इस प्रणाली में लगातार निगरानी की आवश्यकता होती है। चूँकि इस विधि में पानी को पंपों की सहायता से पुनः इस्तेमाल किया जाता है उसके लिये लगातार विद्युत आपूर्ति की आवश्यकता होती है। इसलिए दूसरी बड़ी चुनौती है हर वक्त विद्युत आपूर्ति बनाए रखना।
- यदि फसल में कोई बीमारी दिखाई देती है तो प्रणाली के सभी पौधे प्रभावित होंगे।
- मिट्टी के बिना एक बफर के रूप में सेवा करने के लिए अगर *सिस्टम* विफल रहता है तो पौधे की मृत्यु तेजी से होगी।
- मिट्टी रहित हाइड्रोपोनिक प्रणाली के तहत उगाए जाने वाले पौधों की विभिन्न प्रजातियाँ

फसलों के प्रकार	फसलों के नाम
अनाज	चावल, मक्का
सब्जियां	टमाटर, मिर्च, बैंगन, हरी बीन, चुकंदर, *विंग्ड बीन*, शिमला मिर्च, खीरा, खरबूजा, हरी प्याज
फल	स्ट्रॉबेरी
पत्तेदार सब्जियां	लेट्यूस, पालक

हाइड्रोपोनिक्स प्रणाली का उपयोग

इस प्रणाली का प्रयोग पश्चिमी देशों में सफलतापूर्वक किया जा रहा है। हमारे देश के कई हिस्सों में भी इस तकनीक की सहायता से बिना ज़मीन के फसल पैदा जी जा रही है। राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर में मक्का, जौ और उच्च गुणवत्ता वाले हरे चारे वाली फसलें उगाने के लिये इस तकनीक का इस्तेमाल किया जा रहा है।

वहाँ के वैज्ञानिकों ने बिना मिट्टी के, नियंत्रित वातावरण में इस तकनीक से सेवण घास की पौध तैयार करने में सफलता प्राप्त की है। इस तकनीक से खुले खेतों में सेवण घास को उगाने और हल्के–फुल्के बीजों की बुआई में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने में सहायता मिलती है और इस तरह सेवण घास चारागाहों का तेजी से विकास किया जा सकता है।

गोवा में चारागाह के लिये भूमि की कमी है इसलिए वहाँ के पशुओं के लिये चारे की बड़ी समस्या होती है। किसानों की इस समस्या को देखते हुए भारत सरकार की राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत गोवा डेयरी की ओर से भाकृअनुप–केन्द्रीय तटीय कृषि अनुसंधान संस्थान, गोवा में हाइड्रोपोनिक्स तकनीक से हरा चारा उत्पादन की इकाई की स्थापना की गई है। ऐसी ही दस और इकाइयाँ गोवा की विभिन्न डेरी–कोऑपरेटिव सोसाइटियों में लगाई गई हैं। प्रत्येक इकाई की प्रतिदिन 600 किलोग्राम हरा चारा उत्पादन की क्षमता है।

राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों में जहाँ चरागाहों के लगातार घटने तथा संतुलित पोषक आहार न मिलने के कारण अच्छे दुधारू नस्ल के पशुओं की हालत चिंताजनक हो रही है, यह प्रणाली वरदान सिद्ध हो सकती है। हाइड्रोपोनिक्स तकनीक से यहाँ हरे चारे का उत्पादन करने का प्रयास किया जा रहा है। इससे बारहों महीने पशुओं के लिये पौष्टिक हरा चारा मिल सकेगा।

मक्के से तैयार किए गए हाइड्रोपोनिक्स चारे से संबंधित प्रयोगों में पाया गया है कि परंपरागत हरे चारे में क्रूड प्रोटीन 10.70 प्रतिशत होती है, जबकि हाइड्रोपोनिक्स हरे चारे में क्रूड प्रोटीन 13.6 प्रतिशत होती है। लेकिन परंपरागत हरे चारे की अपेक्षा हाइड्रपोनिक्स हरे चारे में क्रूड फाइबर कम होता है। हाइड्रोपोनिक्स हरे चारे में अधिक ऊर्जा, विटामिन और अधिक दूध का उत्पादन होता है और उनकी प्रजनन क्षमता में भी सुधार होता है। अंत में इस बात को भी नकारा नहीं जा सकता कि पौधों की उचित बढ़वार के लिये आवश्यक खनिज और पोषक तत्व सही समय पर सही मात्रा में मिलते रहने चाहिए। हाइड्रोपोनिक्स तकनीक में इन तत्वों की आपूर्ति हम करते हैं, जबकि जमीन से पौधे अपने आप लेते रहते हैं। एक तरफ जहां इस तकनीक का प्रयोग चारे के लिए हो रहा है वहीं दूसरी ओर पंजाब जैसे प्रदेश में इसका प्रयोग आलू उगाने के लिए किया जा रहा है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

नीम खलीः आवश्यक एवं उपयोगी खाद

आलोक कुमार सिंह[1], प्रीती सिंह[1] एवं मुकुन्द कुमार[2]
[1]आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या
[2]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पौधों के लिए नीम की खली एक उपयुक्त और लाभदायक जैविक खाद और कीटनाशक है, जिसे डालने से पौधों में अच्छा विकास एवं रोगों से सुरक्षा मिलती है। यह प्राकृतिक खाद हमारे पर्यावरण पर बिना किसी प्रकार का नुकसानदायक प्रभाव डाले हुए, लाभकारी होता है। भारत सरकार भी नीम खली युक्त खाद को बढ़ावा दे रही है।

नीम के पेड़ पर वर्ष में एक बार फल आते हैं, और इनका आकार छोटे–छोटे अंगूर की तरह होता है। इन फलों के अन्दर बीज होता है जो कि कड़ा एवं दलहनी प्रकार का होता है। नीम के बीज को सुखाकर मशीन द्वारा तेल निकाल लिया जाता है और बचे हुए अंश (खली) को नीम की खली के रूप में जाना जाता है।

यह एक प्रकार की जैविक खाद है जिसका प्रयोग हर प्रकार की फसलों पर किया जा सकता है। इसमें पौधों के लिए आवश्यक तत्व नाइट्रोजन, फास्फोरस, तथा पोटैशियम जैविक कार्बन आदि तत्व प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। भारत सरकार की मानकीकरण की संस्था *ब्यूरो आफ इंडियन स्टैंड्र्डस* से नीम की खली को पौधों के लिए एक असरदार खाद के रूप में मान्यता मिली है।

1. नीम खली के प्रमुख फायदे

नीम खली में पौधों की बढ़वार के लिए जरूरी पोषक तत्व पाये जाते हैं, जो कि निम्न प्रकार हैं :

नाइट्रोजन	:	2.0% से 5.0%
फास्फोरस	:	0.5% से 1.0%
पोटैशियम	:	1.0% से 2.0%
कैल्शियम	:	0.5% से 5.0%
मैग्नीशियम	:	0.3% से 1.0%
गंधक	:	0.2% से 3.0%
जस्ता	:	15 पीपीएम से 60 पीपीएम
तांबा	:	4 पीपीएम से 20 पीपीएम
आयरन	:	500 पीपीएम से 1200 पीपीएम
मैंगनीज	:	20 पीपीएम से 60 पीपीएम

इनके अलावा, सल्फर कम्पाउण्ड और कड़वे लिमोनायड्स की प्रचुर मात्रा नीम की खली में पायी जाती है।

2. कीटों एवं रोगों से बचाव

पौधों/फसलों में नीम की खली का प्रयोग करने से जड़ों में लगने वाली चीटियां, दीमक, फफूंद आदि जो जड़ों को नुकसान पहुंचाते है उनसे काफी हद तक बचा जा सकता है। नीम की खली में करीब 8–10% तेल की मात्रा पायी जाती है जो कि प्राकृतिक कीटनाशी का कार्य करता है, और इसके प्रयोग से फसलों पर कीड़ों का प्रकोप कम हो जाता है।

3. मिट्टी की उर्वरा शक्ति बनाये रखने में सहयोगी

नीम की खली में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्वों की उपलब्धता मृदा के स्वास्थ्य को उपजाऊ बनाती है। नीम की खली का प्रयोग करने से पौधों में क्लोरोफिल की मात्रा भी बढ़ती है जिससे पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बढ़ जाती है और पौधों में सर्वांगीण विकास भी होता है, जिससे फसल से अपेक्षित उपज प्राप्त होती है।

4. नीम की खली डालने से मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता देर तक बनी रहती है, क्योंकि यह मिट्टी में मिलनें के बाद लम्बे समय तक पोषक तत्व को धीरे–धीरे छोड़ता है, इससे पौधों में वृद्धि लगातार और अच्छी बनी रहती है। जिसके कारण फसलों को जल्दी–जल्दी खाद देने की जरूरत नहीं पड़ती।

5. नीम की खली एक किफायती खाद है, इसमें उपलब्ध माइक्रो व मैक्रो पोषक तत्व, जैविक यौगिक एक बार फसल में देने से फसल को पूरे जीवन चक्र में धीरे–धीरे मिलते रहते है, जिससे बार–बार खाद देने के खर्चों से बचा जा सकता है।

6. नीम की खली खेतों में प्रयोग करने से पोषक तत्व के साथ–साथ पौधों को रोगों एवं कीटाणुओं से भी बचाता है। जिससे पौधों की बढ़त के साथ–साथ आने वाले रोग/कीट

की समस्याओं से भी छुटकारा मिल जाता है। नीम के खली के प्रयोग द्वारा उत्पन्न खाद्य पदार्थों में घुन और भण्डारण कीट लगने की सम्भावना कम हो जाती है।

7. मिट्टी में नीम की खली मिलाने से उसकी क्षारीयता को भी कम किया जा सकता है, क्योंकि इसके प्रयोग से *फैटी एसिड्स, एल्डिहाइड्स, कीटोन्स, अमीनो एसिड्स, कार्बोहाइड्रेट्स,* मुक्त सल्फर भी मिट्टी में पहुंचता है, जो कि पौधों के सर्वागीण विकास के लिए हितकारी होता है।

8. नीम की खली को यूरिया से बेहतर बताया गया है, क्योंकि यूरिया मिट्टी से पोषक तत्वों को खींचने का कार्य करता है, जिसके कारण कुछ समय बाद मिट्टी की संरचना बदलने लगती है। वही नीम की खली प्रयोग करने से मृदा को भरपूर पोषक तत्व के साथ–साथ मृदा को उपजाऊ बनाता है।

9. इसके प्रयोग से मृदा की संरचना में सुधार के साथ–साथ पानी रोकने की क्षमता भी बढ़ती है जो कि पौधों के सर्वागीण विकास के लिए बहुत आवश्यक होता है।

10. रसायनिक कीटनाशक कीटों के नर्वस सिस्टम पर असर डालते है। लेकिन लगातार रसायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से इनका असर कीटों पर कमजोर पड़ने लगता है। जबकि नीम की खली कीटों पर हार्मोनल प्रभाव डालता है जिससे कीटों का पौधों को खाना, प्रजनन करना रूक जाता है, साथ ही कीटों के अन्दर इसके प्रतिरोधी गुण नहीं बन पाते।

पौधों में नीम की खली डालने की प्रयोग विधि

- नीम की खली पट्टी या पाउडर के रूप में मिलती है। इसे खाद व कीटनाशक दोनों प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है।
- यदि इसका प्रयोग गमलों में किया जाना है तो माह में एक बार अवश्य करें।
- प्रयोग संतुलित मात्रा में करना चाहिए, बहुत ज्यादा डालने की आवश्यकता नहीं।
- इसका प्रयोग गमलों में पौध लगाते समय मिट्टी में मिलाकर एवं बाद में ऊपर से भी दिया जा सकता है।
- मिट्टी की गुड़ाई करके पानी मिट्टी की ऊपरी परत को खोदकर नीम की खली चूर करके मिला देना चाहिए।
- नीम की खली को पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करें। जिससे रोग व कीटों से बचा जा सकता है।

सारांश

इन दिनों घर का स्वच्छ और स्वस्थ पर्यावरण युक्त होना महत्वपूर्ण हो गया है, जिसके कारण विभिन्न प्रकार के पौधों को घर के बाहर व अन्दर लगाया जाने लगा है, जिससे घर में अच्छी हवा और शुद्ध पर्यावरण के साथ अच्छी सज्जा का कार्य किया जा सकता है। लेकिन मानसून के मौसम में पौधों की देखभाल करना थोड़ा मुश्किल हो जाता है, क्योंकि इस मौसम में पौधों को अनेक समस्याओं से दो–चार होना पड़ता है और लोग परेशान हो जाते है। अगर आप इस प्रकार की समस्याओं से जूझ रहे हैं, तो आप अपने घर के आस–पास लगे पौधों के साथ–साथ *इनडोर* पौधों की सफलतापूर्वक उगाने एवं देखरेख के लिए नीम की खली/पाउडर का प्रयोग करके पौधों के उचित बढ़वार के साथ–साथ विकास में सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

नीम का प्रयोग खेती–बाड़ी में लगातार बढ़ता जा रहा है। बाजार में अब नीम खली के साथ–साथ नीम कोटेड यूरिया आने लगा है। नीम तेल के लेप से जहां यूरिया की उपयोगिता बढ़ी है, वही यूरिया की काला बाजारी पर भी रोक लगी है। इस प्रकार से नीम की खली के साथ–साथ अन्य उत्पाद भी फसलों के लिए उपयोगी के साथ–साथ हमारे स्वास्थ्य के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है।

गो खग खे खग बारि खग तीनों माहिं बिसेक।
तुलसी पीवैं फिरि चलैं फिरैं सँग एक।।

भावार्थ– तुलसीदास जी कहते हैं कि पृथ्वी, आकाश और जल में रहने वाले तीनों प्रकार के पक्षियों में यह विशेषता है कि वे सब अपने–अपने दल बनाकर एक ही साथ पानी पीते हैं, चलते–फिरते है और रहते हैं (मनुष्यों को इनसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये)।

स्रोतः गोस्वामी तुलसीदास जी रचित दोहावली

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कृषि आधुनिकीकरण में युवाओं की सक्रिय भागीदारी और भारत सरकार की पहल

दुष्यन्त मिश्रा
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

भारत की 50 प्रतिशत से अधिक आबादी कृषि से ही जीविकोपार्जन करती है। युवाओं के द्वारा कमोबेश कृषि की तस्वीर बदल सकती है। दिक्कत केवल इस बात की है कि किसान का बेटा किसान नहीं बनना चाहता और किसान स्वयं अपने बच्चों को कृषि कार्य में नहीं रखना चाहता है। इसी तरह कृषि की पढ़ाई करने वाले युवा भी वापस गाँव में जाकर खेती नहीं करना चाहता है। कृषि को बेकारों, बेगारों और निरक्षरों का पेशा मानने की मानसिकता पर पूर्ण–विराम लगाने की आवश्यकता है। यदि युवा खेती नहीं करेंगे तो भविष्य के किसान कहाँ से आएँगे? विकसित भारत का रास्ता युवाओं, खेतों और खलिहानों से होकर ही गुजरेगा। कृषि आधुनिकीकरण का मतलब है नयी तकनीकियों और आधुनिक पद्धतियों का कृषि क्षेत्र में प्रयोग, ताकि उत्पादकता बढ़ाई जा सके और किसान की आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाया जा सके। कृषि आधुनिकीकरण का उद्देश्य न सिर्फ उत्पादकता ही बढ़ाना है बल्कि लागत को घटाने और किसानों की जीवन शैली में सुधार लाना भी है। कृषि में नई तकनीकों का समावेश जैसे उन्नत बीज, ड्रिप सिंचाई, जैविक खेती और उन्नत कृषि यंत्रों का प्रयोग करना, इसके अतिरिक्त डिजिटल तकनीक जैसे *सैटेलाइट इमेज, मोबाइल एप्लिकेशन* और *ई–मार्केटिंग प्लेटफॉर्म* का उपयोग कृषि को अधिक कुशल और लाभकारी बना सकता है।

युवाओं की भागीदारी कृषि के आधुनिकीकरण में बेहद महत्वपूर्ण है। आज का युवा तकनीकी के प्रति अधिक जागरूक है, युवाओं के पास नए विचार और उन्नत तकनीकियों को अपनाने का जुनून होता है। वे कृषि में न केवल मौजूदा पद्धतियों को सुधार सकते हैं बल्कि नई कृषि पद्धतियों का विकास भी कर सकते हैं जैसे कि *स्मार्ट फार्मिंग, रोबोटिक्स,* और *डेटा–ड्रिवन* फैसले लेने की प्रक्रिया, इन सबके लिए युवा महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। कृषि से जुड़े विभिन्न क्षेत्रों जैसे जैविक उत्पादों, खाद्य प्रसंस्करण, कृषि उपकरण, और कृषि–प्रौद्योगिकी *स्टार्टअप्स* में युवा उद्यमी सक्रिय हैं। इससे न केवल रोजगार पैदा हो रहे हैं, बल्कि युवा किसानों के लिए नए बाजार और अवसर भी खुल रहे हैं। युवाओं को फल–फूलों की खेती, मशरूम की खेती, पशुपालन एवं दुग्ध उत्पादन, दूध के विभिन्न उत्पाद तैयार करना, *क्राफ्टेड* फल के पौधे तैयार करना, खाद–बीज की दुकान लगाना, कुक्कुट पालन, मधुमक्खी पालन, सजावटी पौधों की नर्सरी खोलना, खाद्य प्रसंस्करण और आँवला, तिलहन, दलहन की प्रसंस्करण इकाई लगाना खूब भा रहा है। फसलों को सही दाम कैसे मिले, शीत गृहों में फलों और सब्जियों को सुरक्षित कैसे रखा जाए और कृषि से प्राप्त कच्चे माल का निर्यात संबंधी गतिविधियों के बारे में ख़बर युवा किसान भलीभांति रखते हैं।

कृषि कार्य में समय का काफी महत्व है। सही समय पर और सही तरीके से खेतों की जुताई, फसलों की बुआई, रोपाई, निराई, सिंचाई और कटाई न हो तो सही लाभ किसानों को नहीं मिल पाता है। युवा किसान इन सभी चुनौतियों का सामना ठीक से कर लेते हैं जिससे उन्हें विशेष समस्याएँ नहीं झेलनी पड़ती हैं। देश के नीति निर्धारणकर्ताओं के सामने चुनौती है कि ऐसी नीतियाँ बनाएँ कि गाँवों में युवा रह सकें और खेती–किसानी कर सकें। कृषि में युवाओं के आने से युवा आत्मनिर्भर होंगे, युवाओं के आत्मनिर्भर होने से देश आत्मनिर्भर होगा। भारत के पास युवाओं की अच्छी जनसंख्या है, बड़ा बाजार है, उत्पादों को खपाने के लिए करोड़ों की संख्या में उपभोक्ता वर्ग हैं और विविध फसलों के लिए विभिन्न प्रकार की मिट्टियाँ और मौसम हैं, आवश्यकता सिर्फ ऊर्जावान शिक्षित युवा किसानों की है। भारत सरकार कृषि और किसानों के कल्याण के बारे में बहुत चिंतित है और यह विभिन्न मुद्दों के समाधान के लिए राज्य सरकारों के साथ मिलकर लगातार काम कर रही है। भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र को प्रौद्योगिकी, नवाचार और सतत विकास की दिशा में उन्नति करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इसके अंतर्गत योजनाएं और कार्यक्रम शामिल हैं, जो युवाओं को कृषि क्षेत्र में आकर्षित करने और उनकी भागीदारी को बढ़ावा देने का काम करते हैं। कृषि राज्य का विषय है, इसलिए भारत सरकार उचित नीतिगत उपायों और वित्तीय सहायता के माध्यम से राज्यों के प्रयासों को पूरा करती है। भारत सरकार की विभिन्न योजनाएं उत्पादन बढ़ाकर, लाभकारी *रिटर्न* और किसानों के कल्याण के लिए हैं, जिनमें शामिल हैं:

1. *पीएम* किसान के माध्यम से किसानों को आय सहायता; 2. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना *(पीएमएफबीवाई);* 3. प्रधानमंत्री किसान मानधन योजना *(पीएमकेएमवाई)* एक केंद्रीय क्षेत्र की योजना है जिसे सबसे कमजोर किसान परिवारों को सुरक्षा

प्रदान करने के लिए शुरू किया गया था; 4. कृषि क्षेत्र के लिए संस्थागत ऋण; 5. उत्पादन लागत का डेढ़ गुना न्यूनतम समर्थन मूल्य *(एमएसपी)* तय करना; 6. देश में जैविक खेती को बढ़ावा देना; 7. प्रति बूंद अधिक फसल; 8. सूक्ष्म सिंचाई कोष; 9. किसान उत्पादक संगठनों *(एफपीओ)* को बढ़ावा देना; भारत सरकार ने किसान उत्पादक संगठनों *(एफपीओ)* के गठन और संवर्धन के लिए केंद्रीय क्षेत्र योजना *(सीएसएस)* शुरू की। *एफपीओ* का गठन और संवर्धन कार्यान्वयन एजेंसियों *(आईए)* के माध्यम से किया जाना है। *एफपीओ* को 03 वर्ष की अवधि के लिए प्रति *एफपीओ* 18.00 लाख रुपए तक की वित्तीय सहायता मिलती है। इसके अलावा, *एफपीओ* के प्रत्येक किसान सदस्य को 2,000 रुपये तक के *मैचिंग इक्विटी* अनुदान का प्रावधान किया गया है, जिसकी सीमा 5 लाख रुपये है। *एफपीओ* को राष्ट्रीय कृषि बाजार *(ई–एनएएम) प्लेटफॉर्म* पर शामिल किया गया है, जो पारदर्शी मूल्य खोज पद्धति के माध्यम से अपने कृषि उत्पादों के *ऑनलाइन* व्यापार की सुविधा प्रदान करता है, ताकि *एफपीओ* को अपनी उपज के लिए बेहतर लाभकारी मूल्य मिल सके। 10. राष्ट्रीय मधुमक्खी पालन और शहद मिशन *(एनबीएचएम)*: मधुमक्खी पालन के महत्व को ध्यान में रखते हुए, वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन के समग्र प्रचार और विकास और ''मीठी क्रांति'' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए क्षेत्र में इसके कार्यान्वयन के लिए 2020 में आत्मनिर्भर भारत अभियान के तहत राष्ट्रीय मधुमक्खी पालन और शहद मिशन *(एनबीएचएम)* नामक एक नई केंद्रीय क्षेत्र योजना शुरू की गई थी। कुछ उपलब्धियों में शामिल हैं; कृषि के लिए 5वें इनपुट के रूप में मधुमक्खियों/मधुमक्खी पालन को मंजूरी दी गई है। शहद के परीक्षण के लिए राष्ट्रीय मधुमक्खी पालन और शहद मिशन *(एनबीएचएम)* के तहत 4 विश्व स्तरीय अत्याधुनिक शहद परीक्षण प्रयोगशालाएं और 35 मिनी शहद परीक्षण प्रयोगशालाएं स्वीकृत की गई हैं। मधुमक्खी पालकों/शहद समितियों/फर्मों/कंपनियों के *ऑनलाइन* पंजीकरण के लिए मधुक्रांति *पोर्टल* शुरू किया गया है। 11. कृषि मशीनीकरण; 12. नमो *ड्रोन* दीदी सरकार ने हाल ही में 2024–25 से 2025–26 की अवधि के लिए 1261 करोड़ रुपये के परिव्यय के साथ महिला स्वयं सहायता समूहों *(एसएचजी)* को ड्रोन प्रदान करने के लिए एक केंद्रीय क्षेत्र योजना को मंजूरी दी है। इस योजना का उद्देश्य 15,000 चयनित महिला स्वयं सहायता समूहों *(एसएचजी)* को कृषि उद्देश्य (उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग) के लिए किसानों को किराये की सेवाएं प्रदान करने के लिए ड्रोन प्रदान करना है। इस योजना के तहत, ड्रोन की खरीद के लिए महिला *एसएचजी* को ड्रोन और सहायक उपकरण/सहायक शुल्क की लागत का 80 प्रतिशत (अधिकतम 8.0 लाख रुपये तक) केंद्रीय वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी। यह योजना स्वयं सहायता समूहों को टिकाऊ व्यवसाय और आजीविका सहायता भी प्रदान करेगी और वे प्रति वर्ष कम से कम 1.0 लाख रुपये की अतिरिक्त आय अर्जित करने में सक्षम होंगे। 13. किसानों को मृदा स्वास्थ्य कार्ड प्रदान करना; 14. राष्ट्रीय कृषि बाजार *(ई–एनएएम)* विस्तार मंच की स्थापना; 15. खाद्य तेलों के लिए राष्ट्रीय मिशन–ऑयल पाम का शुभारंभ *(एनएमईओ–ओपी)*: भारत सरकार द्वारा 2021 में एक नई केंद्र प्रायोजित योजना, राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन *(एनएमईओ)–ऑयल पाम (एनएमईओ–ओपी)* शुरू की गई है, जिसका उद्देश्य देश को खाद्य तेलों में आत्मनिर्भर बनाने के लिए ऑयल पाम की खेती को बढ़ावा देना है, जिसमें पूर्वोत्तर राज्यों और अंडमान और निकोबार द्वीप समूह पर विशेष ध्यान दिया गया है। 16. कृषि अवसंरचना निधि *(एआईएफ)*; 17. कृषि उपज *लॉजिस्टिक्स* में सुधार, किसान रेल की शुरूआत; 18. कृषि और संबद्ध क्षेत्र में *स्टार्ट–अप इको सिस्टम* का निर्माण; 19. कृषि और संबद्ध कृषि वस्तुओं के निर्यात में उपलब्धि एवं 20. बागवानी क्षेत्र के समग्र विकास के लिए एकीकृत बागवानी विकास मिशन *(एमआईडीएच)* जिसके तहत *पैक हाउस*, एकीकृत *पैक हाउस, कोल्ड स्टोरेज, रीफर ट्रांसपोर्ट, राइपनिंग चैम्बर* आदि की स्थापना सहित विभिन्न बागवानी गतिविधियों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भी कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से किसानों को खेती के बारे में शिक्षित करने के लिए प्रशिक्षण प्रदान करती है, अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन, जागरूकता कार्यक्रम आदि आयोजित करती है। हालांकि कृषि क्षेत्र में आधुनिकीकरण की दिशा में कई सकारात्मक कदम उठाए गए हैं, लेकिन इसके रास्ते में कई चुनौतियां भी हैं जैसे कि, पारंपरिक खेती से आधुनिक कृषि पद्धतियों में बदलाव लाना, किसानों को नई तकनीकियों के बारे में जागरूक करना, और कृषि के क्षेत्र में वित्तीय निवेश की कमी। इन चुनौतियों का समाधान तभी संभव है जब सरकार और निजी क्षेत्र मिलकर कृषि क्षेत्र में निवेश करने के साथ ही, युवाओं को कृषि के क्षेत्र में आकर्षित करने के लिए उन्हें न केवल वित्तीय सहायता दी जाए, बल्कि कृषि में उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए एक उपयुक्त माहौल भी तैयार किया जाए। कृषि क्षेत्र में युवाओं की भागीदारी और भारत सरकार की भूमिका दोनों का अत्यधिक महत्व है। यदि इन दोनों को सही दिशा में मार्गदर्शन मिले, तो भारत का कृषि क्षेत्र न केवल आर्थिक रूप से सशक्त हो सकता है, बल्कि यह समग्र सामाजिक–आर्थिक विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है। कृषि आधुनिकीकरण में युवाओं का योगदान एक नई दिशा की ओर इंगित करता है, जहां वे न केवल किसानों की जीवनशैली को बदल सकते हैं, बल्कि कृषि क्षेत्र को एक मजबूत और भविष्य उन्मुख उद्योग बना सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

भारतीय कृषि को आत्मनिर्भर बनाने में महिलाओं की भूमिका

मिथिलेश तिवारी, संजय कुमार गोस्वामी एवं दिनेश सिंह
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

कृषि मानव अस्तित्व और आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जो भोजन, फाइबर और अन्य आवश्यक उत्पाद प्रदान करता है। महिलाएं कृषि की रीढ़ हैं, जो फसल उत्पादन, पशुधन प्रबंधन, मत्स्य पालन और वानिकी में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। कृषि में अपनी आवश्यक भूमिका के बावजूद महिलाओं को कई चुनौतियों को सामना करना पड़ता है जो उनकी उत्पादकता और कृषि विकास में पूरी तरह से भाग लेने की क्षमता को सीमित करती हैं। इन चुनौतियों में लिंग आधारित हिंसा, शिक्षा, प्रशिक्षण, भूमि स्वामित्व, वित्त, प्रौद्योगिकी और बाजारों तक सीमित पहुँच शामिल हैं।

छोटे खेतों में काम करने वाली महिलाएं

ऐसी महिलाएं कृषि की रीढ़ हैं। वे दुनिया के भोजन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा पैदा करती हैं, खासकर विकासशील देशों में महिलाएं छोटे खेतों में कई तरह के काम करती हैं, जिसमें बीज बोना, निराई करना, कटाई करना और उपज बेचना शामिल है। हालाँकि, उनके पास अक्सर जमीन, पानी और बीज जैसे संसाधनों तक पहुँच नहीं होती है, जिससे उनकी उत्पादकता और आय सीमित हो जाती है।

बड़े खेतों में काम करने वाली महिलाएं

ऐसी महिलाएं वैश्विक खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन सहित कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में काम करती हैं। इन महिलाओं को असमान वेतन, शिक्षा और प्रशिक्षण तक सीमित पहुँच जैसी चुनौतियों का भी समाना करना पड़ता है।

लैंगिक समानता और सशक्तिकरण

सशिक्तकरण में भूमि, जल और बीज जैसे संसाधनों तक महिलाओं की पहुँच बढ़ाना और उन्हें शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान करना शामिल है। शिक्षा, भूमि, स्वामित्व, वित्त और प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषि में महिलाओं को सशक्त बनाना उनकी उत्पादन का, आय और निर्णय लेने की शक्ति में सुधार करना, प्रजनन अधिकार, लिंग आधारित हिंसा को कम करना और निर्णय लेने की प्रकिया में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना और लैंगिक समानता को बढ़ावा देना भी शामिल है।

नेतृत्व और नवाचार

कृषि में महिलाओं का नेतृत्व लैंगिक असमानता को दूर करने, टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने और उत्पादकता और आय बढ़ाने में मदद कर सकता है। इसके अलावा, वित्तीय और तकनीकी नवाचार महिलाओं को कृषि में आने वाली बाधाओं, जैसे कि ऋण और बाजारों तक सीमित पहुँच को दूर करने में मदद कर सकते है।

शिक्षा तक पहुँच

कृषि में महिलाओं की उत्पादकता और आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में कई महिलाओं को सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक बाधाओं के कारण गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुँच नहीं है। कृषि पद्धतियों, वित्तीय प्रबंधन और उद्यमिता में शिक्षा प्रदान करने से महिलाओं को अपनी उत्पादकता, आय और नेतृत्व कौशल बढ़ाने में मदद मिल सकती है।

भूमि का स्वामित्व

भूमि कृषि उत्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण संपति है, फिर भी महिलाओं को अक्सर भूमि स्वामित्व और नियंत्रण में महत्वपूर्ण बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

वित्त और प्रौद्योगिकी

कृषि क्षेत्र में महिलाओं को अक्सर वित्त और प्रौद्योगिकी तक पहुँच की कमी होती है। महिलाओं की जरूरतों के हिसाब से वित्तीय सेवाएं प्रदान करना और उपयुक्त प्रौद्योगिकियों के उपयोग को बढ़ावा देने से महिलाओं की उत्पादकता बढ़ सकती है।

बाजार

महिलाओं को अक्सर सीमित गतिशीलता जानकारी की कमी और लिंग आधारित भेदभाव के कारण बाजारों तक पहुँचने में बाधाओं का सामना करना पड़ता है। बाजारों और बाजार संबंधी जानकारी तक पहुँच प्रदान करने से महिलाओं को अपनी आय बढ़ाने, जीविका खेती पर निर्भरता कम करने तथा आर्थिक विकास में योगदान करने में सहायता मिल सकती है।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

कृषि क्षेत्र में ड्रोन के बढ़ते कदम

दीपक कोहली
5/104, विपुल खंड, गोमती नगर, लखनऊ

प्रस्तावना

भारत कृषि चुनौतियों से निपटने के लिए सक्रिय रूप से ड्रोन प्रौद्योगिकी को बढ़ावा दे रहा है। सरकारी पहल ड्रोन उद्योग का समर्थन करती हैं। कभी भविष्यवादी माने जाने वाले ड्रोन अब युवाओं और महिलाओं के लिए लागत प्रभावी समाधान और रोजगार के अवसर प्रदान कर रहे हैं। विश्व स्तर पर, अफ्रीका, जापान और स्पेन जैसे देश कृषि को बढ़ाने के लिए ड्रोन का उपयोग कर रहे हैं। भारत को ड्रोन प्रौद्योगिकी में अपनी क्षमता के लिए पहचाना जाता है, वह विभिन्न क्षेत्रों में ड्रोन का लाभ उठाने के लिए तैयार है। बढ़ती रुचि और सरकारी समर्थन के साथ, भारत एक परिवर्तनकारी ड्रोन क्रांति के कगार पर है।

ड्रोन प्रौद्योगिकी की क्षमता

कृषि में ड्रोन के वैश्विक आर्थिक प्रभावः ड्रोन के वैश्विक अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र में लगभग 7 बिलियन अमरीकी डालर का योगदान देने का अनुमान है।

विभिन्न देशों में अपनाने की दरों में भिन्नताः संयुक्त राज्य अमेरिका में, 84 प्रतिशत किसान प्रतिदिन या साप्ताहिक आधार पर ड्रोन का उपयोग करते हैं। उपयोग में फसल निगरानी (73 प्रतिशत) और मृदा और क्षेत्र विश्लेषण (43 प्रतिशत) शामिल हैं।

भारत में तेजी से वृद्धिः भारत सक्रिय रूप से कृषि में ड्रोन प्रौद्योगिकी को बढ़ावा दे रहा है। शुरुआती दौर में होने के बावजूद कई कंपनियां भारतीय किसानों के लिए ड्रोन तकनीक को सुलभ बनाने के लिए काम कर रही हैं। ड्रोन उद्योग का कारोबार वर्ष 2026 तक ₹ 12,000–15,000 करोड़ तक पहुंचने की आशा है।

ड्रोन स्टार्टअप में वृद्धिः जून 2023 तक भारत में 333 ड्रोन स्टार्टअप स्थापित हो चुके थे जो गत वर्षों की तुलना में उल्लेखनीय वृद्धि का संकेत देता है। अगस्त 2021 और फरवरी 2022 के बीच भारत में ड्रोन या यूएवी स्टार्टअप की संख्या में 34.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

भारतीय कृषि में एग्री–ड्रोन के लाभ और सीमाएँ

भारतीय कृषि क्षेत्र तेजी से ड्रोन अपनाने का अनुभव कर रहा है। जिससे स्टार्टअप कृषि, रक्षा और अन्य क्षेत्रों में इसके विविध अनुप्रयोगों का अन्वेषण कर रहे हैं। हालांकि, यह उभरती हुई तकनीक अपने साथ लाभ और सीमाएँ दोनों लाती है।

लाभ

उन्नत सुरक्षाः प्रशिक्षित पायलट द्वारा ड्रोन का संचालन करने से दुरुपयोग का जोखिम कम होता है।

अधिक दक्षताः मानव श्रम की तुलना में दोगुनी गति से कार्य करके समय पर और प्रभावी कृषि कार्यों को बढ़ावा देते हैं।

लागत–प्रभावशीलताः परंपरागत तरीकों की तुलना में *अल्ट्रा–लो वॉल्यूम (यूएलवी)* छिड़काव तकनीक का उपयोग पानी की बचत को बढ़ावा देता है, जिससे लागत कम होती है।

पहुँच में सुधारः कृषि–ड्रोन कम लागत, आसान रखरखाव, मजबूत डिजाइन, वियोज्य कंटेनर और सटीक कीटनाशक छिड़काव क्षमताओं की विशेषता रखते हैं, जो उन्हें भारतीय किसानों के लिए व्यावहारिक बनाते हैं।

सीमाएँ

***कनेक्टिविटी* के मुद्देः** ग्रामीण क्षेत्रों में सीमित *ऑनलाइन कवरेज* के कारण किसानों पर अतिरिक्त आवर्ती व्यय का बोझ पड़ सकता है।

मौसम पर निर्भरताः प्रतिकूल मौसम में ड्रोन उड़ाने से उनकी कार्यक्षमता प्रभावित हो सकती है।

ज्ञान और कौशल आवश्यकताएँः सरकारी पहलें ड्रोन उद्योग को उड़ान दे रही हैं। भारत में ड्रोन प्रौद्योगिकी तेजी से विकास कर रही है जिससे विभिन्न क्षेत्रों में इसके अनेक अनुप्रयोग सामने आ रहे हैं। इस विकास को और तेज करने के लिए, सरकार ने कई महत्वपूर्ण योजनाएँ और पहलें शुरू की हैं :

उत्पादन–आधारित प्रोत्साहन योजना

यह योजना घरेलू ड्रोन निर्माण को प्रोत्साहित करने के लिए डिज़ाइन की गई है। निर्माताओं को प्रोत्साहन प्रदान करके और अनुकूल नीतिगत वातावरण बनाकर यह योजना अगले तीन वर्षों में 10,000 से अधिक प्रत्यक्ष नौकरियां सृजन का लक्ष्य रखती है। वित्त वर्ष 2023–24 तक वार्षिक बिक्री कारोबार में

7-Deepak Kholi

900 करोड़ से अधिक तक पहुंचने का अनुमान है।

महिला स्वयं सहायता समूहों के लिए योजना

यह पहल कृषि में लगे महिला स्वयं सहायता समूहों को सशक्त बनाने और रोजगार के अवसर पैदा करने पर केंद्रित है। 2024–25 से 2025–26 तक ₹ 1,261 करोड़ आवंटित करके, यह योजना इन समूहों को फसल निगरानी और उपज अनुमान के लिए ड्रोन प्रदान करेगी।

स्टार्टअप के लिए ड्रोन शक्ति योजना

नवाचार को बढ़ावा देने और युवा उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए, ड्रोन शक्ति योजना *स्टार्टअप्स* को अनुसंधान, विकास और विपणन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है और ड्रोन उद्योग में भारतीय नवाचार को मजबूत बनाकर रोजगार सृजन और आर्थिक विकास को बढ़ावा देती है।

ड्रोन नियम, 2021

भारत में ड्रोन संचालन को सुरक्षित और कुशल बनाने के लिए एक व्यापक विनियामक ढांचा स्थापित किया गया है। *डिजिटल स्काई प्लेटफॉर्म* जैसे ऑनलाइन उपकरण ड्रोन पंजीकरण और संचालन को सुव्यवस्थित करते हैं, जिससे उद्योग के लिए अनुपालन आसान हो जाता है।

कृषि अनुसंधान में ड्रोन

फसल अनुसंधान संस्थानों को कृषि अनुसंधान में ड्रोन का उपयोग करने की अनुमति दिए जाने से न केवल उत्पादकता बढ़ाने के लिए नए तरीके विकसित होंगे, बल्कि ड्रोन प्रौद्योगिकी को अपनाने को भी प्रोत्साहन मिलेगा।

कृषि मशीनीकरण पर उप–मिशन

किसानों को ड्रोन अपनाने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए, एस एम ए एम के तहत वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। किसानों को अपने खेतों में ड्रोन के उपयोग का प्रदर्शन करने के लिए 50 से 80 प्रतिशत तक अनुदान दिया जाता है।

इन पहलों के सम्मिलित प्रयास से भारत में ड्रोन उद्योग के तीव्र विस्तार की संभावना है। आने वाले वर्षों में, ड्रोन प्रौद्योगिकी न केवल आर्थिक विकास को बढ़ावा देगी, बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाएगी।

किसान ड्रोन का भारतीय कृषि पर प्रभाव

भारतीय कृषि परंपरागत रूप से श्रम–साध्य और कम दक्षता वाला क्षेत्र रहा है। हालाँकि, किसान ड्रोन के आगमन से खेती के तौर–तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन आने की आशा है। ये तकनीकी रूप से उन्नत हवाई वाहन कृषि की मूलभूत प्रक्रियाओं को अधिक कुशल सटीक और लाभदायक बना सकते हैं।

पारंपरिक विधियों से बेहतर

सुरक्षाः हवा से कीटनाशक छिड़काव से जहरीले रसायनों के सीधे संपर्क से होने वाले जोखिम कम हो जाते हैं।

दक्षताः ड्रोन कम समय में बड़े क्षेत्रों को कवर कर पारंपरिक तरीकों की तुलना में श्रम और लागत को कम कर सकते हैं।

सटीकताः *जीपीएस*–निर्देशित तकनीक सुनिश्चित करती है कि कीटनाशक, बीज और उर्वरक का केवल आवश्यक क्षेत्रों में ही छिड़काव हो जिससे संसाधनों का कम उपयोग होता है।

लाभदायक खेती को बढ़ावा देना

फसल स्वास्थ्य की निगरानीः ड्रोन उच्च–*रिज़ॉल्यूशन* वाली छवियां *कैप्चर* कर सकते हैं, जिससे किसानों को फसल के स्वास्थ्य, पोषक तत्वों की कमी और बीमारियों का शीघ्र पता लगाने में मदद मिलती है।

उपज अनुमानः उन्नत सेंसर से प्राप्त डेटा का उपयोग फसल उपज का सटीक अनुमान लगाने के लिए किया जा सकता है, जिससे किसानों को बाज़ार की तैयारी करने और लाभप्रदता बढ़ाने में सहायता मिलती है।

भूमि प्रबंधनः ड्रोन का उपयोग क्षेत्रफल मापने, मिट्टी का विश्लेषण करने और सिंचाई प्रबंधन को बेहतर बनाने के लिए किया जा सकता है।

निष्कर्ष

कृषि में ड्रोन मृदा विश्लेषण के माध्यम से फसल चयन और रोपण पैटर्न में निर्णय लेने में सहायता करते हैं। जिससे लागत और शारीरिक श्रम में कमी आ रही है। वे कीटनाशकों जैसे कृषि इनपुट के लक्षित अनुप्रयोग को सक्षम बनाते हैं, फसल निगरानी को अनुकूलित करते हैं और कुशल सिंचाई प्रबंधन की सुविधा प्रदान करते हैं। कुछ सीमाओं के बावजूद, मजबूत सरकारी समर्थन, विनियामक अनुमोदन, आकर्षक प्रोत्साहन और उपयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रमों के साथ, ड्रोन भारतीय कृषि में क्रांतिकारी बदलाव लाने और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने की क्षमता रखते हैं। संक्षेप में, ड्रोन आधुनिक कृषि के परिदृश्य को बदल रहे हैं और भारत के कृषि क्षेत्र को एक नए युग में ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

सुपरफूड्स का स्वास्थ्य पर प्रभाव

अनीता सावनानी, संगीता श्रीवास्तव एवं अभय श्रीवास्तव
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

सुपरफूड्स वह विशिष्ट खाद्य पदार्थ होते हैं जो सामान्य खाद्य पदार्थों की तुलना में अधिक मात्रा में पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। इन खाद्य पदार्थों में विटामिन, खनिज, *एंटीऑक्सीडेंट्स* और *फाइटोकेमिकल्स* शामिल होते हैं, जो शरीर के लिए कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं। आधुनिक जीवनशैली में तनाव, अनियमित आहार, और व्यस्त दिनचर्या के कारण, *सुपरफूड्स* का महत्व और भी बढ़ गया है। आज की व्यस्त दिनचर्या में लोगों के लिए संतुलित आहार बनाए रखना एक बड़ी चुनौती है। गलत खानपान और पोषण की कमी के कारण कई स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न होती हैं। ऐसे में सुपरफूड्स न केवल पोषण की कमी को पूरा करते हैं, बल्कि वे स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं पर सकारात्मक प्रभाव भी डालते हैं।

इस लेख में हम *सुपरफूड्स* के प्रकार, उनके लाभ, और उनके स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तृत विश्लेषण करेंगे।

***सुपरफूड्स* के प्रकार:** *सुपरफूड्स* की एक विस्तृत श्रृंखला है, जिनमें प्रमुख रूप से शामिल हैं:

1. **राजगीरा:** राजगीरा, जिसे *अमरंथ* भी कहा जाता है, एक प्राचीन और अत्यधिक पौष्टिक अनाज है। यह *प्रोटीन, फाइबर, कैल्शियम, मैग्नीशियम* और *आयरन* का समृद्ध स्रोत होने के साथ–साथ *ग्लूटेन–फ्री* भी होता है, जिससे यह *ग्लूटेन* असहिष्णुता वाले लोगों के लिए एक बेहतरीन विकल्प बनता है। इसमें प्रचुर मात्रा में *कैल्शियम* पाया जाता है, जो हड्डियों को मजबूत बनाने में सहायक होता है, वहीं उच्च *फाइबर* सामग्री पाचन तंत्र को बेहतर बनाने में मदद करती है। इसके अलावा, यह दिल के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है क्योंकि यह खराब कोलेस्ट्रॉल (एलडीएल) के स्तर को कम करता है। इसमें मौजूद *एंटीऑक्सिडेंट* शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर *इम्यून सिस्टम* को मजबूत करने में मदद करते हैं।
2. **क्विनोआ:** यह एक प्राचीन अनाज है, जो प्रोटीन और आवश्यक अमीनो एसिड से भरपूर होता है। यह ग्लूटेन–मुक्त होता है और इसे प्रोटीन के एक उत्कृष्ट स्रोत के रूप में जाना जाता है। इसमें *फाइबर,* मैग्नीशियम, और आयरन भी प्रचुर मात्रा में होते हैं।
3. **आंवला:** आंवला, जो विटामिन सी से भरपूर होता है, आयुर्वेद में एक अमृत फल के रूप में जाना जाता है। यह *इम्यूनिटी* को मजबूत करने के साथ–साथ बालों और त्वचा के लिए भी फायदेमंद होता है। पाचन तंत्र को सुधारने और आंखों की रौशनी बढ़ाने में भी इसकी अहम भूमिका होती है। इसे कच्चा खाया जा सकता है, जूस बनाकर पिया जा सकता है या मुरब्बा और चूर्ण के रूप में सेवन किया जा सकता है।
4. **चिया बीज:** चिया बीज छोटे आकार के होते हैं, लेकिन इनमें ओमेगा–3 फैटी एसिड, फाइबर, प्रोटीन, और कैल्शियम की उच्च मात्रा होती है। ये बीज पाचन स्वास्थ्य में सुधार करते हैं और वजन प्रबंधन में सहायक होते हैं।
5. ***मोरिंगा* (सहजन के पत्ते और फलियाँ):** *मोरिंगा,* जिसे *'ड्रमस्टिक'* भी कहा जाता है, विटामिन सी, आयरन और कैल्शियम का एक बेहतरीन स्रोत है। यह शरीर को डिटॉक्स करने में मदद करता है, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है और हड्डियों व जोड़ों को मजबूत बनाता है। इसके अलावा, यह डायबिटीज और *हाई ब्लड प्रेशर* के नियंत्रण में भी सहायक होता है। इसे सूप, पराठे या सब्जी में मिलाकर खाया जा सकता है।
6. ***ब्लूबेरी:*** *ब्लूबेरी एंटीऑक्सीडेंट्स* से भरपूर होती हैं, विशेष रूप से *एंथोसायनिन* नामक *एंटीऑक्सीडेंट*। यह हृदय स्वास्थ्य को बनाए रखने, मस्तिष्क की कार्यक्षमता को सुधारने, और *एजिंग* की प्रक्रिया को धीमा करने में मदद करता है।
7. **हल्दी:** हल्दी में *करक्यूमिन* नामक एक सक्रिय यौगिक होता है, जो *एंटी–इंफ्लेमेटरी* और *एंटीऑक्सीडेंट* गुणों के लिए प्रसिद्ध है। यह जोड़ों के दर्द को कम करने, प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने, और सूजन को नियंत्रित करने में मदद करता है।

8. **गहरे रंग की पत्तेदार सब्जियाँ:** गहरे रंग की पत्तेदार सब्जियाँ विटामिन ए, विटामिन सी, विटामिन ई, विटामिन के, *आयरन, पोटैशियम, कैल्शियम,* आहार फाइबर और *एंटीऑक्सीडेंट* से भरपूर होती हैं।

9. **मेवे और बीज:** अखरोट, अलसी, कद्दू के बीज, सूरजमुखी के बीज और बादाम जैसे मेवे और बीज पौष्टिक तत्वों से भरपूर होते हैं, जो शरीर के लिए अत्यधिक लाभकारी होते हैं। ये मेवे और बीज *प्रोटीन, मैग्नीशियम, फाइबर,* स्वस्थ वसा और *एंटीऑक्सीडेंट्स* का अच्छा स्रोत होते हैं, जो विभिन्न शारीरिक प्रक्रियाओं के लिए आवश्यक होते हैं। इन पोषक तत्वों को अपने आहार में शामिल करने के लिए आप इन मेवों और बीजों का चूरा बनाकर सलाद, सूप, स्मूदी, ओटमील, या दही पर छिड़क सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, एक ताजे सलाद में थोड़े से कद्दू के बीज और अखरोट डालने से न केवल उसका स्वाद बढ़ता है, बल्कि यह अतिरिक्त प्रोटीन और फाइबर भी प्रदान करता है।

10. ***फर्मेंटेड फूड्स:*** *'फर्मेंटेड'* का अर्थ है 'किण्वित' जो एक जैविक प्रक्रिया है, जिसमें सूक्ष्म जीवों (जैसे *बैक्टीरिया* या *यीस्ट*) द्वारा खाद्य पदार्थों में परिवर्तन किया जाता है, जिससे उनमें लाभकारी गुण, जैसे *प्रोबायोटिक्स,* उत्पन्न होते हैं। किण्वन से खाद्य पदार्थों के पोषण स्तर में वृद्धि होती है और उनका स्वाद भी बदल जाता है। किण्वित खाद्य पदार्थों, जैसे दही, केफिर (जो दूध में *बैक्टीरिया* और *यीस्ट* से किण्वित किया जाता है) और अचार, में *प्रोबायोटिक्स* की उच्च मात्रा होती है, जो आंतों में स्वस्थ जीवाणुओं के विकास को बढ़ावा देती है। ये खाद्य पदार्थ पाचन तंत्र को संतुलित रखते हैं, हानिकारक जीवाणुओं को नियंत्रित करते हैं, और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाते हैं, जिससे शरीर संक्रमण और बीमारियों से बचाव कर सकता है।

11. **स्वास्थ्य पर *सुपरफूड्स* के लाभ:** *सुपरफूड्स* में पाए जाने वाले उच्च विटामिन और खनिज तत्व आपके शरीर को बीमारियों से दूर रखने और आपको स्वस्थ रखने में मदद कर सकते हैं। जब इन्हें संतुलित आहार में शामिल किया जाता है, तो ये खाद्य पदार्थ हृदय स्वास्थ्य, वजन घटाने, ऊर्जा के स्तर में सुधार और यहां तक कि उम्र बढ़ने के प्रभावों को कम करने में मदद कर सकते हैं।

    कई *सुपरफूड्स* में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट कैंसर को रोकने में मदद कर सकते हैं, जबकि स्वस्थ वसा आपके हृदय रोग के जोखिम को कम कर सकते हैं। *फाइबर,* जो कई *सुपरफूड्स* में भी पाया जाता है, मधुमेह और पाचन समस्याओं को रोकने में मदद कर सकता है जबकि *फाइटोकेमिकल्स* में हृदय संबंधी बीमारियों के विकास के जोखिम को कम करने सहित कई स्वास्थ्य लाभ हैं। *सुपरफूड्स* आपके अंगों को विषाक्त पदार्थों से बचाने, कोलेस्ट्रॉल को कम करने, चयापचय को विनियमित करने और सूजन को कम करने के लिए भी जाने जाते हैं। इस प्रकार, *सुपरफूड्स* न केवल आपके संपूर्ण स्वास्थ्य को बढ़ावा देते हैं, बल्कि वे आपके शरीर के विभिन्न महत्वपूर्ण अंगों और प्रणालियों की कार्यक्षमता को भी सुधारते हैं। उदाहरण के लिए:

1. **हृदय स्वास्थ्य में सुधार:** *सुपरफूड्स* में मौजूद *एंटीऑक्सीडेंट्स* और *फाइबर* हृदय की सेहत को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, *ब्लूबेरी* और *नट्स* जैसे *सुपरफूड्स* रक्तचाप को नियंत्रित करने, कोलेस्ट्रॉल के स्तर को बनाए रखने, और हृदय रोगों के जोखिम को कम करने में मदद करते हैं।

2. **प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाना:** *सुपरफूड्स,* जैसे कि अदरक, लहसुन, और हल्दी, शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने में सहायक होते हैं। इन खाद्य पदार्थों में *एंटीऑक्सीडेंट्स* और *एंटी–इंफ्लेमेटरी* गुण होते हैं, जो शरीर को संक्रमण से लड़ने और बीमारियों से बचाने में मदद करते हैं। नियमित रूप से इन *सुपरफूड्स* का सेवन करने से शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

3. **वजन नियंत्रण में सहायक:** *सुपरफूड्स* जैसे कि चिया बीज, *क्विनोआ* और *एवोकाडो फाइबर* से भरपूर होते हैं, जो पेट को लंबे समय तक भरा रखते हैं और अत्यधिक भूख को कम करते हैं। ये खाद्य पदार्थ पोषण से भरपूर होते हैं और वजन घटाने की प्रक्रिया में मदद करते हैं। फाइबर युक्त *सुपरफूड्स* पाचन तंत्र को भी स्वस्थ रखते हैं और कैलोरी का सेवन नियंत्रित करते हैं।

4. **मस्तिष्क स्वास्थ्य:** *सुपरफूड्स* जैसे *ब्लूबेरी,* अखरोट, और ओमेगा–3 फैटी एसिड मस्तिष्क के स्वास्थ्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। ये *सुपरफूड्स* मस्तिष्क की कार्यक्षमता में सुधार करते हैं, स्मरण शक्ति को बढ़ाते हैं, और मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करते हैं। ओमेगा–3 *फैटी एसिड* मस्तिष्क के न्यूरॉन्स को स्वस्थ रखते हैं, जिससे अवसाद और चिंता जैसी मानसिक

समस्याओं का खतरा कम होता है।

5. **त्वचा और बालों का स्वास्थ्यः** *सुपरफूड्स* में मौजूद विटामिन, *मिनरल्स* और *एंटीऑक्सीडेंट्स* त्वचा और बालों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होते हैं। उदाहरण के लिए, *एवोकाडो* और नारियल तेल त्वचा को नमीयुक्त रखते हैं और उसे प्राकृतिक चमक प्रदान करते हैं। इसी तरह, बादाम, अखरोट, और बीजों में मौजूद बायोटिन और विटामिन ई बालों को मजबूत और चमकदार बनाने में मदद करते हैं।

6. **पाचन तंत्र में सुधारः** *सुपरफूड्स* जैसे कि *योगर्ट, केफिर,* और *फर्मेंटेड फूड्स* पाचन तंत्र के स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं। इनमें *प्रोबायोटिक्स* होते हैं, जो आंत में अच्छे जीवाणुओं के विकास को बढ़ावा देते हैं। यह पाचन को सुचारू रूप से चलाने में मदद करता है और कब्ज, *एसिडिटी,* और अन्य पाचन संबंधी समस्याओं को कम करता है।

***सुपरफूड्स* के सेवन में सावधानियाँः** *सुपरफूड्स* अत्यधिक पोषण से भरपूर होते हैं, लेकिन इन्हें सेवन करते समय संतुलन बनाए रखना महत्वपूर्ण है। केवल *सुपरफूड्स* पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है; संतुलित आहार में विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ शामिल होने चाहिए। इसके अलावा, कुछ *सुपरफूड्स* अत्यधिक सेवन से दुष्प्रभाव भी पैदा कर सकते हैं, जैसे कि चिया बीजों का अत्यधिक सेवन पाचन समस्याओं का कारण बन सकता है। याद रखें, नट्स और बीजों में काफी कैलोरी होती है, इसलिए अपने हिस्से के आकार को ज्यादा न बढ़ाएँ।

निष्कर्ष

सुपरफूड्स का स्वास्थ्य पर अत्यधिक सकारात्मक प्रभाव होता है, बशर्ते इन्हें संतुलित आहार के हिस्से के रूप में सेवन किया जाए। ये खाद्य पदार्थ आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं, जो शरीर को मजबूत बनाते हैं और विभिन्न रोगों से बचाव में सहायक होते हैं। यह खाद्य पदार्थ हृदय स्वास्थ्य, पाचन तंत्र, और प्रतिरक्षा प्रणाली को बेहतर बनाने में मदद करते हैं। हालांकि, केवल *सुपरफूड्स* पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए एक विविध और संतुलित आहार की आवश्यकता होती है, जिसमें फल, सब्जियाँ, साबुत अनाज, और प्रोटीन के स्रोत भी शामिल हों। संतुलित आहार शरीर को सभी आवश्यक पोषक तत्वों का उचित मिश्रण प्रदान करता है। इसके साथ ही, स्वस्थ जीवनशैली, जिसमें नियमित शारीरिक गतिविधि, पर्याप्त नींद, और मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान रखना शामिल है, हमारे समग्र स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस प्रकार, केवल सुपरफूड्स का सेवन नहीं, बल्कि जीवनशैली में समग्र सुधार से ही हम अपने स्वास्थ्य को बेहतर बना सकते हैं और दीर्घकालिक स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग

फूलगोभी के पत्ते भी है फायदेमंद

अंजली यादव[1], धीरज यादव[2], अपूर्वा सिंह[1], कामता प्रसाद[3], बरसाती लाल[3] एवं हिमांशु पाण्डेय[3]

[1]चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर

[2]महर्षि सूचना एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, लखनऊ

[3]भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

फूल गोभी एक ऐसी सब्जी है, जो खाने में स्वादिष्ट होने के साथ–साथ सेहत को भी काफी लाभ पहुंचाती है। यह सफेद रंग की सब्जी है, जो *ब्रैसिका* प्रजाति से संबधित है। इसका वानस्पतिक नाम *ब्रैसिका ओलेरासिया वार बोट्राइटिस* है। भारत समेत कई एशियाई देशों में गोभी एक प्रमुख सब्जी है, जिसका सेवन मुख्य रूप से सर्दियों में किया जाता है। दुनिया भर में अपने स्वाद के लिए मशहूर फूल गोभी का उपयोग सब्जी बनाने से लेकर, पराठे और पकौड़े बनाने तक में होता है। इसके अलावा भी कई ऐसे व्यंजन हैं, जिनमें फूल गोभी का स्थान खास होता है, क्योंकि फूल गोभी पोषक तत्वों से भरपूर होती है। लेकिन लोग यह नहीं जानते हैं, कि स्वादिष्ट फूल गोभी के अलावा उसके पत्ते भी हैं खास गुणों से भरपूर। यह हमारे स्वास्थ्य के लिए कई तरह से फायदेमंद होते हैं। लेकिन फूल गोभी की सब्जी बनाते वक्त लोग इसके पत्ते निकाल कर फेंक देते हैं, और यह नहीं जानते कि फूल गोभी के पत्ते भी सेहत के लिए फायदेमंद होते हैं। फूल गोभी की तरह इसके पत्ते भी पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। इसका सेवन करने से कई बीमारियों से बचाव होता है, क्योंकि फूल गोभी के पत्तों में प्रोटीन, कैल्शियम, फाइबर, आयरन, विटामिन ए, फास्फोरस आदि पोषक तत्वों के साथ–साथ एंटी ऑक्सीडेंट जैसे गुण भी मौजूद होते हैं, जो कि शरीर को स्वस्थ रखने में मदद करते हैं। फूलगोभी के पत्तों का सलाद, सूप या सब्जी बनाकर सेवन कर सकते हैं। फूलगोभी के पत्तों का नियमित सेवन हमारी पोषण स्थिति को बढ़ाने और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को रोकने के लिए अपरिहार्य है, अतः कई तरह की स्वास्थ्य समस्याओं से छुटकारा मिल सकता है। तो आइए, विस्तार से जानते हैं फूलगोभी के पत्तों के फायदे।

पत्तों में होता है फाइबर

फूल गोभी के पत्ते फाइबर तत्वों से भरपूर होते हैं। इसी वजह से पाचन संबंधी कई समस्याओं से निजात दिलाने में सहायक होते हैं। इन पत्तों को अपने खाने में शामिल करने से पाचन सुचारु रहता है, साथ ही कब्ज की समस्या से भी निजात मिलती है। लोगों को वजन घटाने में इससे काफी फायदा मिल सकता है। इसका *ग्लाइसेमिक लोड* भी कम होता है। किसी भोजन का *ग्लाइसेमिक लोड* एक संख्या होती है, जो अनुमान लगाती है कि भोजन खाने के बाद किसी व्यक्ति के रक्त में शर्करा का स्तर कितना बढ़ा है। अध्ययन में पाया गया है कि उच्च–*फाइबर* और कम *ग्लाइसेमिक लोड* वाली सब्जियों का अधिक सेवन वजन कम करने में सहायक होता है। फूलगोभी के पत्तों का सेवन सलाद, सूप, आदि के रूप में कर सकते हैं।

विटामिन ए का खजाना

फूलगोभी के पत्तों का सेवन आंखों के लिए काफी फायदेमंद साबित होता है। *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंटिफिक एंड इंजीनियरिंग* के एक अध्ययन के अनुसार, फूलगोभी के पत्तों में भरपूर मात्रा में विटामिन ए होता है। इसके सेवन से सीरम रेटिनॉल का स्तर बढ़ता है और रतौंधी का खतरा कम होता है।

एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर

गोभी के पत्तों में भरपूर मात्रा में *एंटीऑक्सीडेंट* तत्व मौजूद होते हैं, जो *फ्री रेडिकल्स* से होने वाले नुकसान और *ऑक्सीडेटिव स्ट्रैस* से बचाते है, जिसकी वजह से पुरानी बीमारियों का खतरा कम रहता है। अतः हमारी त्वचा को भीतर से साफ करते हैं और कैंसर जैसी बड़ी बीमारी से भी शरीर की रक्षा करते हैं। इन पत्तों को किसी भी रूप में अपने खाने में इस्तेमाल कर सकते हैं। इसके अलावा, इसमें कई तरह के खनिज लवण, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटैशियम, फोलिक एसिड भी उपलब्ध होते है।

कैल्शियम

पत्तों में कैल्शियम की अच्छी मात्रा पाई जाती है। इसका सेवन *पोस्टमेनोपॉजल* महिलाओं के लिए अच्छा माना जाता हैं, क्योंकि गोभी की पत्तियों में भरपूर मात्रा में कैल्शियम तत्व मौजूद होते हैं, इसकी 100 ग्राम पत्तियों में लगभग 96.70

मिलीग्राम कैल्शियम की मात्रा पाई जाती है। कैल्शियम से भरपूर होने की वजह से इन पत्तियों का सेवन करने से हड्डियों संबंधी कई समस्याओं से छुटकारा दिलाता है। यह मध्यम आयु वर्ग और रजोनिवृत्ति के बाद की महिलाओं के लिए अच्छा है। उच्च कैल्शियम सामग्री के कारण *ऑस्टियोपोरोसिस, ऑर्थराइटिस* और हड्डी से संबंधित अन्य बीमारियों की शुरुआत को रोकने की क्षमता है।

प्रोटीन से भरपूर

फूलगोभी के पत्ते प्रोटीन और *मिनरल्स* से भरपूर होते हैं, जो बच्चों के संपूर्ण विकास के लिए जरूरी है। कुपोषित बच्चों के लिए रोजाना फूलगोभी के पत्तों का सेवन बहुत फायदेमंद होता है। यह उनकी लंबाई, वजन और हीमोग्लोबिन के स्तर को बढ़ाने में मदद करता है।

आयरन

फूलगोभी के पत्ते आयरन का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं जिससे बच्चों और महिलाओं में एनीमिया जैसी समस्याओं से निदान पाया जा सकता है अथवा शरीर में लाल रक्त कोशिकाओं के निर्माण में मदद करता है, जिससे हीमोग्लोबिन का स्तर बढ़ता है और खून की कमी दूर होती है। कुछ अध्ययनों के अनुसार एनीमिया के उपचार में फूलगोभी की पत्तियों से बने साग की अहम् भूमिका है, यह बेहद लाभदायक होता है।

पाचन क्रिया रहती है दुरुस्त

फूल गोभी के पत्तों का सेवन पाचन क्रिया के लिए फायदेमंद होता है। क्योंकि फूल गोभी के पत्तों में फाइबर की भरपूर मात्रा पाई जाती है, जो पाचन क्रिया को दुरुस्त बनाता है और पाचन से जुड़ी समस्याओं को दूर करने में भी मदद करता है।

फूलगोभी के पत्तों का पोषकीय मान

पोषक तत्त्व	मात्रा
कार्बोहाइड्रेट	3.39 ग्रा.
प्रोटीन	3.90 ग्रा.
वसा	0.42 ग्रा.
फाइबर	3.43 ग्रा.
विटामिन सी	52.84 ग्रा.
कैल्शियम	96.70 मि.ग्रा.
लोहा	2.42 मि.ग्रा.
फोलेट	42.99 माइक्रो ग्रा.
बीटा–कैरोटीन	146 माइक्रो ग्रा.
संपूर्ण कैरोटीनॉयड्स	1742 माइक्रो ग्रा.

स्रोतः एनआईएन–आईएफसीटी 2017

पत्तियों का चयन सावधानी से करें

- हरी, चमकीली और कोमल किस्म की पत्तियाँ चुनें जो दाग–धब्बों से मुक्त हों।
- हल्के रंग की या सफेद पीली पत्तियाँ हरी पत्तियों जितनी स्वादिष्ट नहीं हो सकतीं।
- उपयोग करने से पहले पत्तियों को ताजे पानी से अच्छी तरह धो लें।

महत्त्वपूर्ण जानकारी

लगातार सेहत के लिए जागरूक हो रहे लोगों के लिए फूलगोभी के पत्ते भी सेहत को तंदुरुस्त करने में मददगार साबित हो सकते हैं। अब लोगों की दिनचर्या में काफी बदलाव आ रहा है, लोग अपनी सेहत को लेकर जागरूक हो रहे हैं। लोग हर्बल और घरेलू चीजों की तरफ ज्यादा जा रहे हैं। ऐसे में अगर उन चीजों का सेवन किया जाए, जो न सिर्फ सेहत के पहलू से अच्छी हों, बल्कि शरीर को कई तरह के फायदे भी उपलब्ध करवाएं तो वो दोहरा फायदा देगा। फूलगोभी के पत्ते कुरकुरे और हल्के स्वाद वाले होते हैं। इसलिए, इन्हें कई व्यंजनों में आसानी से शामिल किया जा सकता है। इसका सेवन कच्चा और पकाकर किया जा सकता है क्योंकि पकाने पर इन पत्तियों में मौजूद कैल्शियम और आयरन की मात्रा नष्ट नहीं होती है। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना के खाद्य एवं पोषण विभाग के विशेषज्ञों के अनुसार फूलगोभी के पत्तों को आमतौर पर बेकार समझ कर फेंक दिया जाता है, लेकिन अगर इन पत्तों को धूप में सुखाकर इनका पाउडर बनाकर खाने की चीजों में इस्तेमाल किया जाए तो इससे स्वाद भी बढ़ेगा और सेहत को भी फायदा मिलेगा। उन्होंने बताया कि फूलगोभी के पत्तों से खून बढ़ने की परियोजना पर भी उन्होंने काम किया था। इसमें पाया गया है कि इससे बनी चीजें खाने से बच्चों में खून का स्तर बढ़ा। इसे नमकीन के साथ–साथ मीठी चीजों में भी इस्तेमाल कर सकते हैं। पत्तों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर धूप में अच्छी तरह से सुखा लें और इसका पाउडर बनाकर तैयार कर लें। सर्दियों के मौसम में गोभी आसानी से उपलब्ध होती है। ऐसे में घर में गोभी लाकर इसके पत्तों को फेंके नहीं, उन्हें धोकर सुखा लें। इस पाउडर को लंबे समय तक *एयरटाइट कंटेनर* में भी रखा जा सकता है। बस इसे नमी से बचाकर रखना चाहिए, ताकि खराब न हो। इस पाउडर को सिर्फ नमकीन ही नहीं मीठी चीजों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है। मुरमुरे में गुड़ और गोभी के पत्ते का पाउडर मिला कर लड्डू की तरह भी खा सकते हैं। इससे खाने की चीज के स्वाद में कोई बदलाव नहीं आता, लेकिन उसके फायदे बढ़ जाते हैं।

आमोद–प्रमोद प्रभाग

आज के समाज का सच

आर.एस. चौरसिया
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

बिक रहा है पानी, पवन बिक न जाए,
बिक रही है धरती, गगन बिक न जाए।

चाँद पर भी बिकने लगी है जमीं,
डर है कि सूरज की तपन बिक न जाए।

हर जगह बिकने लगी है स्वार्थ नीति,
डर है कि कहीं धर्म बिक न जाए।

हर काम की रिश्वत ले रहे अब ये नेता,
कहीं इन्हीं के हाथों वतन बिक न जाए।

देकर दहेज खरीदा गया है अब दूल्हे को,
कहीं उसी के हाथों दुल्हन बिक न जाए।

सरे आम बिकने लगे अब तो सांसद,
डर है कि कहीं संसद भवन बिक न जाए।

आदमी मरा तो भी आँखें खुली हुई हैं,
डरता है मुर्दा, कहीं कफन बिक न जाए।

आमोद प्रमोद प्रभाग

कैसे जाने अपने कौन ?

ब्रह्म प्रकाश
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

अपने वे नहीं जो तस्वीरों में आपके संग नजर हैं आते।
अपने वे जिनको हर पल, हर तकलीफ में पास हैं पाते।।

अपने वे नहीं, जो कोई बुरी खबर सुन दौड़े हैं चले आते।
अपने वे जो हर दुख–दर्द में चुपचाप आपके काम हैं आते।।

अपने वे नहीं, जो नाम के रिश्तों की डोर में सदा बंधे रहते।
अपने वे जो साँसों व दिल से जुड़े, हर हाल में हैं साथ होते।।

अपने वे नहीं, जो परेशानी सुनकर सहानुभूति हैं जताते।
अपने वे जो बिना कहे, हर दर्द में भागीदार हैं बन जाते।।

अपने वे नहीं, जो अहसानकर आपको उसका मोल बताते।
अपने वे जो हर सहायता कर, चुपचाप स्वयं आगे बढ़ जाते।।

अपने वे नहीं, जो आपके लिए राहों में हैं बस कांटे बोते।
अपने वे जो खुद जख्मी होकर भी, आपको पुष्प हैं देते।।

अपने वे नहीं जो मुश्किल वक्त में फोन करने को कहते।
अपने वे जो हर मुसीबत में साये की तरह सदा संग रहते।।

अपने वे नहीं जो वक्त बेवक्त सदा आपकी याद में रहते।
अपने वे जो दूर रहकर भी हर लम्हा पास ही नजर आते।।

अपने वे नहीं जो अपनी परेशानियों में आपको भूल जाएँ।
अपने वे जो हर मुश्किल घड़ी में आपके लिए दौड़े चले आएँ।।

अपने वे नहीं जो दुनिया के आगे अपनेपन का दिखावा करें।
अपने वे जो बिना एक शब्द बोले भी अपनापन हैं जता जाते।।

अपने वे नहीं जो आपकी परेशानी देख बस सांत्वना दें।
अपने वे जो आपकी हालत देख खुद तकलीफ सह लें।।

अपने वे नहीं जो झूठी कसमों से रिश्ता मजबूत करें।
अपने वे जो बिना कहे ही विश्वास का रिश्ता जोड़ लें।।

अपने वे नहीं जो आपके हर दुख का बस कारण ढूंढते फिरें।
अपने वे जो आपके दर्द को अपना समझ खुद उसमें डूबें।।

अपने वे नहीं जो नाम के केवल रिश्ते निभाने आते हैं।
अपने वे जो बिना कहे, बिना मांगे हर दर्द बाँट जाते हैं।।

अपने वे जो बिना शर्त, बिना स्वार्थ हर रिश्ता निभाते।
अपने वे जो हर हाल में सदा आपके ही हैं कहलाते।।

वाक्यांश और अभिव्यक्तियाँ

A	
Arrangements are being made to ensure timely submission of report	रिपोर्ट समय पर प्रस्तुत करने की व्यवस्था की जा रहीं है
Arrear claim	बकायों का दावा
Arrear report has not been received	बकाया काम की रिपोर्ट अभी मिली नहीं है
As above	जैसा ऊपर दिया है
As against	के मुकाबले
As a last resort	अंतिम उपाय के रूप में
As already pointed out	जैसा कि पहले बताया जा चुका है
As a matter of fact	यथार्थः, वस्तुतः
As a matter of right	अधिकार के रूप में, साधिकार
As a amended	यथा संशोधित
As and when	जब कभी
As an exceptional case	अपवाद के रूप में
As a result of	के फलस्वरूप
As a rule	नियमतः
As before	पूर्ववत्, यथापूर्व
As compared with	की तुलना में
as decided	यथा निर्णीत, निर्णय के अनुसार
As desired in your letter quoted above	जैसा उपर्युक्त पत्र में कहा गया है
B	
Brought forward (b/f)	अग्रानीत
Brought over	आगे ले जाया गया
Budget provision exists	बजट में व्यवस्था है
By all means	निस्संदेह, अवश्यमेव
By and by	धीरे–धीरे
By any means	किसी भी प्रकार से
By authority of	के प्राधिकार से
By beat of drum	डुग्गी पिटवाकर, डोंडी पिटवाकर
C	
Capitalised value of pension	पेंशन का पूंजीकृत मूल्य
Carried down	अधोनीत, तलशेष
Carried forward	अग्रेनीत
Carry out	पालन करना
Carry over	अग्रनयन
Case has been closed	मामला समाप्त कर दिया गया है
Case is resubmitted as directed on prepage	पूर्व पृष्ठ पर निर्देशानुसार मामला पुनः प्रस्तुत है
Cases for disposal	निपटान के लिए मामले
Cases under investigation	मामले की जाँच – पड़ताल की जा रही है
Cash and carry	नकद दो– माल लो
Ceased to payable	देयता की समाप्ति
Certain cases	कुछ दशाओं में, कुछ मामलों में
Certificate by the competent authority is required	सक्षम प्राधिकारी का प्रमाण–पत्र अपेक्षित है
Charged expenditure	कोर्ट के आदेश का खर्च, प्रभारित खर्च
Charge handed over	कार्यभार सौंप दिया
Checked and found correct	जाँच की और सही पाया
D	
Devices for payment of pension	पेंशन भुगतान की युक्ति
Devices for sanction of pension devoid of	पेंशन संस्वीकृति की युक्ति से रहित, के बिना
Discharge certificate	सेवामुक्ति प्रमाणपत्र
Discharged form service	सेवा से मुक्ति
Discrepancy may be reconciled	विसंगति का समाधान कर लिया जाए
Discretionary power	विवेकाधिकार
E	
Effective steps should be taken to clear the arrears	बकाया काम के निबटाने के लिए कारगर उपाय किए जाएँ
Eligible candidate	पात्र उम्मीदवार
Eligible members of family	परिवार के पात्र सदस्य
Employee requests that	कर्मचारी ने अनुरोध किया है कि
Empowered to sanction	मंजूरी देने का अधिकार है
Entry in leave account/ service record for initials please	छुट्टी खाते/सेवा अभिलेख में की गई प्रविष्टि आद्याक्षर के लिए प्रस्तुत है
Erroneous grant of pension	पेंशन की गलत स्वीकृति
Errors and omissions	भूलचूक
Errors in verification	सत्यापन में त्रुटियां
F	
Full autonomy	पूर्ण स्वायत्तता
Fully paid up	पूर्ण भुगतान कर दिया है
Funds are available with in sanctioned budget	मंजूर बजट में निधि उपलब्ध है
Funds not available	निधि उपलब्ध नहीं है
Furnishing of documents	दस्तावेज पेश करना
further communication will follow	आगे फिर लिखा जाएगा

H	
Housing allowance	निःशुल्क आवास के बदले आवास
I	
In consultation of	1. को ध्यान में रखते हुए 2. के प्रतिफल स्वरूप
In consultation of	से परामर्श करके
In continuation of	के आगे, के सिलसिले में, के क्रम में
In continuation of this office letter no	इस कार्यालय के पत्र संख्या.... के क्रम में
In contravention of	का उल्लंघन करते हुए
In course of	के दौरान
In course of business	काम के दौरान
In course of checking	जाँच के दौरान
J	
Just below	ठीक नीचे
K	
Knowingly and unlawfully	जानबूझ कर और अवैध रूप से
L	
Liable to disciplinary action	अनुशासनिक कार्रवाई की जा सकती है
Liable to termination on one week's notice	एक सप्ताह के मोटिस पर समाप्त किया जा सकता है
M	
Medical attendance rules	चिकित्सा परिचर्या नियम
Medical certificate of fitness	स्वस्थता प्रमाणपत्र
Medical certificate of sickness	बीमारी का प्रमाणपत्र
Memo of demands	मांग–ज्ञापन
Memorandum of association	संस्था की बहिर्नियमावली, संगम ज्ञापन (विधि)
N	
Non- admissibility of pension	पेंशन की अस्वीकार्यता
Non- availability certificate	अनुपलब्धता प्रमाणपत्र
Non- bailable offence	गैर–जमानती अपराध
Non- bailable warrant	गैर–जमानती वारंट
O	
Owing to	के कारण
P	
Placed at the disposal of	को सौंपा गया, को सुलभ किया गया
Placed under suspension	निलंबित
Please acknowledge receipt	कृपया पावती भेजें, कृपया प्राप्ति–सूचना दें
Please comply before due date	कृपया नियत समय से पहले इसका पालन किया जाए
Q	
Question does not arise	प्रश्न नहीं उठता
Question of propriety	औचित्य का प्रश्न
R	
Respectfully I beg to say	सादर निवेदन है
Resubmitted as desired	यथापेक्षा पुनः प्रस्तुत है
Retrospective effect cannot be given to this order	इस आदेश को पूर्वप्रभावी नहीं किया जा सकता है
S	
Shri .... is offered a post of....	श्री– –को – – पर की नियुक्ति का प्रस्ताव भेजा जाता है
Side by side	साथ– साथ
Signed, sealed and delivered	हस्ताक्षरित, मोहरबंद और सुपुर्द किया गया
T	
This is in accordance with the extant rules	यह वर्तमान नियमों के अनुसार है
This is not admissible under the rules	यह नियमों के अधीन स्वीकार्य नहीं है
This is to certify	प्रमाणित किया जाता है
U	
Up-to-date	अद्यतन, आज तक का स्तरीय
W	
With reference to his application dated..... Shri.... is offered a post	श्री– के तारीख– के आवेदन पत्र के संदर्भ में उन्हें– पद की नियुक्ति का प्रस्ताव भेजा जाता है
Y	
You are hereby authorized to	आपको इसके द्वारा यह प्राधिकार दिया जाता है
You are hereby informed that	आपको इसके द्वारा सूचित किया जाता है कि

संकलनः
अभिषेक कुमार सिंह
एवं ब्रह्म प्रकाश

नराकास प्रभाग

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3) की बैठक का आयोजन

संस्थान में दिनांक 28 नवंबर, 2024 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ की वर्ष 2024–25 की द्वितिय अर्द्धवार्षिक बैठक का आयोजन किया गया। वर्तमान में लखनऊ स्थित 76 केंद्रीय सरकार के कार्यालयों द्वारा राजाभाषा के कार्यों के मूल्यांकन की जिम्मेदारी भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के पास है। बैठक की अध्यक्षता डॉ. दिनेश सिंह, परियोजना समन्वयक, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान एवं पदेन अध्यक्ष, नराकास (कार्यालय–3) लखनऊ द्वारा की गई। इस बैठक में डॉ. के. के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक ने छमाही प्रगति पर विस्तारपूर्वक चर्चा की तथा अप्रैल–सितंबर, 2024 छमाही के दौरान विभिन्न कार्यालयों द्वारा उत्कृष्ट कार्यों को रेखांकित करते हुए पुरस्कृत कार्यालयों के बारे में जानकारी दी। बैठक का संचालन श्री अभिषेक कुमार सिंह, राजभाषा अधिकारी, भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने किया। साथ ही कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत दस कार्यालयों एवं पत्रिका हेतु तीन कार्यालयों को पुरस्कृत किया गया।

कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

क्र.सं.	सदस्य कार्यालयों के नाम	स्थान
1.	सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	प्रथम
2.	क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, लखनऊ	द्वितीय
3.	अनुसंधान अभिकल्प और मानक संगठन, लखनऊ	द्वितीय
4.	मण्डल रेल प्रबन्धक, उत्तर रेलवे, लखनऊ	तृतीय
5.	मण्डल रेल प्रबन्धक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	तृतीय
6.	पुलिस उप महानिरीक्षक ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु.बल, बिजनौर, लखनऊ	तृतीय
7.	भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	चतुर्थ
8.	जगजीवन राम रेलवे सुरक्षा बल अकादमी, लखनऊ	पंचम
9.	पीएम श्री केन्द्रीय विद्यालय, आर.डी.एस.ओ. मानक नगर, लखनऊ	षष्ठ
10.	कार्यालय रक्षा लेखा प्रधान नियंत्रक (सेना), लखनऊ	सप्तम

राजभाषा पत्रिका हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

क्र.सं.	सदस्य कार्यालयों के नाम	स्थान
1.	पुराविज्ञान स्मारिका – बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान, लखनऊ	प्रथम
2.	औस विज्ञान – वै.औ.अ.प.–केन्द्रीय औषधीय एवं संगंध पौधा संस्थान, लखनऊ	द्वितीय
3.	मत्स्य लोक – भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	तृतीय

समाचार प्रभाग

हिंदी पखवाड़े में 81 विजेता सम्मानित

गन्ना संस्थान में राजभाषा हिंदी पखवाड़े का भव्य समापन

आलमबाग-लखनऊ (एसएनबी)। रायबरेली रोड स्थित गन्ना अनुसंधान संस्थान में 14 से 30 सितंबर के मध्य चलने वाले हिंदी पखवाड़े का सोमवार समापन हो गया। हिंदी पखवाड़े के

दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजयी प्रतिभागियों को सोमवार संस्थान के प्रेक्षागृह में आयोजित एक समारोह में पुरस्कृत किया गया। पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता लखनऊ विश्वविद्यालय हिंदी विभाग के विभागाध्यक्ष डॉ. एसपी दीक्षित ने किया।

इस मौके पर उन्होंने राजभाषा हिंदी के विश्व मंच पर प्रभाव छोड़ने और वैश्विक स्तर पर हिंदी की बुलंदियों का जिक्र करते हुए राजभाषा हिंदी के भविष्य पर व्याख्यान देते ... में हुए सुझावों पर भी चर्चा की। इस मौके पर गन्ना संस्थान के निदेशक डॉ. आर विश्वनाथन ने संस्थान द्वारा हिंदी में किए जा रहे कार्यों की सराहना करते हुए राज भाषा हिंदी चर्चा की। समारोह का संचालन कर रहे राजभाषा हिंदी अधिकारी अभिषेक कुमार सिंह ने बताया कि हिंदी पखवाड़े में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में लगभग 170 कर्मियों ने भाग लिया जिनमे 81 कार्मिकों को विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, त्रितीय व संतावना पुरस्कार के रूप में संस्थान के निदेशक डॉ? आर विश्वनाथन ने प्रमाण पत्र और परितोषिक राशि प्रदान कर सम्मानित किया।

इस अवसर पर राजभाषा प्रभारी व प्रधान वैज्ञानिक डॉ. मनोज कुमार त्रिपाठी ने हिंदी पखवाड़ा के अंतर्गत आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों, प्रतियोगिताओं व संस्थान द्वारा राजभाषा के क्षेत्र में किए जा रहे कार्यों और उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। आयोजन के अंत में समापन अवसर पर कार्यक्रम का संचालन कर रहे राजभाषा हिंदी अधिकारी अभिषेक कुमार सिंह ने सभी अतिथियों, आगंतुकों, अधिकारियों व कर्मचारियों का आभार व्यक्त करते हुए ...

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में हिन्दी पखवाड़े का आयोजन संपन्न

लखनऊ। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में हिंदी पखवाड़े का आयोजन धूमधाम से किया गया। सोमवार को हिंदी पखवाड़ा में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजयी प्रतिभागियों को संस्थान के प्रेक्षागृह में आयोजित समारोह में पुरस्कृत किया गया। पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता डा० एसपी दीक्षित पूर्व विभागाध्यक्ष हिंदी विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय के द्वारा किया किया।उन्होने बताया कि राजभाषा हिंदी किस तरह विश्व मंच पर अपना प्रभाव छोड़ रही है साथ ही पूरे विश्व में हिंदी धीरे धीरे अपनी बुलंदियों को छु रही है। उन्होने राजभाषा के भविष्य पर अपना व्याख्यान दिया साथ ही फ़िजी में आयोजित बारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन में हुए सुझावों पर चर्चा की। संस्थान के डॉ. आर विश्वनाथन निदेशक ने संस्थान के द्वारा हिंदी में किए जा रहे कार्यों की चर्चा की। पुरस्कार वितरण समारोह में संस्थान के 81 कार्मिकों को विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार के लिए प्रमाण पत्र एवं परितोषिक राशि संस्थान के निदेशक ने प्रदान किया।

'जलवायु अनुकूल कृषि को प्रोत्साहन दे रही सरकार'

आइसीएआर की **क्षेत्रीय समिति** की बैठक

जागरण संवाददाता • लखनऊ: भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में गुरुवार को आयोजित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आइसीएआर) की क्षेत्रीय समिति-चार की 27वीं बैठक में मुख्य अतिथि प्रदेश के कृषि, अनुसंधान एवं शिक्षा मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने कहा कि हमारे सामने बाढ़, सूखा और कीट-रोग जैसी अनेक चुनौतियां हैं, जिन्हें कम करने के लिए विभिन्न स्तरों पर प्रयास किए जा रहे हैं। कृषि मंत्री ने कहा कि शोध निष्कर्षों का प्रभाव किसानों के खेतों में दिखाई देना चाहिए।

प्रदेश सरकार का लक्ष्य टिकाऊ, जलवायु-अनुकूल कृषि को प्रोत्साहन देना है, जिसमें प्रौद्योगिकी, बुनियादी ढांचे और नीतिगत सुधारों में रणनीतिक निवेश शामिल है। इन सभी प्रयासों ने एक मजबूत कृषि क्षेत्र की नींव प्रदान की है जो प्रदेश की निर्धारित एक ट्रिलियन अर्थव्यवस्था में सहयोग कर सके। भविष्य में गुणवत्ता युक्त बीज उत्पादन के लिए लखनऊ के आस पास सीड पार्क खोला जाएगा। बैठक में मुख्यमंत्री के आर्थिक सलाहकार डा. केवी राजू ने कृषि में विकास के लिए सरकार द्वारा किए गए कार्यों को विस्तृत प्रेजेंटेशन के माध्यम से बताने का प्रयास किया। बागवानी विशेषज्ञ डा. एसके सिंह और डा. पीएस मिश्रा ने विभिन्न राज्यों में किए जा रहे कार्यों की जानकारी दी। बैठक में मुख्यमंत्री के सलाहकार अवनीश अवस्थी समेत कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञ, कृषि वैज्ञानिक व शोधार्थी इस बैठक में शामिल हुए।

दीप जलाकर बैठक का शुभारंभ करते कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही • आइसीएआर

विश्व मंच पर प्रभाव छोड़ रही राजभाषा हिंदी

जासं • लखनऊ: रायबरेली रोड के भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में सोमवार को पुरस्कार वितरण के साथ ही हिंदी पखवाड़े का समापन हुआ। समारोह के अध्यक्ष लखनऊ विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो.सूर्य प्रसाद दीक्षित ने कहा कि राजभाषा हिंदी विश्व मंच पर अपना प्रभाव छोड़ रही है और वह विश्व में धीरे-धीरे अपनी बुलंदियों पर पहुंच रही है।

उन्होंने फिजी में आयोजित 12वें विश्व हिंदी सम्मेलन में हुए सुझावों पर विस्तार से चर्चा की। अध्यक्ष ने संस्थान के निदेशक डा. आर. विश्वनाथन की मौजूदगी में संस्थान के 81 कार्मिकों को विभिन्न प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार प्रदान किए। प्रवक्ता अभिषेक सिंह ने बताया कि आयोजन में राजभाषा प्रभारी एवं प्रधान वैज्ञानिक डा. मनोज कुमार त्रिपाठी, डा. दिनेश सिंह, डा. मनोज कुमार श्रीवास्तव, डा. संजीव कुमार समेत वैज्ञानिक और प्रतियोगी ...

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान मे हिंदी पखवारे के समापन की अध्यक्षता कर रहे प्रो .सूर्य प्रसाद दीक्षित को सम्मानित करते संस्थान के निदेशक डा. आर विश्वनाथन • जागरण

'हिंदी सिर्फ भाषा नहीं, राष्ट्र को जोड़ने का सूत्र भी'

जासं • लखनऊ : अंग्रेजी एवं विदेशी भाषा विश्वविद्यालय क्षेत्रीय प्रसार लखनऊ में सोमवार को हिंदी पखवाड़े के अंतर्गत हिंदी महोत्सव का आयोजन किया गया। इसमें छात्रों ने एकांकी नाटक रीढ़ की हड्डी सहित कई सांस्कृतिक प्रदर्शन किए।

क्षेत्रीय परिसर के निदेशक प्रोफेसर रजनीश अरोड़ा ने कहा कि हिंदी केवल भाषा नहीं, वह सूत्र है जो हमारे विविध ... माध्यम से हम न केवल इतिहास व संस्कृति से जुड़ते हैं, बल्कि भारत की आत्मा से भी जुड़ते हैं। उन्होंने कहा कि हम अपनी भाषाई धरोहर पर गर्व करें और इसे भविष्य की पीढ़ियों के लिए संरक्षित करने व बढ़ाने का संकल्प लें। इस अवसर पर प्रतियोगिताओं के विजेताओं के नाम की घोषणा की गई। कार्यक्रम में डा.पुष्प रंजन, डा. मनीष कुमार गर्व, डा. रेणुका देवी सहित कई ...

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में हिंदी पखवाडा का समापन

लखनऊ पथ संवाददाता

लखनऊ। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में हिंदी पखवाड़ा का आयोजन 14 सितंबर से 30 सितंबर, 2024) का आयोजन किया गया। हिंदी पखवाड़ा में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजयी प्रतिभागियों को सोमवार को संस्थान के प्रेक्षागृह में आयोजित समारोह में पुरस्कृत किया गया।

पुरस्कार वितरण समारोह की अध्यक्षता डॉ एस पी दीक्षित, पूर्व विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविध्यालय ने किया, उन्होने राजभाषा हिंदी किस तरह विश्व मंच पर अपना प्रभाव छोड रही है। साथ ही पूरे विश्व में हिंदी धीरे धीरे अपनी बुलंदियों को छू रही है। उन्होंने राजभाषा के भविष्य पर अपना व्याख्यान दिया, साथ ही फिजी मे आयोजित बारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन में हुए सुझावों पर चर्चा की।

संस्थान के निदेशक डॉ. आर. विश्वनाथन ने संस्थान के द्वारा हिंदी में किए जा रहे कार्यों की चर्चा की। पुरस्कार वितरण समारोह में संस्थान के 81 कार्मिको को विभिन्न प्रतियोगिताओ मे प्रथम, धद्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार के लिए प्रमाण पत्र एवं परितोषिक राशि संस्थान के निदेशक महोदय ने प्रदान किया। इस अवसर पर राजभाषा प्रभारी एवं प्रधान वैज्ञानिक डॉ. मनोज कुमार त्रिपाठी ने पखवाड़ा के अंतर्गत आयोजित विभिन्न

कार्यक्रमों तथा प्रतियोगिताओं एवं संस्थान द्वारा राजभाषा के क्षेत्र मे किए जा रहे कार्यों एवं उपलब्धियो पर प्रकाश डाला। साथ ही इस पखवाडा समापन समारोह में डॉ. दिनेश सिंह, परियोजना समन्वयक, डॉ. मनोज कुमार श्रीवास्तव, डॉ. संजीव कुमार, डॉ. दिनेश सिंह, डॉ.ए.के. सिंह विभागाध्यक्ष एवं श्री अभिषेक श्रीवास्तव, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी ने अपने विचार रखे। संस्थान के आयोजित प्रतियोगिताओ जैसे यूनिकोड मे हिंदी टंकण, निबंध प्रतियोगिता, अंत्याक्षरी प्रतियोगिता, हिंदी के सामान्य ज्ञान पर आधारित प्रश्नोत्तरी, हिंदी मे स्वरचित कविता पाठ, भाषण प्रतियोगिता, टिप्पणी एवं परिपत्र, वर्ष भर मे किए गए हिंदी कार्य की समीक्षा एवं पूरे वर्ष के दौरान हिंदी मे उत्कृष्ट कार्य करने के लिए विभागों एवं कृषि विज्ञान केंद्र एवं हिंदी कार्यशाला इत्यादि मे संस्थान के लगभग 150–170 कर्मिकों ने भाग लिया। पखवाड़ा के दौरान दिनांक 26.09.2024 को राजभाषा हिंदी के 75 वर्ष विषय पर प्रो. पवन अग्रवाल, लखनऊ विश्वविध्यालय, लखनऊ द्वारा एक व्याख्यान दिया गया।

समापन समारोह का संचालन हिंदी अधिकारी अभिषेक कुमार सिंह ने किया।

उच्च उत्पादकता वाली प्रजातियों को विकसित करें वैज्ञानिक : कृषि मंत्री

लखनऊ। गुरुवार को भारतीय गन्ना शोध संस्थान लखनऊ में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की क्षेत्रीय (उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड) समिति चतुर्थ की 27 वीं बैठक आयोजित की गई। प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए कृषि मंत्री ने कहा कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा विगत वर्षों में कृषि क्षेत्र में अनुसंधान तथा प्रौद्योगिकी विकास के लिए तथा विभिन्न प्रकार के खाद्यान्नों को देशवासियों तक पहुंचाने में सफलता प्राप्त की है। इसके लिए हम अनुसंधान परिषद के सभी वैज्ञानिकों को बधाई देते हैं। इन्हीं के प्रयासों से हमारा देश पशुपालन और उद्यानिकी तथा कृषि क्षेत्र में निरंतर आगे बढ़ रहा है। उन्होंने प्रतिभागी वैज्ञानिकों से अपेक्षा की कि वह उच्च उत्पादन वाली प्रजातियों को विकसित करने की दिशा में कार्य करें।

हिंदी पखवाड़ा के समापन पर हुईं प्रतियोगिताएं

लखनऊ। भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में आयोजित हिंदी पखवाड़ा के समापन पर सोमवार को प्रतियोगिताएं आयोजित कर विजेताओं को सम्मानित किया गया। एलयू के हिंदी के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. एसपी दीक्षित ने कहा कि हिंदी विश्व मंच पर प्रभाव छोड़ रही है। निदेशक डॉ. आर. विश्वनाथन ने संस्थान की ओर से हिंदी में किए जा रहे कार्यों की चर्चा की। यहां संस्थान के 81 कार्मिकों को पुरस्कृत किया गया। इस मौके पर प्रधान वैज्ञानिक डॉ. मनोज कुमार त्रिपाठी,डॉ. दिनेश सिंह, डॉ. मनोज कुमार श्रीवास्तव, डॉ. संजीव कुमार आदि ने बात रखी। (संवाद)

हिंदी के प्रयोग में सीएसआइआर को पहला स्थान

जासं • लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन समिति की गुरुवार को हुई बैठक में 74 कार्यालयों के प्रमुखों ने हिंदी में कार्य करने का आह्वान किया। अभिषेक कुमार के संचालन में आयोजित बैठक में विशिष्ट अतिथि ...बाद के राजभाषा विभाग के अजय कुमार चौधरी ने कहा कि अभी जो कार्यालय अपना शत प्रतिशत कार्य हिंदी में नहीं कर रहे हैं वह इस पर ध्यान दें। संस्थान के निदेशक डा. आर विश्वनाथन की अध्यक्षता में हुई बैठक में प्रधान वैज्ञानिक डा. केके ... ने समीक्षा रिपोर्ट प्रस्तुत की। समीक्षा के आधार पर सात कार्यालयों को भी पुरस्कृत किया गया।

इनको भी मिला पुरस्कार : राजभाषा पत्रिका की समीक्षा में बीरबल साहनी पुराविज्ञान संस्थान को पहला, केंद्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान को दूसरा और राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो को तीसरा स्थान मिला।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में पुरस्कृत लोगों के साथ विशिष्ट अतिथि अजय कुमार चौधरी व संस्थान के निदेशक डा. आर विश्वनाथन, अभिषेक कुमार • जागरण

- सीएसआइआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान–पहला
- क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय और अनुसंधान अभिकल्प और मानक संगठन–दूसरा
- मंडल रेल प्रबंधक, उत्तर रेलवे, मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे और पुलिस उप महानिरीक्षक ग्रुप केंद्र, केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल को–तीसरा
- भाकृअनुप– राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो–चौथा
- बाबू जगजीवन राम रेलवे सुरक्षा बल अकादमी–पांचवां
- पीएम श्री केंद्रीय विद्यालय, आरडीएसओ मानक नगर–छठा
- कार्यालय रक्षा लेखा प्रधान नियंत्रक (सेना)–सातवां।

गुणवत्तायुक्त बीज के लिए खुलेंगे सीड पार्क: कृषि मंत्री

कृषि अनुसंधान परिषद की 27वीं बैठक गुरुवार को गन्ना अनुसंधान केंद्र में शुरू हुई।

लखनऊ, संवाददाता। गुणवत्ता युक्त बीज उत्पादन के लिए लखनऊ के आसपास सीड पार्क खोला जाएगा। रायबरेली रोड स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर) में गुरुवार को आयोजित भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) की क्षेत्रीय समिति चार की 27वीं बैठक में प्रदेश के कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने यह जानकारी दी। उन्होंने कहा कि जब तक कृषि गतिविधियों को वाणिज्यिक उपक्रमों के रूप में नहीं अपनाया जाएगा, तब तक लाभकारी प्रतिफल प्राप्त करना मुश्किल होगा।

मुख्यमंत्री के आर्थिक सलाहकार डॉ. केवी राजू ने कृषि विकास के लिए उठाए गए कदमों और उनसे हो रहे लाभ से प्रदेश की एक ट्रिलियन अर्थव्यवस्था बनाने में मिल रहे सहयोग के बारे में विस्तृत प्रेजेंटेशन दिया। वहीं मुख्यमंत्री के सलाहकार डॉ अवनीश अवस्थी ने प्रदेश की अर्थव्यवस्था को एक ट्रिलियन बनाने के लिए कृषि विज्ञान केन्द्रों की तरफ ध्यान आकर्षित कराया। आईसीएआर के महानिदेशक डॉ. हिमांशु पाठक ने कहा कि आईसीएआर उच्च उत्पादकता वाली किस्मों पर ध्यान केंद्रित कर रहा है।

ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे का हुआ विकास

कार्यक्रम में वर्चुअली शामिल हुए बिहार के कृषि मंत्री मंगल पांडेय ने कहा कि प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि और प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना ने किसानों को प्रत्यक्ष वित्तीय सहायता और व्यापक फसल बीमा प्रदान कर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कृषि क्षेत्र में की गई इस पहल ने ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे के विकास को बढ़ावा दिया है।

बीजों के लिए खोला जाएगा सीड पार्क

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) की क्षेत्रीय समिति-4 की 27वीं बैठक

आईसीएआर की क्षेत्रीय समिति -4 की 27वीं बैठक सम्पन्न

अधिक उपज वाली किस्मों पर जोर कृषि मंत्री

15/11/2024

लखनऊ। कृषि मंत्री सूर्य प्रताप शाही ने कृषि वैज्ञानिकों का आह्वान किया है कि वे उच्च उत्पादकता एवं मौसम अवरोधी किस्में विकसित करने पर ध्यान केन्द्रित करें। शाही गुरुवार को लखनऊ स्थित भारतीय गन्ना शोध संस्थान में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की क्षेत्रीय (उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड) समिति की 27 वीं बैठक में बोल रहे थे। बैठक में बिहार के कृषि मंत्री मंगल पांडे (वर्चुअल) रूप से जुड़े जबकि उत्तर प्रदेश गौ-सेवा आयोग के अध्यक्ष श्याम बिहारी गुप्ता, मुख्यमंत्री के सलाहकार अवनीश अवस्थी, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के महानिदेशक हिमांशु पाठक, राज्य सरकार के वित्तीय सलाहकार के.वी. राजू व शीर्ष वैज्ञानिक व अधिकारी मौजूद रहे।

'शोध निष्कर्षों का असर खेती में दिखे'

नराकास बैठक : 28 नवम्बर, 2024

हिंदी कार्यशाला : 26 सितम्बर, 2024

हिंदी कार्यशाला : 30 दिसम्बर, 2024

हिंदी पखवाड़ा : 14–30 सितम्बर, 2024

हिंदी पखवाड़ा : 14–30 सितम्बर, 2024

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ने के उत्पादन एवं सुरक्षा तकनीकों के सभी पहलुओं पर मूलभूत एवं अनुप्रयुक्त शोध करना तथा उपोष्ण क्षेत्रों हेतु नवीन प्रजातियों के प्रजनन का कार्य करना
- गन्ने की उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास हेतु राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर समन्वित शोध एवं निगरानी करना
- उन्नत तकनीकी का प्रसार एवं प्रशिक्षण।

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333